प्रकाशक
सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर (राजस्थान)

प्रथम संस्करण
सन् १९६० ई
मूल्य रु० ४-२५

मुद्रक
अजन्ता प्रिंटर्स,
जयपुर

अनुक्रमणिका

१ प्रकाशकीय — पृ १ से ८
२. भूमिका — पृ १ से ३७
३ मूल पाठ तथा भावार्थ — पृ १ से १२८
४ शब्दार्थ और टिप्पणिया — पृ. १ से २२
५. पद्यानुक्रमणिका — पृ १ से १६
६. पार्वती मगल (राजस्थानी लोककाव्य) — पृ १ से २२

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ मे बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा सस्कृत, हिन्दी एव विशेपत राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भापा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानो एव भापाशास्त्रियो का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमे प्रारभ से ही मिलता रहा है।

सस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर मे विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तिया चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१ विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस सबध में विभिन्न स्रोतो से सस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दो का सकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लबे समय से प्रारभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश मे शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ, और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाए दी गई हैं। यह एक अत्यत विशाल योजना है, जिसकी सतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य मे इसका प्रकाशन प्रारभ करना सभव हो सकेगा।

२ विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भापा अपने विशाल शब्द भडार के साथ मुहावरो से भी समृद्ध है। अनुमानत पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग मे लाये जाते है। हमने लगभग दस हजार मुहावरो का, हिन्दी मे अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिए भी एक गौरव की बात होगी।

३ आधुनिक राजस्थानी साहित्य रचनाओं का प्रकाशन

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ कळायण, ऋतु काव्य। ले. श्री नानूराम संस्कर्ता

२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले. श्री श्रीलाल जोशी।

३ बरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले. श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कविताएं कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अंक ३-४ 'डा. लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अंक १-२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और बृहत् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्ताओं के लिये 'राजस्थान भारती' अनिवार्यतः संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा. दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५ राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थो का अनुसधान, सम्पादन एव प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियो को सुरक्षित रखने एव सवसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एव शुद्ध रूप मे मुद्रित करवा कर उचित मूल्य मे वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। सस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रयो का अनुसधान और प्रकाशन सस्या के सदस्यो की ओर से निरतर होता रहा है जिसका सक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई सस्करण प्रकाश मे लाये गये हैं और उनमे से लघुतम सस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अ श 'राजस्थान भारती' मे प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध सस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती मे प्रकाशित हुए हैं।

७ राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखा) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अ क मे प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन सस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निवध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९ मारवाड क्षेत्र के ५०० लोकगीतो का सग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एव जैसलमेर क्षेत्र के सैकडो लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरिया और लगभग ७०० लोक कथाएँ सग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाडे और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम राजस्थान-भारती' मे प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल सग्रह 'बीकानेर जैन लेख सग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप मे प्रकाशित हो चुका है।

११ जसवंत उद्योत, मुहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचंद भंडारी की ४ रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३ जैसलमेर के अप्रकाशित १ शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४ बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।

१६ बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरियो-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और प० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हूडलोद, थे ।

इस प्रकार सस्था अपने १६ वर्षो के जीवन-काल मे, सस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरतर सेवा करती रही है । आर्थिक सकट से ग्रस्त इस सस्था के लिये यह सभव नही हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लडखडा कर गिरते पडते इसके कार्यकर्ताओ ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एव प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओ के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरतर चलता रहे । यह ठीक है कि सस्था के पास अपना निजी भवन नही है, न अच्छा सदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं, परन्तु साधनो के अभाव मे भी सस्था के कार्यकर्ताओ ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश मे आने पर सस्था के गौरव को निश्चय ही बढ़ा सकने वाली होगी ।

राजस्थानी-साहित्य-भडार अत्यन्त विशाल है । अब तक इसका अत्यल्प अश ही प्रकाश मे आया है । प्राचीन भारतीय वाड्मय के अलभ्य एव अनर्घ रत्नो को प्रकाशित करके विद्वज्जनो और साहित्यिको के समक्ष प्रस्तुत करना एव उन्हे सुगमता से प्राप्त कराना सस्था का लक्ष्य रहा है । हम अपनी इस लक्ष्य पूर्त्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे हैं ।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तको के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सभव नही हो सका । हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक सशोध एव सास्कृतिक कायक्रम मत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओ के विकास की योजना के अतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद मे राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है, जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ११ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१ राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२ राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा. शिवस्वरूप शर्मा अचल
३ अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४ हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५ पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,,
६ दलपत विलास	श्री रावत सारस्वत
७ डिंगल गीत—	,,
८ पंवार वंश दर्पण—	डा. दशरथ शर्मा
९ पृथ्वीराज राठौड़ ग्रंथावली—	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१० हरिरस—	श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११ पीरदान लालस ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१२ महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३ सीताराम चौपई—	श्री अगरचन्द नाहटा
१४ जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचन्द नाहटा और डा. हरिवल्लभ भायाणी
१५ सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	प्रो. मंजुलाल मजूमदार
१६ जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७ विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि—	,, ,,
१८ कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१९ राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२० वीर रस रा दूहा—	,, ,,
२१ राजस्थान के नीति दोहा—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२ राजस्थान व्रत कथाएं—	,, ,,
२३ राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,,
२४ चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५ भड्डली—	श्री अगरचन्द नाहटा म विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रथावली	श्री अगरचन्द नाहटा
२७ राजस्थानी हस्तलिखित ग्रथो का विवरण	,, ,,
२८. दम्पति विनोद	,, ,,
२९ हीयाली-राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय	श्री भँवरलाल नाहटा
३१ दुरसा आढा ग्रथावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन सग्रह (सपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रथावली (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रथो का सपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नही हो रहा है ।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एव गुरुता को लक्ष्य मे रखते हुए अगले वर्ष इसमे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त सपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रथो का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा ।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मजूर की ।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय मोहनलालजी सुखाडिया, जो सौभाग्य से शिक्षा मन्त्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एव पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने मे पूरा-पूरा योगदान रहा है। अत. हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने मे समर्थ हो सके । सस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी ।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यंत आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व. पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान-भंडार बीकानेर, मोतीचंद खजांची ग्रन्थालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं. हरदत्तजी गोविन्द व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थों का संपादन संभव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनंक्वापि भवत्येव प्रमादतः, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुनः मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक

लालचन्द कोठारी
प्रधान-मंत्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
सं. २०१७
दिसम्बर ३, १९६०

भूमिका

'वेलि' नामकरण और साहित्य

'वेलि' साहित्य सबधी सम्पूर्ण चर्चा के मूल में राठोड़ प्रिथीराज कृत 'क्रिसन रुकमणी री वेलि' है। प्रस्तुत वेलि अपने रचनाकाल से ही कवियों और आलोचकों की प्रशसा का विषय बनी आ रही है। डा एल पी टैस्सीटोरी द्वारा इसके मूल पाठ का प्रकाशन किये जाने के बाद देशी विद्वानो का ध्यान इस ओर पुन आकर्षित हुआ, और बीकानेर के ठाकुर जगमालसिह द्वारा की गई टीका को बीकानेर के ही तीन विद्वानों—सर्व श्री सूर्यकरण पारीक, ठाकुर रामसिह तथा नरोत्तमदास स्वामी—ने सम्मिलित रूप से आधुनिक विधि से सम्पादित कर प्रकाशित करवाया। इस उत्कृष्ट ग्रथ को हिन्दी साहित्य की विभिन्न परीक्षाओ में पाठ्यग्रथ के रूप में निर्धारित कर साहित्य जगत् ने समुचित आदर भी दिया। पाठ्यग्रथ बन जाने के कारण व्यावसायिक दृष्टि से अन्य विद्वानो ने भी इसे अपने ढग से सम्पादित और प्रकाशित कर कुछ सस्करण निकाले।

धीरे-धीरे कुछ विद्वानों के मन में यह उत्कराठा हुई कि 'वेलि' नाम धारी रचनाओ की खोज की जाय और यह देखा जाय कि प्रिथीराज की 'वेलि' उस परम्परा में कहा और कैसी ठहरती है। इस प्रेरणा को लेकर अनेक प्रयत्न किये गये और 'वेलि' नामधारी रचनाओं की एक विस्तृत सूची सामने आई। एक अन्वेषक ने इसे अपने अनुसधान का विषय भी बनाया और पीएच डी की उपाधि भी प्राप्त की।

जहा तक अन्वेषकों के प्रकाशित विचारो को पढने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ है, मेरी यह धारणा बनी है कि इस विषय को आवश्यकता से अधिक तूल दिया गया है। उचित तो यह हो कि हम इस अध्ययन को

तीन मुख्य पहलुओं तक ही सीमित रखें। पहला तो यह कि 'वेलि' नाम धारी सम्पूर्ण रचनाओं को क्या एक सूची में रखना किसी भी स्थिति में उचित है ? विषय वस्तु और शैली-किसी भी दृष्टि से ये रचनायें क्या एक श्रेणी में आ सकती हैं ? विशेष तौर पर जैन और भक्ति तथा लोक शैली की 'वेलि' नाम धारी रचनायें चारणी वेलियों से क्या कुछ भी मेल खाती हैं ?

दूसरा यह कि 'वेलि' शब्द तथा इस नामकरण के प्रयोग प्राप्य अनेक चारणी व इतर रचनाओं की विषय वस्तु के अध्ययन द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि यह नामकरण 'वेलियों' छन्द के कारण है अथवा वेलि शब्द में निहित किसी विशिष्ट अर्थ के कारण अथवा दोनों के कारण है।

तीसरा और सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि साहित्य में 'वेलि' नामक रचनाओं का श्रीगणेश और कवियों में इस शैली के प्रचलन का आरम्भ कब और किस रचना से माना जाना चाहिए।

वस्तुतः इन तीनों प्रश्नों का संतोषजनक समाधान प्राप्त होने पर इस विषय पर विस्तृत अध्ययन की संभवतः कोई विशेष आवश्यकता नहीं प्रतीत होगी। आइये, हम इन प्रश्नों पर कुछ विचार करने का प्रयत्न करें।

'वेलि' नामधारी जिन रचनाओं का अभी तक पता चला है या जिनके पाये जाने की संभावना भी हो सकती है उन्हें हम निम्नलिखित शीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं। हर शीर्षक के अधीन ज्ञात वेलियों में से कुछ का नामोल्लेख भी हम करें —

चारणी 'वेलियाँ'

१ *किसन रुकमणी री वेलि—प्रिथीराज*

२ महादेव पारवती री वेलि—[illegible]

३. किसनजी री वेलि—करमसी साखला
४ गुण चाणिक वेलि—चूडो दधवाडियो
५ देईदास जैतावत री वेलि—अखो भाणोत
६ रतनसी खीवावत री वेलि—दूदो विसराल
७ उदैसिंघ री वेलि—रामो सादू
८ राजा रायसिंघ री वेलि—मालो सादू
९. राव रतन री वेलि—कल्याणदास महडू
१० सूरसिंघ री वेलि—गाडण चोलो
११. अनोपसिंघ री वेलि—गाडण वीरभाण
१२ चादाजी री वेलि—वीठू मेहो

जैन वेलिया

१. चिहुँगति वेलि—वाछा
२. जम्वू स्वामी वेलि—सीहा
३ रहनेमि वेलि— ,,
४ पचेन्द्रिय वेलि—ठकुरसी
५. गरभ वेलि—लावण्यसमय
६ क्रोध वेलि—मल्लिदास
७ सुदशनस्वामी नी वेलि—वीरचद
८ लघुवाहुवलि वेलि—शातिदास
९ जइत पद वेलि—कनकसोम
१०. ऋषभगुण वेलि—ऋषभदास
११ वारह भावना वेलि—जयसोम
१२. सुजस वेलि—कांतिविजय
१३. नेमराजुल वेलि—चतुर विजय
१४. विक्रम वेलि—मतिसुन्दर
१५ नेमिश्वर स्नेह वेलि—उत्तम विजय

हिन्दी भक्ति साहित्य की बेलियां

१ बुद्धहरण बेलि—सवाई प्रतापसिंह
२ कृष्ण गिरिपूजन बेलि—हित वृन्दावनदास
३ हित रूपचरित बेलि—
४ प्रामप्रकाश न बेलि— „
५. राधाजन्म उत्सव बेलि—
६ भक्त सुजस बेलि— „
७ करुणा बेलि—
८ हरिकला बेलि— „
९ बेलि — „

लौकिक बेलियां

१ रामदेवजी री बेल—संत हरजी भाटी
२ रूपांदे री बेल— „
३ तोळादे री बेल—
४ रूपांदे री बेल—तेजो—
५. पीर गुमानसिंहजी री बेल—

उपर्युक्त चारों प्रकार की बेलियों के निरीक्षण से पता चलता है कि सभी चारणी बेलियां 'बेलियो सांणोर' नामक विशिष्ट डिंगल गीत छंद में लिखी गई हैं जब कि जैन भक्ति और लौकिक बेलियां विभिन्न छंदों में। चारणेतर किसी भी वर्ग की सब बेलियां किसी विशेष छंद में नहीं लिखी गई हैं। इससे स्पष्ट है कि इन वर्गों की बेलियों के नामकरण का उनके छंदों से कोई संबंध नहीं है। चारणी और चारणेतर बेलियों के इस मूल अंतर को देखते हुए यह भी स्पष्ट हो जाना चाहिए कि इन सभी बेलियों को एक सूची में रखना नितांत अनुपयुक्त है। जहां चारणेतर बेलियां चारणी बेलियों से मेल नहीं खातीं वहीं वे परस्पर भी किसी प्रकार का मेल नहीं खातीं।

पर, चूंकि इन सभी रचनाओं को लेखकों ने 'वेलि' नाम से अभिहित किया है इसलिए दूसरा उपाय विषयवस्तुगत साम्य ढूंढने का ही है। यह माना हुआ सिद्धांत है कि अधिकांश भारतीय भाषाओं की रचनायें मूल रूप में संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं से प्रभावित रही हैं। संस्कृत में लता, लतिका, वल्लरी, कल्पलता, मंजरी, लहरी आदि नामों वाली रचनाओं की परम्परा रही है। यही परम्परा देशी भाषाओं में भी आई जिसके फलस्वरूप हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषाओं में भी इन नामों से रचनायें हुईं। वल्लरी, लता, लतिका, वेलि और वेल—ये सब एक ही शब्द के पर्याय समझे जाने चाहिए। ज्यों ज्यों देशी भाषाओं का प्रभाव बढ़ता गया संस्कृत शब्दों के स्थान पर देशी शब्दों का प्रयोग भी बढ़ता गया। इसलिए 'लता' और 'वल्लरी' के स्थान पर धीरे धीरे 'वेलि' और फिर 'वेल' का प्रयोग शुरू हुआ। 'वेलि', 'लता' या 'वल्लरी' नामक रचनाओं के विश्लेषण से एक तथ्य सामने आता है कि ये सभी मूल रूप में यशोगान संबंधी रचनायें हैं। आराध्यदेव, आश्रयदाता, विशिष्ट सुचरित्र व्यक्ति अथवा कल्याणकारी विषय—इनमें से चाहे किसी को भी लक्ष्य कर वेलि रचना की गई हो उसकी अन्तर्भूत मनसा उस देव, व्यक्ति अथवा विषय का यश-वर्णन करने की ही होगी। कहीं भी यह नहीं देखा गया कि किसी की निंदा अथवा कोरे तथ्यवर्णन को वेलि का विषय बनाया गया हो। इस तथ्य से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वेलि रचनायें प्रधानतः यशोगान के उद्देश्य से लिखी जाती थीं। पर, इनका नाम वेलि ही क्यों रखा गया यह भी विचारणीय है। वेल में जैसे एक बीज प्रस्फुटित होकर शतशः पल्लवित और पुष्पित होता हुआ, चारों दिशाओं में छा जाता है, उसी प्रकार कवि के आराध्य देव, मानव या विषय की कीर्ति उसके गायन से सर्वत्र व्याप्त हो जाये—यही भावना इस नामकरण के मूल में समझी जानी चाहिए। इस धारणा की दृढ़ता के लिए हम स्वयं कवियों द्वारा अपनी रचनाओं में दी गई तथा आलोचकों द्वारा की गई व्याख्याओं को उद्धृत करते हैं—

वल्ली तसु बीज भागवत वायौ महिथाणौ प्रिथुदास मुख ।
मूल ताल जड़ अरथ मंडहे, सुथिर करणि चढि छांह सुख ॥
पत्र अक्खर दल द्वाला जस परिमल नव रस तंतु विधि अहो निसि ।
मधुकर रसिक सुभगति मंजरी मुगति फूल फल भुगति मिसि ॥
—प्रिथीराज

वेद बीज, जळ ग्यान सुकवि जड़ महेस धर
पात दूहा गुण पुहप बास बोलणै जगमीवर
पसरी दीप प्रदीप, पथिक पढ़ी पाडंबर
मनसुध पै आछेत परम फळ पामै मम्मर
विसतार कीध जुग-जुग विमळ बडी किसन अहुठार बन
अमृत बेलि पीथल अचळ तैं राची कमिधाळ तन
—बेलि की प्रशंसा में कहा गया कवित्त

बासना बरन सुर बेलड़ी रोपि तू हृदय आराम है ।
सुकृत तरु सहीत बहु पसरती सफल फैलसाइ अभिराम है ॥
प्रेम सुचि करीय कयस रसई आदि मिथ्यातिक सक है ।
गुपति विहु गुपति सखी करह मीकच सुमति मोखानि है ॥
—जयसोमकृत बारह भावनावेलि

पुहुपां में परम सुवास फल में पति उमी मुख कवितरी अवीस ।
सुरतर एसड़ अवत लिग सोहै सोहै बेलि फल तै दीस ।
—अमनारायण महडू कृत राजरतन री बेलि

इन सभी व्याख्याओं में साहित्यिक 'वेलि' का रूपगत तादात्म्य लौकिक 'बेलि' से करने के प्रयासों से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि कवियों द्वारा दिया गया 'वेलि' नाम भी लौकिक जगत की बेलि से ही ग्रहण किया गया है । राजस्थानी भाषा और साहित्य में भी 'बेलि' या 'बेल' शब्द वंश-वृद्धि अथवा कीर्तिविस्तार के अर्थों में ही प्रयुक्त हुए हैं । इसलिए प्रथम रूप से यह नाम देने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि 'वेलि'

सशक्त रचनायें वनस्पति जगत् की 'वेलि' को ही लक्ष्य कर साहित्य में उसके प्रचलित सांकेतिक अर्थ से गर्भित कर अभिहित की गई हैं।

वैसे तो यह सिद्धांत सभी वर्गों की वेलियों पर सामान्य रूप से लागू होता है पर चारणी वेलियों में विशेष रूप से एक और सामान्य लक्षण पाया जाता है, और वह है उनकी समान छंद मे रचना। उस छंद का नाम भी डिंगल छंद शास्त्र के प्रणेताओं ने 'वेलियो साणोर' अथवा 'वेलियो' कह कर दिया है। इसलिए 'वेलि' और चारणी वेलि ग्रंथो में अनिवार्यत: प्रयुक्त 'वेलियो' छंद के इस अद्भुत साम्य पर भी विचार करना समीचीन होगा। 'रघुवर जसप्रकास' नामक छंद ग्रंथ के रचयिता आढा किसनाजी ने 'वेलियो साणोर' गीत का लक्षण इस प्रकार बतलाया है—

"जिण गीत रै पैहली तुक मात्रा १८ होय, दूजी तुक मात्रा १५ होय, तीजी तुक मात्रा १६ होय, चौथी तुक मात्रा १५ होय। दूजा सारां दूहां मात्रा १६, १५, १६, १५, तुक कै अंत आद गुरु अंत लघु आवै, जिण गीत रो नाम वेलियो साणोर कहीजै।"

इस कसौटी पर चारणी वेलियों के प्राय: सभी छंद सही उतरते हैं। पर, साथ ही सभी वेलियो में अनेक छंद खुडद साणोर (हंसगत) एवं साणोर के ही अन्य उपछंदो के भी आगये हैं।

रचनाकारो ने शब्दो को बोलते समय जो ह्रस्व-दीर्घ मात्राओं के रूप दिये होंगे उन्हें उन्ही रूपों में लिपिबद्ध न किया जाने के कारण भी अनेक छंद वेलियो गीत की कसौटी पर ठीक नहीं उतरते। इसका न तो यह आशय समझा जाना चाहिए कि कवियो ने जान बूझ कर वेलियो छंद को छोड दिया है और न यह ही कि सिद्धहस्त कवियो ने छंद रचना मे कोई भूल करदी है। लिपिकारो को ही इसका दोषी माना जाना चाहिए।

इस प्रकार चारणी वेलियो मे वेलियो छंद का प्रयोग यह सोचने को विवश करता है कि इस छंद का नाम भी वेलि के नामकरण से कुछ संबंध अवश्य रखता होगा। पर इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए एक

और पहलू पर भी विचार करना होगा कि वेलि संबंधी राजस्थानी रचनाओं का प्रारंभ किस शब्द रचना से माना जाना चाहिए। यहां एक और बात भी ध्यान देने योग्य है। राजस्थानी रचनाओं के नामों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट आभास होता है कि लेखकों ने अपनी रचनाओं के नाम प्रायः छंदों के आधार पर दिये हैं। यहां हम कुछ उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं जिनसे इस कथन की पुष्टि होगी—

१ अर्वासिंहजी री झमाल
२ नथूरामजी री दवावैत
३ बाहलजी रा छंद (पाबूजी)
४ सूरजसिंहजी री त्रोटको
५. अमरु भट्ट रा कवित्त
६ हरजी भाला रा कुण्डळिया
७ रतनसिंघ री वचनिका
८ जिलेदार री नीसाणी
९ ढोलामारू रा दूहा
१० जेठवे रा सोरठा

उपर्युक्त सभी नामों के अंतिम शब्द राजस्थानी में प्रयुक्त छंदों के ही नाम हैं। अतः यह सोचना भी कोई विचित्र बात नहीं कि वेलियो गीत के आधार पर ही इन रचनाओं का नाम 'वेलि' रख दिया गया हो।

यहां एक बात और उठती है। रचनाकारों तथा लिपिकारों ने सभी स्थानों पर वेलि को स्त्रीलिंग मानकर लिखा है। लेकिन राजस्थानी गीत छंदों में मिलने वाले नाम 'वेलियो' तो पुल्लिङ्ग ही माना जाना चाहिए। दूसरे यदि वेलियो के आधार पर नामकरण किया जाता तो 'क्रिसन रुकमणी रो वेलियो' अथवा 'महादेव पारवती रो वेलियो' इत्यादि नाम होने चाहिए थे। पर असल में नाम 'क्रिसनरुकमणी री वेलि' 'महादेव पारवती री वेलि' इस प्रकार लिखे गये हैं। इस तथ्य पर विचार

करने से छद के आधार पर नामकरण की बात भी खरी और तर्कसगत नही उतरती । तो फिर क्या राजस्थानी वेलियो में 'वेलियो' छद का प्रयोग एक सयोग मात्र ही कहाजाना चाहिये ? इस सबध मे हम यही कह सकते हैं कि 'वेलि' रचनाओ की परम्परा तो भारतीय साहित्य मे पहिले से ही चली आरही थी, जिसे राजस्थानी कवियों ने भी अपनाया, पर उन्होने इस परम्परा को विशिष्ट रग देने के लिए उसमे वेलियो गीत का समावेश भी कर दिया ।

इस धारणा को और आगे परखने के लिए डिंगल की ज्ञात वेलियो की कालक्रम से छानबीन करनी चाहिये । चू कि चारणेतर वेलियो में कही भी वेलियो गीत छद या किसी अन्य समान छद का प्रयोग देखने में नही आया अत उनके विषय में और अधिक विचारने को कोई आवश्यकता नही होनी चाहिए ।

कालक्रम के अनुसार ज्ञात चारणी वेलियां इस क्रम से रखी जा सकती है —

१ किसनजी री वेलि-साखला करमसी स १६०० के आस पास
२ गुणचाणिक वेलि-चू डो दधवाडियो १७ वीं का प्रारभ
३ देईदास जैतावत री वेलि-अखो भाणोत स १६१३
४ रतनसी खीवावत री वेलि-दूदो विसराल १६१४
५ उदैसिंघ री वेलि-रामो सादू १६१६
६ चांदाजी री वेलि वीठूमेहोठे १६२४ के बाद
७ क्रिसन रुकमणी री वेलि-प्रिथीराज १६३७-४४
८ रायसिंघ री वेलि-सांदू मालो १६५३ के आस पास
९ महादेव पारवती री वेलि-किसनो १६६०-१७००
१० राव रतन री वेलि कल्याणदास महडू १६६४-८८
११ अनोपसिंघरी वेलि वीरभांण १७२६ से पूर्व

उपर्युक्त काल निर्धारण श्रीनरेन्द्र भनावत ने 'राजस्थानी वेलि साहित्य की सूची' नामक अपने एक निबध में किया है, जो परम्परा भाग १४ में

जोधपुर से प्रकाशित हुआ है। यह ध्यान देने योग्य है कि श्री मनावत ने वेलि साहित्य को अपने अनुसंधान का विषय बनाकर राजस्थान विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि भी प्राप्त की है। श्री मनावत ने पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी की कुछ जैन और लौकिक वेलियों की सूची भी दी है पर उन्हें हम अपने विषय से बाहर मानते हैं क्योंकि इन वेलियों का वस्तु-विधान तथा छंद-रचना चारणी वेलियों से मेल नहीं खाती। ११ वीं सदी की एक वेलि 'राउल वेलि' किसी 'रोड़ा' नामक कवि द्वारा रचित उन्होंने बताई है पर उसे देखे बिना उसके विषय में यहां कुछ कहना उचित प्रतीत नहीं होता। इसी प्रकार धीहल रचित वेलि के विषय में भी देखने पर ही कुछ कहा जा सकता है।

मोटे तौर पर श्री मनावत द्वारा दिये गए कालक्रम से सहमत हो जाने पर करमसी सांखला रचित किसनजी री वेलि तथा चूंडोजी की 'गुण चाणिक वेलि' प्रारंभिक वेलियों में गिनी जानी चाहिये। लेकिन राजस्थानी साहित्य के इतिहास से परिचित व्यक्तियों की यह धारणा ही सही मालूम पड़ती है कि राठौड़ प्रिथीराज कृत 'किसन रुकमणी री वेलि' के प्रचार और कवियों तथा आलोचकों द्वारा की गई उसकी अत्यंत प्रशंसा से यह अनुमान लगता है कि वेलि रचनाओं को विद्वानों की दृष्टि में लाने का श्रेय राठौड़ प्रिथीराज की ही वेलि को है। यह हो सकता है कि प्रिथीराज को अपने पूर्व के कवियों द्वारा रचित वेलियों से प्रेरणा मिली हो पर प्रसिद्धि का सेहरा प्रिथीराज के ही बंध पाया।

चूंकि राजस्थान के चारणी साहित्य की बहुत कम खोज अभी हो पाई है अतः यह कहना अत्यंत कठिन है कि वेलि परम्परा का प्रारंभ हम किस शताब्दी से मान सकते हैं। पर जिस युग में चारणी वेलियां लिखी गई उसमें डिंगल पर व्याकरण का बन्धन और अत्यंत अनिश्चित था। खासतौर से विविध छंदों में वेलियों का प्रयोग ही संभवतः सबसे अधिक हुआ। राजवीरों और योद्धाओं तथा आश्रय दाताओं की प्रशंसा में रचे गये सैकड़ों गीत कवियों

छंद म लिखे हुए मिलते हैं। कई कवियों ने तो इस लोकप्रिय छंद मे बहुत अधिक रचनायें की हैं।

इस तथ्य से यह धारणा भी बन सकती है कि 'वेलियो' की सब प्रियता को देखकर प्रारंभिक बेलि रचयिताओ ने इसे अपनाया, और बाद में वलियो तथा बेलि के नाम साम्य को देखते हुए बेलि रचनाओं में वेलियो छंद के प्रयोग की परम्परा अनायास ही चल पड़ी। अत मे इन विविध तथ्यो, धारणाओं और कल्पनाओ का निष्कर्ष निकालने की दृष्टि से हमें यह मानकर चलना चाहिए कि बेलि रचनाओ की परम्परा भारतीय साहित्य में पर्याप्त समय से चली आरही है और इसी परम्परा को चारणी वेलिकारो ने अपनाया। वेलि का अर्थ भी यशोगान ही माना गया जैसा अन्य भारतीय वेलियों में रहा। वेलियो गीत से बेलि रचनाओ का संबध प्रारम्भ मे आकस्मिक रहा, पर बाद में यह अनायास ही परम्परा का एक अग बन गया। वेलियो संबधी ज्ञात तथ्य इससे अधिक और कुछ भी कह सकने में हमें विवश करते हैं।

महादेव पारवती री वेलि

जैसा कि हम कह चुके हैं राठोड प्रिथीराज कृत 'क्रिसन रुकमणी री वेलि' को उस युग में सर्वाधिक प्रशसायें प्राप्त हुई। इसलिये यह स्वाभाविक था कि अन्य कवियों में भी प्रिथीराज के प्रति प्रतिस्पर्धा की भावनायें उत्पन्न हुई। इस भावना से प्रेरित होकर कवियो ने उस श्रेणी की अथवा उससे भी उत्तम काव्य रचना के प्रयत्न भी किये होंगे। पर, प्रिथीराज की वेलि से मिलते जुलते विषय और रूपगठन की दृष्टि से प्रस्तुत रचना 'महादेव पारवती री वेलि' ही ऐसी ज्ञात रचना है जिसे हम निस्संकोच प्रिथीराज की प्रतिस्पर्धा में लिखी गई रचना मान सकते हैं।

इस रचना की ओर मेरा ध्यान उस समय गया जब सन् १९४२ ४३ में मैं बीकानेर राजकीय अनूप संस्कृत पुस्तकालय मे राजस्थानी हस्तालिखित ग्रंथों का विवरणात्मक सूचीपत्र प्रस्तुत करने की दृष्टि से राजस्थानी ग्रंथों की छानबीन कर रहा था। उस समय राजस्थानी साहित्य की परम्पराओं

का मेरा ज्ञान इतना परिपक्व न था जितना मैं इस समय अनुभव करता हूँ। इसलिए मैंने प्रस्तुत बेलि को भविष्य में कभी सम्पादित करने के विचार से छोड़ दिया था। संयोगवश मुझे इसी बेलि की एक अन्य प्रति एक सुवाच्य और शुद्ध अक्षरों में लिखे गुटके के अंश रूप में प्राप्त हो गई। अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति तथा इस नवीन प्रति के पाठ की तुलना करने पर यह निश्चय हुआ कि उक्त दोनों ही प्रतियाँ एक दूसरे से हूबहू मिलती हैं, और जान पड़ता है कि दोनों ही कि ? एक मूल प्रति से लिपिबद्ध की गई हैं। इसलिए दूसरी प्रति का पाठान्तर देने की भी आवश्यकता नहीं प्रतीत हुई। अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति में कोई पृथक पुष्पिका तो नहीं है, पर उस गुटके का कुछ अंश संवत् १७ २ में लिपिबद्ध होना लिखा गया है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उसी गुटके की अंगीभूत बेलि भी उक्त संवत् के थोड़ी बहुत आगे-पीछे लिपिबद्ध हुई होगी। दूसरी प्रति जिसके आधार पर प्रस्तुत पाठ दिया गया है संवत् १७२ में बीकानेर में लिखी गई। उस समय सुप्रसिद्ध विद्वान नरेश महाराजा अनूपसिंह महाराजकुमार पद पर आसीन थे।

इस प्रकार इन दोनों प्रतियों में बहुत थोड़ा अन्तर (१८ वर्ष) ही है। एक और प्रति की सूचना मुझे अपने कृपापात्र मित्र श्री मुरलीसिंह एम ए से प्राप्त हुई। उन्होंने बताया कि जयपुर के रामगंज बाजार में रहने वाले किसी कसारी के यहाँ 'हर पारवती री बेलि' नाम से एक ग्रन्थ उन्होंने देखा। पर जब तक मैं उसकी खोज करने पहुँचा तब तक वह ग्रन्थ न जाने कहाँ चला गया। यदि उक्त ग्रंथ मिल पाता तो संभव था कि उसमें महत्वपूर्ण पाठभेद के साथ ही कवि की पहिचान का भी कोई सूत्र हाथ लगता।

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर के विद्वान और विद्याप्रेमी निदेशक श्री अगरचंद नाहटा ने जब संस्था के लिए कुछ ग्रन्थ सम्पादित करने की बात मुझसे कही तो मैंने वर्षों से अन्धकार में भटकने वाले इस ग्रन्थ को भी अपनी सूचि में सम्मिलित कर उन्हें दे दिया। बेलि का

यह प्रकाशन श्री नाहटा की ही सद्प्रेरणा और लगन का परिणाम है। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से खरी-खोटी तक सुनाकर मुझसे यह कार्य न करवाया होता तो कम से कम मेरे द्वारा तो यह कार्य कब सम्पन्न होता, कहा नही जा सकता।

प्राचीन राजस्थानी ग्र थों का सम्पादन

मेरी यह मान्यता रही है कि प्राचीन राजस्थानी ग्र थो का सम्पादन धीरे-धीरे एक अत्यत दुष्कर कार्य होता जा रहा है। चारणी काव्य परम्परा के परम्परागत विद्वान ज्यों-ज्यो समाप्त होते जा रहे हैं त्यों-त्यों उसे समझने और शकारहित ढग से आधुनिक अन्वेषको को समझाने वाले लोग अब शायद अगुलियो पर गिनने योग्य ही बचे हैं। 'वेलि' तथा 'दलपतविलास' का सम्पादन प्रारम्भ करते समय मेरे सामने यह कठिनाई उपस्थित हुई। मैंने परम्परागत क्षेत्र के अनेक लब्ध प्रतिष्ठ विद्वानो से शका-स्थलो की चर्चा की। अनेक शकाओ का तो समाधान ठीक होगया, पर दजनो ऐसे स्थल रह गये जिन पर या तो वे कुछ कह ही न पाये, और यदि कुछ कहा भी तो मेरे गले नहीं उतरा। इसलिए मैं यह निस्सकोच रूप से मानता हू कि वे सभी स्थल नितांत अस्पष्ट रहे हैं, और ऐसा सकेत भी मैंने अनेक स्थानों पर कर दिया है।

प्राचीन राजस्थानी साहित्य के सपादको में श्री रामकरण आसोपा तथा श्री सूर्यकरण पारीक व श्री नरोत्तमदास स्वामी के नाम अग्रगण्य रहे हैं। पर उनके द्वारा संपादित ग्र थों में भी विद्वानों ने अनेक शकायें उपस्थित की हैं, और अनेक स्थलो पर उनके अर्थों में सशोधन भी सुझाये हैं, जिनमें से अनेक ठीक भी कहे जा सकते हैं। श्री नरोत्तमदास स्वामी से अर्थ सहित सपादन के विषय में चर्चा होते समय उन्होंने यह स्पष्ट रूप से स्वीकार करके, कि अर्थ करना बडा कठिन कार्य है, अपनी निरभिमानी विद्वत्ता का परिचय दिया। ऐसा ही उत्तर डिंगल के परम्परागत पारखी जयपुर के श्री मुरारिदानजी कविया ने भी दिया। राजस्थानी कोषकार श्री सीताराम लालस ने भी इस तथ्य को निस्सकोच रूप से स्वीकार किया।

ऐसी स्थिति में प्राचीन राजस्थानी साहित्य का संपादन एक विकट समस्या की वस्तु बन गया है। फिर भी प्राचीन ग्रंथों को, केवल मूलपाठ प्रकाशित करने के स्थान पर जैसा भी अर्थ बन पड़े उसके साथ ही प्रकाशित करना हितकर माना जाना चाहिये। इसके दो स्पष्ट लाभ होंगे। एक तो यह कि पाठक को इस अपेक्षाकृत दुरूह साहित्य को थोड़ा बहुत समझने में सरलता होगी और दूसरा यह कि अन्य विद्वान जो भाषा मर्म को समझने की क्षमता रखते हैं अर्थ संबंधी समस्या को हल करने में अथवा अशुद्ध अर्थ को संशोधित करने में सहायक हो सकेंगे। इसी लक्ष्य से मैंने जैसा-तैसा अर्थ मैं कर पाया, उसके सहित ही इस ग्रंथ को सम्पादित किया है।

यह जानते हुए कि राजस्थानी ग्रंथों के संपादकों को मेरी तरह ही इन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता होगा अथवा पड़ सकता है मैं एक सुझाव प्रस्तुत करना चाहता हूं। प्राचीन साहित्य के महत्त्वपूर्ण उपलब्ध ग्रंथों तथा गीतों के सही अर्थ करने के लिए परम्परागत और आधुनिक विद्वानों का एक दल राज्य सरकार के सहयोग से इस काम को अपने हाथ में ले। प्रकाशन तो धीरे-धीरे भी हो सकता है पर अर्थ करने वाले बाद में हमारे बीच नहीं रह सकेंगे। संस्कृत प्राकृत और फारसी आदि भाषाओं के विद्वान तो और भी मिल जायेंगे पर डिंगल की निजी परम्परा के जानकार बाद में नहीं मिल सकेंगे। इसलिए इस कार्य में जितनी शीघ्रता की जाय उतना ही उत्तम होगा।

जब तक यह काम सम्पन्न न हो जाय और एक ऐसा प्रामाणिक शब्दकोश न बनाया जाय जिसके सहारे हम शेष ग्रंथों तथा गीतों आदि के अर्थों की समस्या सुलझा सकें तब तक केवल पाठ छापने वाली पुस्तकों का प्रकाशन बंद कर दिया जाना चाहिए। अच्छा हो हम विषय की गंभीरता को देखते हुए शीघ्र ही आवश्यक कदम उठावें ताकि बाद में पछताना न पड़े।

आधुनिक शोध प्रबन्ध

साथ ही आजकल विश्वविद्यालयो की डाक्टरेट उपाधि प्राप्त करने के लिए लिखे जाने वाले शोध-प्रबधो की चर्चा भी मैं करना चाहूगा। इस चर्चा का प्रस्तुत विषय-वस्तु से सीधा सबध इसलिये माना जा सकता है कि आजकल प्राय राजस्थानी शोधकर्ता राजस्थानी साहित्य से सबधित विषयो पर ही शोध कर रहे हैं।

जहा तक प्रकाशित शोध-प्रबध मेरे देखने मे आये हैं मैंने यह अनुभव किया है कि प्राय अन्वेषक विद्वान विषय के किसी विशिष्ट और गभीर पहलू को लेकर आगे बढ़ने के स्थान पर विषय से सबधित सामग्री का मोटा वर्गीकरण मात्र करके उसे विस्तार देने का प्रयत्न करते हैं। प्रबन्ध का कलेवर बढाने का प्रयास उनके प्रयत्नो मे स्पष्ट दिखाई देता है। शोधकर्ताओ से अपेक्षा तो शायद यह की जाती है कि वे प्रतिपाद्य विषय का जिस दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत कर रहे हैं उसमे अपनी कोई नई मान्यतायें, धारणायें अथवा तथ्य प्रस्तुत करें। पर, इसके विपरीत वे उपलब्ध प्रकाशित व अप्रकाशित सामग्री का सकलन मात्र कर देते हैं। उदाहरण के तौर पर प्राचीन राजस्थानी-साहित्य से सबधित कतिपय शोध प्रबधो को ले लीजिये। डा० मोतीलाल मेनारिया ने अपने 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' नामक ग्रन्थ मे जिस जानकारी को सर्वप्रथम सकलित कर प्रकाशित करवाया उसी मे थोडा बहुत इधर-उधर जोड कर कई शोध-प्रबन्ध प्रकाशित किये जा चुके हैं। जादा अखरने वाली बात तो यह है कि उन प्रबधो मे किसी नई विचारधारा या सिद्धान्त का प्रतिपादन बिल्कुल नही किया गया है। पर उपाधियाँ उन्हे बदस्तूर मिली हैं और मिलती जा रही हैं।

अभी कोई २०–२५ वर्ष पहिले हिन्दी साहित्य मे डाक्टरेट की उपाधि धारण करने वाले गिनती के लोग थे। उस समय साहित्य

का डाक्टर श्रद्धा और सम्मान का पात्र समझा जाता था । पर इन्हीं वर्षों में अनेक विश्वविद्यालयों ने मुक्तहस्त से उपाधियाँ बाँटनी प्रारम्भ करदी हैं जिसका परिणाम यह हुआ है कि इन उपाधियों के प्रति न तो वह श्रद्धा और सम्मान ही रहा है और न इन शोध-प्रबंधों का साहित्य में कोई महत्त्व ही रहता है । इस गिरते हुए स्तर की ओर यदि शीघ्र ही ध्यान नहीं दिया गया तो स्थिति आगे चल कर कितनी दयनीय होगी कहा नहीं जा सकता ।

इस साहित्यिक अधःपतन के मूल में एक और संक्रमक रोग है । आजकल जीवन के हर पहलू की तरह साहित्य में भी दलगत राजनीति घर कर गई है । विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक भी इस छूत से बचे नहीं हैं । उन्होंने अपने अपने प्रिय शिष्यों को योग्यता-अयोग्यता का विचार किये बिना ही उपाधियाँ दिलवाने की होड़ सी लगा रखी है । एक भी ऐसा दृष्टान्त सुनने व देखने में नहीं आया जब किसी भी शोध-प्रबंध प्रस्तुत करने वाले को उपाधि न मिल पाई हो । कहना तो यह चाहिए कि प्रायः विद्यार्थी के लिए एम ए जैसी परीक्षा में अच्छी श्रेणी में उत्तीर्ण होना अधिक कठिन है पर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त करना एक हर्रे की चीज रह गई है । जो गर्व का समय कुछ सेवा और निर्देशक की कृपा— यही डाक्टरेट के नुस्खे की औषधियाँ हैं । इस कटु सत्य से कुछ लोग शायद अप्रसन्न हों पर सत्य तो सत्य ही है कोई छिपी वस्तु नहीं ।

'बीसलदेव रासो' के संपादन पर उपाधि प्राप्त करने वाले एक विद्वान ने अजमेर मेरवाड़ा जैसे सुप्रचलित भौगोलिक शब्द की जानकारी प्राप्त किये बिना ही उसे अजमेर-मेवाड़ समझ लिया है और अज्ञानकार पाठकों को एक निरी गलत सूचना देदी है ।

'बीसलदेवरास' के ही एक पुराने संस्करण के संपादक विद्वान ने 'अचलगढ़वार' शब्द के सांस्कृतिक अर्थ को जानने का प्रयत्न किये बिना ही उसे बीसलदेव की बहिन का नाम बता दिया है ।

ग्राधुनिक राजस्थानी साहित्य पर ग्रालोचनात्मक निबंध लिखने वाले एक विश्वविद्यालय के प्राध्यापक ने चारण जाति की विभिन्न शाखाओं को ही कवियों के नाम समझ कर पाठकों को भ्रम में डालने का पाप किया है।

ऐसे ही अनेक उदाहरण ग्रासानी से दिये जा सकते हैं। पर हमारा लक्ष्य लोगो के दोष दिखाना नही है। कहने का आशय केवल इतना ही है कि शोध विषयक स्तर की इस तेजी से होती हुई गिरावट को शीघ्र ही रोका जाना चाहिये। यदि इस ओर अभी समुचित ध्यान नही दिया गया तो शोध का विषय स्वय एक हास्यास्पद वस्तु बन जायेगा। इस गिरावट को रोकने का सर्वोत्तम उपाय यही होगा कि विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक अध्ययन, अध्यवसाय और निष्ठा पर बल दें, केवल कृपा का प्रसाद देकर उपाधि प्राप्त करने का सुगम मार्ग ही न बतायें।

कथासार

प्रारम्भ से तेईस छदो मे कवि ने अपने ग्रन्थ के आराध्य देव शिव का वर्णन किया है। शिव का योगीश्वर रूप ही कवि को विशेष प्रिय है। उन्हे कछोटा मारे हुए, बभूत रमाये, कठ मे सीगी धारण किये, कानो मे काश्मीरी मुद्रा लटकाये, उड्डियान बध कसे हुए और बगल मे अधारी लिये एक योगी अवधूत के रूप मे कैलाश के शिखर पर ध्याना-वस्थित चित्रित किया गया है।

साथ ही उन्हें अयोनि, अनादि, अनत, सभवनाथ, वृषारूढ, मुडमालधारी, सर्प गले मे लटकाये हुए, तथा समुद्रमथन के समय विष पीने वाला भी बताया गया है।

इसके बाद २४ से ४२ तक के १६ छदो में गगावतरण का प्रसग है। राजा सगर का अश्ववेध यज्ञ, कपिल ऋषि के आश्रम में इन्द्र द्वारा अश्व का बाधा जाना, सगर के साठ हजार पुत्रों द्वारा ऋषि का अपमान,

कपिल द्वारा उन्हें भस्म किया जाना तथा तीसरी पीढ़ी में गंगा द्वारा उनके उद्धार का वरदान । तीसरी पीढ़ी में राजा भागीरथ द्वारा गंगा को प्रसन्न करने के लिए तपस्या, गंगा द्वारा अपने प्रवाह को धारण करने के लिए शिव की आराधना करने की सलाह, भागीरथ द्वारा बारह वर्ष तक शिव की आराधना कर गंगा को धारण करने की प्रार्थना तथा वरदान प्राप्ति तथा शिव द्वारा गंगा के प्रवाह को मस्तक पर धारण करना—इन प्रसंगों में कथा का संक्षिप्त उल्लेख किया गया है ।

इसके बाद सृष्टि की उत्पत्ति से वर्णन प्रारंभ होता है । भगवान प्रयाग में वट-पत्र पर शिशु रूप में समाविष्ट होकर अनेक युगों के बाद जगे । सृष्टि उत्पन्न करने की इच्छा से भगवान ने नाभिकमल से ब्रह्मा को उत्पन्न किया । ब्रह्मा ने दाहिने हाथ से दक्षादिकों को प्रकट किया ।

इसके बाद राजा दक्ष की कथा है । दक्ष को देवताओं का वरदान हुआ कि स्वयं देवी भगवती तुम्हारे यहाँ पुत्री रूप में अवतार लेंगी । गंगापुर में परम प्रतापी राजा दक्ष के सात पुत्रियाँ तथा साठ हजार कुमार थे । सती ने राजा दक्ष की रानी के गर्भ में अवतार लेकर एक ही दिन में दस वर्षों के बाद जन्म लिया । उनकी शक्ति के प्रभाव से माता-पिता अपनी सभी संतानों में सती को ही सर्वाधिक प्रेम करने लगे । राजकुमारी अत्यंत सुंदर रूप में पल-पल पर वय प्राप्त करने लगी । उसे वर-प्राप्ति-योग्य जान कर राजा ने दसों दिशाओं में योग्य वर ढूंढने के लिए लोगों को भेजा ।

इसके बाद छंद ५५ से ७४ तक सती के यौवन और सौन्दर्य का विशद और हृदयग्राही वर्णन किया गया है ।

राजा दक्ष ने अपनी अन्य बड़ी पुत्रियों का विवाह तो अन्य राजाओं से कर दिया तथा सती के लिए उपयुक्त वर बताने के लिए अपने परिवार तथा प्रजाजनों से पूछा । परिवार वालों ने विचार कर कहा कि विश्वम्भर के समान और कोई वर नहीं है । राजा को यह सुझाव जँचा तो कम ही

पर परिवार का कहना मान कर, शिव को पागल वर समझते हुए भी, टीके का नारियल भिजवा दिया ।

राजा दक्ष के वडे प्रधान नारियल देने के निमित्त कैलाश पर्वत पर पहुँचे । कैलाश की प्राकृतिक छटा का वर्णन करते हुए कवि ने यहाँ चांद-तारो तक पहुचने वाले वृक्षो, भांति-भांति के पक्षियो के कूजन मे सुहावनी वनराजि, आम्र वृक्षों मे केलि करते हुए कुजरो, कस्तूरी मृगो, मल्हार गाती हुई कोयलो और मोरो, वेग से वहती हुई नदी तथा एकत्र विचरण करते हुए गायो और सिहो की चर्चा की है। गहन वन मे चलते हुए उन प्रधानो की वात कुछ पक्षियो से हुई, जो मानवो की भाषा बोल रहे थे । पक्षियो की सलाह मानकर प्रधान लोग कुछ दूरी पर एक कुड के पास गये जहा स्नान करने को आये हुए कुछ देवताओ ने उन्हे रथ पर चढा कर शिवजी के पास पहुचा दिया ।

कैलाश पर पहुंच कर प्रधानो ने शिव के दर्शन किए और कैलाश की शोभा देखने लगे, जिसका विस्तार दस योजन तक था और जहा कभी सूर्यास्त भी नही होता । ऐसे कैलाश पर्वत पर शिव का रत्ननिर्मित प्रासाद था जिसे अत्यत कुशलतापूर्वक सोने के गारे से बनाया गया था। उस प्रासाद का तेज सहन नही किया जा सकता । वहा गगा के निर्मल जल में स्नान करके ब्रह्मादिक देवता वेदो का पाठ करते थे ।

ऐसे कैलाश पर्वत पर ऊचे-ऊचे आवासो मे अप्सराओ का निवास था और अनत समृद्धि थी । शिवपुरी के इस वैभव को देखने के वाद राजा दक्ष ही क्या अनेक राज-सिहासन मात हो गए ।

उसी दिन भगवान शकर ने वारह युगो के वाद अपनी समाधि छोडी । राजा दक्ष के प्रधान भगवान से मिले और प्रेमपूर्वक नारियल भेंट किया । प्रधानो ने शिवपुरी मे आकर भगवान शिव के दर्शन करके अपने आपको धन्य माना । उन्होंने शिव से पुण्य लग्न मे अवावती पधार कर सती से विवाह करने की प्रार्थना की ।

शिव ने चारों ओर कुंकुमपत्रिका भेजी जिस पर ब्रह्मा विष्णु आदि देवता पधारे। भरों सुरों व नागों के बड़े-बड़े राजा तथा मठरहों इन्द्र भी वहीं आये। वहीं कुलधाम से यह विवाह बारात चली और चंपापुरी में एक बाग हुर था उतरी। बधाईदार भेजे गए जिस पर राजा दक्ष भी अपने परिग्रह को लेकर स्वागतार्थ गए।

शिव ने मुगलखा व मुण्डमाल पहिन कर तथा भभूत रमा कर बैल की सवारी की और विवाह के लिए चले। लोग आ-आकर उलहना देने लगे कि राजा ने राजकुमारी के योग्य वर नहीं खोजा। घर-घर में यही बात होने लगी कि न जाने कहां से किसी बूढे जोगी को पकड़ लाये हैं। जो भाग्य में लिखा होता है वही होता है। स्त्रियां दासियां बजा-बजा कर वर को देखती हुए हंसने लगी। बूढ़े वर और छोटी कन्या को देख कर शिव की सास भी मन में दुःखित हुई।

पर बेचारे मानव शिव की महिमा को क्या जानें। बीसहुवी (सती) ही शिव के अधिकारों को जानती थी। जिस समय शिव ने तोरण की वंदना की तो दारिद्र य का नाश हो गया और सभी को सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति हुई। जो महात्मा शिव के सामने कलश लेकर आई उसे जन्म-जन्मांतर तक वैकुण्ठ की प्राप्ति हुई।

इसके बाद सती के स्नान व शृंगार का वर्णन है। सती के सौन्दर्य की छटा बड़ी अनोखी थी। उसके पैरों में जड़ाव के नूपुर हाथों में बाजू बंध कंकण तथा पहुंचियां थी। मोटे-मोटे दानों का सुन्दर हार गंगा की धार की तरह उसके गले से सुशोभित था। मोतियों की कंठमाल के पास ही गौरी ने हंसुली भी पहिनी। आशावादिता ने शिव को वश में करने के लिए सोलहों शृंगार किये। नाक में नकबेसर अनियारे नयनों में काजल ललाट पर कुंकुम का तिलक तथा चोली व कुसल वस्त्र धारण किये।

नवग्रहों की पूजा करके ब्रह्माजी ने कुलदेवा करवाया। उसके बाद में 'बाजा' के आगे बैठे वहां गौरी को आशीर्वाद दिया गया। विधिपूर्वक समस्त वैवाहिक आचार किये गये।

विवाहोपरान्त शिव ने बारात के डेरे मे आकर प्रचुर द्रव्य का दान दिया। शिव और सती मे जन्म-जन्मातर का स्नेह वर्धित हुआ। सती ने प्रभु से प्रार्थना की कि वे अपना वर रूप प्रगट करें जिसे समस्त ससार देख सके। शिव ने उनकी बात मानकर वर रूप धारण किया जिसकी शोभा के आगे क्या सूर्य और क्या इन्द्र, समस्त अन्य रूप भी रद्द होगए।

राजा दक्ष ने दस दिनो तक बारात को रखा और अनत दहेज देकर विदा किया। पर, दक्ष के मन मे वर की ओर से कुछ अप्रसन्नता ही रही। वहाँ से विदा होकर शिव कैलाश पर आये जहाँ अत्यत उत्साहपूर्वक उनका स्वागत किया गया।

अनेक युग बीत जाने पर राजा दक्ष ने एक यज्ञ रचा जिसमे स्वर्ग, नाग व मृत्यु लोक के अनेक राजाओ को आमन्त्रित किया गया। ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी देवता वहा आये पर भगवान विश्वभर को नही बुलाया गया। इस पर सती ने शिव से कहा कि आप भी दक्ष का यज्ञ देखने चलें और मुझे भी साथ लें। शिव के यह समझाने पर भी कि बिना बुलाये पराये घर नही जाना चाहिए, सती को सतोष नही हुआ। सती के मन मे माता-पिता से मिलने की उत्कट इच्छा लगी हुई थी।

उधर दक्ष के यज्ञ में आये हुए ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवताओ ने दक्ष से पूछा कि योगीश्वर शिव नही दिखाई दे रहे हैं सो क्या बात है। राजा दक्ष ने भारी मुह से उत्तर दिया कि ऐसे अवधूत को कौन बुलाये! इस पर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवता यह कह कर चले गये कि उनके बिना यज्ञ नही होगा।

इसी समय नदी और आठ गणो को साथ लेकर सती वहाँ पहुँची। राजा दक्ष ने उसे कोई सम्मान नही दिया और उसके आते ही पीठ फेर कर बैठ गया। इस पर सती ने कहा कि मैं शिव की आज्ञा का उल्लङ्घन करके यहाँ आई हूँ और यहाँ मेरा तथा मेरे पति का अपमान किया गया है। जहाँ मान-भग हो वहाँ प्राण दे दिये जाने चाहिए, ससार के लिए

सती का यही वाक्य है। ऐसा कह कर अत्यन्त क्रोध करते सती ने योगाग्नि में कूद कर अपने प्राणों का अन्त कर दिया और इस प्रकार दक्ष के यज्ञ का विध्वंस हो गया। सती के योगाग्नि में कूदते ही सातों ब्रह्माण्ड और सातो ही पाताल कांपने लगे।

उस समय वहां घमासान युद्ध छिड़ पड़ा और शिव के आठों गण विषम रूप से युद्ध करने लगे। कुंभ और निकुंभ ने बड़ी वीरता पूर्वक युद्ध किया। गणों द्वारा किये जाने वाले संहार को देखकर दक्ष भाग कर भृगु के पास गया और सहायता की प्रार्थना की। भृगु ने मंत्र से युद्ध करने वाले वीर उत्पन्न किये जिनसे हार कर गण लौट पड़े।

इसी समय शिव को ज्ञात हुआ कि सती ने प्राण त्याग दिये और साथ गये हुए गण भयंकर युद्ध करके लौट आये। इस पर शिव ने रौद्र रूप धारण किया और उनके तृतीय नेत्र से क्रोधाग्नि बरसने लगी। सारा ब्रह्माण्ड उनके क्रोध से कांपने लगा। गले का नाग फुंकार उठा रोम खड़े हो गए धुए के बिना ही अग्नि प्रज्ज्वलित हो उठी और उनकी जटायें खड़ी होकर आकाश से जा लगी। उनके अंगों में बढ़ते हुए रौद्रत्व को देखकर प्रभु भयत्रस्त हो उठे। तब शिव ने अपनी जटा से वीरभद्र नामक भयंकर वीर को उत्पन्न किया। वह वीर सिंह खड्ग लेकर युद्ध के निमित्त दक्ष के यहां सती का बदला लेने के लिए गया। उसने शत्रुओं का भयंकर संहार किया और अनेक राजाओं को यज्ञाग्नि में डाल कर भस्म कर दिया। राजा दक्ष को भी उस वीर ने समाप्त कर दिया। पर ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओं के कहने पर अपरांत शिव ने राजा दक्ष को बकरे का सिर प्रदान कर जीवित कर दिया और सती की भस्म बांध कर हिमगिरि के समीप डाल दी।

ब्रह्मादि देवताओं ने कहा कि सती पार्वती के रूप में पुनः अवतार लेगी। शिव और शक्ति की जोड़ी संसार में अविकल रही है। एक से एक बढ़ते हुए शक्ति के अवतारों में पार्वती की महिमा विशेष मानी गई है।

उधर वीरभद्र को युद्ध से वापिस वुलाकर भगवान शिव पुन ध्याना-वस्थित हो गए ।

इसके वाद एक दिन राजा हिमाचल अपनी रानी मैना के साथ आनद-भ्रमण करते हुए एक पर्वत-शिखर पर आये जहा उन्होने पार्वती को वालिका रूप मे देखकर अपने पास वुलाया । रानी ने उसे हृदय से लगा लिया और अत्यत लाड–प्यार से उसका लालन–पालन करना प्रारभ किया । वारह दिनो मे ही वह वालिका वारह वर्षों जितनी वडी हो गई । पार्वती का रूप अत्यन्त अनुपम था । उसके सौन्दर्य की उपमा सारे जगत मे दी जाती है, अत उसे किसकी उपमा दी जाये !

एक वार नारद ऋषि घूमते–फिरते हिमालय के यहा पाहुन हुए । राजा ने नारदजी से वालिका के लिए उपयुक्त वर पूछा, जिस पर नारदजी ने कहा कि ससार मे ईश्वर और पार्वती की जोडी अविचल है, अत अन्य अनेक वर देखने से क्या मतलव है । इस पर हिमालय ने नारदजी से इस सवध का उपाय पूछा तो उन्होने कहा कि कैलाश के शिखर पर ध्यानावस्थित शिव की सेवा करके पार्वती उनसे फल मागे ।

नारद की सलाह के अनुसार पार्वती अपनी सहेलियों के साथ पूजा की सामग्री लेकर शिव के पास पहुँची और पूजा प्रारम्भ की । छ मास तक आराधना करने पर भी शिव की समाधि नही टूटी ।

दैत्यो को ब्रह्मा का वरदान हुआ और उन्होंने देवताओ को त्रस्त करना शुरू किया । इन्द्र ने ब्रह्माजी से दैत्यो को मारने का उपाय पूछा तो उन्होंने कहा कि जव शिव पार्वती से विवाह करेंगे और उनके पुत्र उत्पन्न होगा, उसी के हाथ से दैत्य का नाश होगा ।

इन्द्र के कहने पर कामदेव ने शिव को जागृत करने का वीड़ा लिया और वसत ऋतु का पदार्पण करा कर वह रति के साथ कैलाश पर गया । शिव ने तृतीय नेत्र से उसे भस्म कर डाला ।

तदनंतर पार्वती सहेलियों को साथ लेकर एकान्त में तप करने के लिए गई। वह बिना अन्न-पानी के केवल पवन के आधार पर ही रात-दिन कठिन तपस्या करने लगी। छः मास तक लगातार 'शिव-शिव' कहती हुई पार्वती ने अखंडित तप किया। शिव बूढ़े ब्राह्मण का वेष बनाकर पार्वती के सत्य की परीक्षा करने आये। उन्होंने कहा—मेरी मानुस ! तुम यहां वन में रहकर किस कारण तपस्या कर रही हो ? पार्वती की सहेलियों के यह कहने पर कि शिव को वर-रूप में प्राप्त करने के लिए ही तपस्या कर रही है उन्होंने कहा कि जो आदमी भस्म रमाये धतूरा खाये पहाड़ों की गुफाओं में रहे उससे विवाह करने में कोई समझदारी नहीं है। ऐसा सुनकर जब पार्वती क्रोधित हो उठ कर जाने लगी तो शिव ने हँस कर उनका हाथ पकड़ लिया और प्रसन्न होकर कहा कि तुम जिस प्रकार चाहो उसी प्रकार विवाह करेंगे।

पार्वती अपने पिता के घर आ गई। शिव ने पार्वती को विवाह में मांगने के लिए अपने आदमी भेजे। विवाह के महीने पहिले ही माता-पिता अत्यन्त उछाह करने लगे। शिव भी बारात में विष्णु ब्रह्मा इन्द्र तथा अन्य देवों नागों और राजाओं को लेकर आये। बधाईदारों ने आकर राजा हिमाचल से कहा कि बारात बड़े ठाट बाट से आई है और पूछने पर यह भी बताया कि ब्रह्मा विष्णु तथा इन्द्र आदि बड़े जानी हैं।

राजा हिमाचल बारात के डेरे पर स्वागतार्थ आये। शिव ने विधिपूर्वक स्नान किया और वर का वेष तथा आभूषणादि धारण किये। नंदी को भी सवारी के लिए सजाया गया। पुष्पमाल मखमली झूल जरबाफ के पट्ट रेशम की लगाम और रत्ननिर्मित पाखर से वह अत्यन्त सुशोभित प्रतीत होता था। शिव भी दुर्लभताल तिलक लगाकर, कपूर का लेप कर डीका बजाते हुए वृषभ पर सवार हुए।

कलश लेकर कामिनियां वर की वंदना के लिए आईं। मणिदीपिकाओं की तरह वस्त्राभूषणों से जगमगाती हुई पुर-नारियां वर को देखने के

लिए घरो की छतो पर चढी। गवाक्षो मे से निकलते हुए उनके सुन्दर मुख सरोवर मे सिर उठाये हुए कमलो की भाति प्रतीत हुये। आलक्तक लगे हुए पैरो से जब सुदरिया शिव को देखने के निमित्त दौडी तो आँगन मे विविध प्रकार के चित्र मँड गये।

तोरण पर वर की वदना की गई। रानी मैना ने उनके तिलक किया। रथ से उतर कर शिव विष्णु का हाथ पकडे अन्दर रायागण मे गये। उधर उमा भी स्नान करके शृङ्गार के लिए वैठी। उसने पैरो मे मधुर शब्द करने वाली पायल और कलाइयो पर नद नामक आभूषण पहिना। हाथीदात का बना हुआ अत्यन्त हलका उसका चूडा मानसरोवर के हसो के समान सफेद दीखता था। हाथो मे कगण, अगुलियो मे मूँदडी, गले मे हीरे जडे हुए मोतियो का हार, नाक मे नकवेसर, कानो मे कुडल और अन्य अनेक ऐसे आभूषण धारण किए जिनके नाम भी मनुष्यो को ज्ञात नही है। आँखो मे काजल लगा कर और मुख मे ताबूल चबा कर पार्वती ने रेशमी चोली पहिनी और टपकते हुए गहरे रग की चूनर ओढी।

ब्राह्मणो ने शिव और पार्वती का उपयुक्त सबध विचार कर उनका पाणिग्रहण करवा दिया। विवाहोपरान्त दोनो आकर तख्त पर बैठे और देवो तथा ब्राह्मणो ने पार्वती को पुत्रवती होने का आशीर्वाद दिया। इस अवसर पर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओ ने शिव से कामदेव को पुनर्जीवित करने की प्रार्थना की जिसे शिव ने मान लिया। पद्रह दिनो तक हिमाचल ने बारात की आवभगत की और विदा होते समय अमूल्य दहेज दिया। शिव ने भी छहो वर्णो को मुक्तहस्त से दान देकर तृप्त कर दिया।

विवाह करके शिव कैलाश पर आये। समय पाकर पार्वती के पुत्र उत्पन्न हुआ। उस महोत्सव पर सारे देवता वहाँ आये। ब्रह्मादि ने बालक को कार्तिकसुर नाम दिया। उसके जन्म लेते ही दैत्य का सिंहासन डिग गया। सब देवता शिव से विनय करने लगे कि दैत्य ने सब को तग कर

रखा है। सारे देवता उसके अधीन हो गये हैं। उस समय विष्णु ने शिव से कहा कि ब्रह्मा का उसे वरदान है कि कुमार कार्तिकेय सेनापति बनें और सभी देवता उनके साथ हों तभी वह मारा जायेगा। इस पर शिव ने पार्वती से पूछा कि वह कुमार को युद्ध में भेजने के लिये तैयार है क्या? पार्वती ने कहा कि यह दिन धन्य है जब सारे देवता मेरे पुत्र के लिए आये हैं।

शिव ने दैत्य को मारने का हुक्म अपने पुत्र को दिया। और होते ही कुमार ने सब देवताओं को साथ लेकर असुरों के मार्ग अवरुद्ध कर लिये। तारकासुर भी युद्ध के लिए उद्यत हो गया। भयंकर संग्राम छिड़ गया। कुमार सिंह की भांति सेना का संहार करने लगे। पिनाक धनुष लेकर उन्होंने असुरों पर प्रहार किया। जो लड़ने आये उन्हें बाणों से मार डाला गया और जो बच गये वे शरणागत बन कर रहे। इस प्रकार कुमार ने देवों को दैत्यों के बंधन से छुड़ाया। इस विजय की खुशी में जय के नारे लगे बधाइयाँ बटीं और घर-घर में महोत्सव मनाये गये।

वेलि की कथा का आधार

वेलि में वर्णित प्रायः सभी उपकथायें शिवपुराण में उपलब्ध हैं। वैसे भी ये कथायें भारतीय हिन्दू परिवारों की सुपरिचित हैं। संक्षेप में वेलि में निम्नांकित उपकथायें हैं—

१ राजा सगर का अश्वमेध उनके साठ हजार पुत्रों द्वारा कपिल मुनि को यातना देना मुनि का शाप व वरदान राजा भागीरथ का तप तथा गंगावतरण।

२ ब्रह्मा की उत्पत्ति ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का प्रारंभ तथा गंगापुर में राजा दक्ष की पुत्री सती का शिव से विवाह।

३ दक्ष का यज्ञ करना शिव को छोड़कर सभी को आमंत्रण शिव के मना करने पर भी सती का पितृगृह जाना वहाँ अनादर पाकर

यज्ञाग्नि मे कूद कर प्राण-त्याग करना, शिव के गणो द्वारा युद्ध, भृगु द्वारा यज्ञ मे मे पैदा किए हुए वीरो द्वारा मुकावला, गणो का पलायन, शिव का क्रोध, जटा मे से वीरभद्र की उत्पत्ति, वीरभद्र द्वारा यज्ञ-विध्वस, दक्ष की मृत्यु । शिव द्वारा दक्ष को वकरे का मस्तक देकर जीवनदान, तथा सती की राख लेकर शिव द्वारा हिमालय के समीप डाला जाना ।

४ हिमालय द्वारा पर्वत-शिखर पर पार्वती को पाना, नारद से विवाह के लिए सलाह लेना, उनका शिव की आराधना करके उन्हे वर रूप मे प्राप्त करने की सलाह देना, शिव की समाधि तोडने के लिए कामदेव का साहस तथा उसका भस्म होना, पार्वती की तपस्या से शिव का प्रसन्न होना और विवाह करना ।

५ विवाह के वाद समय पाकर कुमार कार्तिकेय की उत्पत्ति, देवो द्वारा तारकासुर–वध के लिए कार्तिकेय को सेनापति के रूप मे मागने के लिए शिव के पास जाना तथा कार्तिकेय द्वारा तारकासुर का वध ।

यह सक्षिप्त सा कथानक शिव के सभी श्रद्धालु भक्तो का जाना–पहिचाना है । शिवपुराण मे उपयुक्त कथायें विस्तारपूर्वक कही गई हैं, पर हमारे कवि को केवल उनका गुणानुवाद ही अभीष्ट था, अत वे विस्तार मे नही गए हैं । कवि को वस्तु, रूप, शृङ्गार आदि का वर्णन ही अधिक प्रिय होने के कारण कथा को केवल निमित्त ही बनाया गया है । कही कही कथा को आगे वढाने की शीघ्रता मे वह कथाशो का यथेष्ट सवध भी नही जोड पाया है । फिर भी कुल मिलाकर उसके कथानक–नियोजन को दोषपूर्ण नही कहा जा सकता । पर, इतनी वडी कथा को समेटने की चेष्टा मे वे मानवीय स्थल अछूते अवश्य रह गये हैं जिन पर कवि अपनी कुशल लेखनी का चमत्कार दिखा सकता था । शिव सवधी कथायें इतनी अधिक हैं कि उन्हें काव्यबद्ध करने के लिए पर्याप्त कलेवर चाहिए । कालिदास को भी कुमारसभव मे प्रस्तुत ग्र थ से कितने ही अधिक छद रचने पडे थे । कुमार-जन्म के साथ ही हमारे ग्र थ का

कथानक समाप्त होता है। तारकासुरवध के मंगल कार्य से ग्रन्थ की इति भी भारतीय लोक-कल्याण-परम्परा के अनुकूल ही है।

लेखक और रचना-काल

जैसा कि पहले कहा जा चुका है *महादेव पार्वती री वेलि* की अद्यावधि केवल दो प्रति उपलब्ध हैं। एक तो अनूप संस्कृत पुस्तकालय के राजस्थानी ग्रन्थों के सूचीपत्र की प्रति संख्या ६८ और दूसरी मेरे निजी संग्रह की। अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति के अंत में कोई पुष्पिका न होने के कारण यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता की उसका लिपि-संवत् क्या है। रचना संवत् का तो कहीं उल्लेख है ही नहीं। पर जिस गुटके में यह रचना मिलती है उसका कुछ अंश संवत् १७ २ में लिखा गया था। इसलिए यह अनुमान लगाया जा सकता है की अन्य रचनाएँ भी १७ २ के आस-पास लिखी गई होंगी। मेरे संग्रह की प्रति का लिपि संवत् १७२ है। दोनों प्रतियों में कुछ भी पाठ-भेद न होने के कारण ये दोनों प्रतियाँ एक ही मूल प्रति से नकल की गई प्रतीत होती हैं। ऐसा भी हो सकता है कि मेरे संग्रह की प्रति अनूप संस्कृत पुस्तकालय की प्रति से नकल की गई हो क्योंकि यह भी बीकानेर में ही लिपिबद्ध की गई थी।

इस प्रकार वेलि का लिपिकाल १७ के आस-पास तय हो जाने पर भी उसके रचनाकाल की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहती है। राजस्थानी साहित्य के इतिहासकारों में डा० मेनारिया ने तो इसकी कोई चर्चा अपने ग्रन्थ में नहीं की पर श्री नरोत्तमदास स्वामी ने इसे भाखा किसना की लिखी हुई और डा० हीरालाल माहेश्वरी ने किसी चारणेतर व जैनेतर कवि-संभवतः ब्राह्मण-द्वारा रची गई माना है।

यह स्पष्ट है कि जैसा कि श्री नरोत्तमदास स्वामी ने भी 'राजस्थानी साहित्य एक परिचय' नामक अपनी पुस्तक के पृष्ठ १ पर लिखा है, यह ग्रन्थ राठौड़ पिरीथराज कृत वेलि की स्पर्धा में ही लिखा गया है। इस

सर्वथा पुष्ट अनुमान के आधार पर यह माना जा सकता है कि इस ग्रन्थ की रचना प्रिथीराज की वेलि की रचनाकाल के वाद ही हुई है। प्रिथीराज कृत वेलि का रचनाकाल विविध विद्वानो की पृथक्-पृथक् धारणाओ के अनुसार सवत् १६३६ से १६४४ के वीच रखा गया है। अत प्रस्तुत वेलि की रचना सवत् १६३६ से १६४४ के वाद और सवत् १७०३ के वीच के समय मे हुई होगी, क्योकि हम इसे प्रिथीराज की वेलि की स्पर्धा मे रची गई कृति मानते हैं।

प्रिथीराज की मृत्यु १६५७ के आस-पास मानी गई है। उनकी वेलि को प्रशसा मे कहे गये अनेक छद तथा वेलि की जो अनेक टीकायें उपलब्ध हैं उनमे चारण कवि लाखाजी रचित सर्वप्रथम टीका की प्राचीनतम प्रति सवत् १६७३ की मिलती है। लाखाजी की मृत्यु का सही सवत् ज्ञात न होने के कारण यदि हम यह मान लें कि प्रिथिराज की वेलि १६७३ तक पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी थी तो हमारी वेलि का रचना-काल सवत् १६७३ के वाद ही मानना ठीक रहेगा। पर चारण कवि दुरसा आढा कृत तथा एकाध और छद जिन प्रतियो मे प्राप्त हैं उनमे सबसे प्राचीन का सवत् १६६९ मिलता है। चूँकि प्रिथीराजकृत वेलि की प्रसिद्धि से प्रभावित होकर ही कवि ने इस वेलि की रचना का विचार किया होगा, अत १६६९ से १७०३ के वीच के ३५ वर्षों मे ही प्रस्तुत वेलि रची गई होगी। वैसे इस सबध मे सोलहो आना सही वात लिख सकना प्रमाणों के अभाव मे बडा दुष्कर कार्य है। पर, जो अनुमान लगाया गया है उसे अनुचित नही कहा जा सकता।

प्रचलित धारणाओ के अनुसार प्रिथीराज के जीवनकाल मे ही उनकी वेलि को प्रर्याप्त यश मिल चुका था। यदि इसके आधार पर सोचा जाये तो प्रिथीराज की वेलि के रचनाकाल (१६३६ से १६४४) से लेकर प्रस्तुत वेलि के लिपिकाल (१७०३) के बीच का समय हमारी वेलि की रचना का समय माना जाना चाहिए।

प्रस्तुत वेलि के अन्त में 'किसनउ कहइ किसन द्रिम कीजइ' इतने से पर्याप्त से 'किसनउ' नामक किसी कवि का बोध होता है। कई विद्वानों ने उस समय के ज्ञात व जीवित कवियों की सूची टटोल कर दुरसाजी आढा के पुत्र किसनाजी आढा को इस रचना का श्रेय दिया है। दुरसाजी ने प्रिथीराज की वेलि की प्रशंसा में छंद लिखा है इसलिए उनके पुत्र की इस विषय की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया का अनुमान लगाया जा सकता है। किंवदन्तियों के आधार पर अकबर के दरबार में दुरसा तथा प्रिथीराज का मिलन भी संभाव्य है ही। इस अनुमान को न मान सकने के लिए हमारे पास कोई पुष्ट और अकाट्य तर्क तो नहीं है पर राजस्थानी साहित्य के सभी कवियों के नामों का पता लगाने का हमारा प्रयास इतना स्वल्प रहा है कि हम यह निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि उस समय किसना नामक अन्य कोई कवि विद्यमान नहीं थे।

दूसरे, प्रस्तुत ग्रंथ की कोई भी प्रति बीकानेर के सिवाय और कहीं भी उपलब्ध नहीं हुई है। दोनों प्रतियां बीकानेर की ही हैं। प्रस्तुत वेलि का उल्लेख भी कहीं अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। दुरसाजी के वंशजों के यहां इसकी कोई प्रति है या नहीं इसका भी पता नहीं है। ऐसी स्थिति में हम न तो आढा किसना को ही दावे के साथ इस ग्रंथ का लेखक मान सकते हैं और न निश्चयपूर्वक उसे मानने से इनकार ही कर सकते हैं।

प्रायः राजस्थानी कवियों ने भारतीय परम्परा के अनुसार अपने ग्रंथों में अपना इतिवृत्त देने में रुचि नहीं दिखाई है जिसके अभाव में ऐसी अनेक गुत्थियां उलझी ही रह जाती हैं।

डा. हीरालाल माहेश्वरी ने कवि को जैन शैली से प्रभावित ब्राह्मण जाति का मानने की संभावना की है। पर राजस्थानी के ज्ञात इतिहास में ऐसे समर्थ चारणेतर कवियों के दृष्टांत बहुत कम हैं। जहां तक जैन शैली का प्रश्न है उस विषय में लिपिकार द्वारा उत्पन्न भ्रम ही प्रधान कारण हो सकता है। यथार्थ में जैन कवियों ने जैनेतर विषयों पर लिखते हुए भी अपनी लोकभाषा को छोड़ा नहीं है। एकाध विशुद्ध डिंगल गीतों के अति

रिक्त उनकी रचनाओ मे उनकी विशिष्ट शैली छिपी नही रह पाती। अत प्रस्तुत वेलि पर जैन शैली का प्रभाव मानना हमारी समझ मे ठीक नही होगा। अन्य चारणेतर कवियो की भी इस कोटि की रचनायें न होने के समान ही दीखती हैं। और फिर इसे चारण कृति न मान सकने के कोई पुष्ट आधार भी हमारे पास नही है। अत यह तो सर्वथा उचित है कि इसे चारण कृति ही माना जाय, पर श्रेय आढा किसना को दिया जाय अथवा किसी अन्य किसना नामक चारण कवि को, जो अज्ञात रूप से ही कही हाथलिखी पोथियो के पृष्ठो मे खोये पडे हैं ? अनुमान रूप मे मैं 'किसनो बीठू' नामक एक और कवि का नाम प्रस्तुत करता हू जो बीकानेर मे रायसिह के समय मे थे तथा जिन्होंने रायसिह की प्रशसा मे गीत भी लिखा है। बीठू कवियो का बीकानेर से विशेष सपर्क देखकर तथा वेलि के अनुमानित रचना-काल के समय मे ही होने के कारण यह नाम भी विचारणीय है।

शिव-पार्वती संबंधी अन्य राजस्थानी ग्रथ

राजस्थान अनेक विध भक्ति-सप्रदायो का गढ रहा है। शैव, वैष्णव, (राम व कृष्ण), नाथ, दादूपथी, रामस्नेही, निरजनी, कबीरपथी आदि बीसो मत-मतातरो के सत यहा हुए है। इन सभी सप्रदायो के श्रद्धालुओ ने अपने-अपने ईष्ट देवो की प्रशसा मे रचनायें की हैं। पर, भारतीय साहित्य मे शैव और वैष्णव दो बडे और प्रधान धर्म माने गए है। जयपुर मे शैवो और वैष्णवो के बीच जो द्वन्द्व हुआ वह राजस्थान मे प्रसिद्ध है।

राजस्थानी साहित्य मे जहाँ राम और कृष्ण विषयक अनेक रचनायें मिलती हैं वहा शिव विषयक रचनाओ का भी अभाव नही है। पर, शिव-विवाह से सबधित रचनाओ के अधिक नाम ज्ञात नही है। आईदान गाडण कृत शिवपुराण, तथा किसी अख्यात लोक कवि का बनाया हुआ 'पार्वती मगल' हमे ज्ञात है। शिव विषयक कथानको मे विवाह का प्रसग ही अधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय हो पाया है। रामायण और महाभारत की भाति

लोक-प्रचलित ग्रंथ न होने के कारण भी कवियों और लेखकों ने इस ओर कम ध्यान दिया होगा।

भाषा और छन्द

वेलि की भाषा मध्यकालीन राजस्थानी काव्य-ग्रंथों में प्रयुक्त साधारण भाषा से मेल खाती हुई ही है। खोजने से भी ऐसा कोई शब्द नहीं मिलता जो तत्कालीन काव्य-ग्रंथों में अप्राप्य हो।

कुछ ऐसे प्रयोग अवश्य दृष्टिगोचर होते हैं जो सार्वदेशिक न हो कर स्थानीय प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थ—ईमड उम्मड़—जैसे प्रयोग बीकानेर शहर में रहने वालों की बोलचाल के से हैं।

कवि ने अनेक स्थानों पर छंद-पूर्ति के लिए 'ताइ' शब्द का निरर्थक प्रयोग भी किया है, जो कहीं-कहीं तो बहुत ही अटपटा सा लगता है।

वेलियो' नामक छंद के लक्षण प्रस्तुत ग्रंथ में सभी स्थानों पर खरे नहीं उतरते हैं। लिखित रूप में अनेक स्थानों पर कम अधिक मात्रायें हैं, जिसका कारण शायद यही हो सकता है कि लेखक ने मौखिक रूप में कहीं ठीक बनाया हो और लिपिकार ने ठीक न लिखा हो। कारण कुछ भी हो यह दोष स्थान-स्थान पर खटकता है। प्रस्तुत ग्रंथ की ही तरह अन्य वेलियों में भी तथा प्रिथीराज की वेलि में भी ऐसे अनेक स्थल हैं जहां वेलियो गीत के लक्षण पूरे नहीं उतरते। प्रिथीराज जैसे सिद्धहस्त माने जाने वाले कवि के ग्रंथ में भी ऐसी स्थिति होने से यह अनुमान हो जाता है कि प्रबंध-काव्यों में छंद-विधान का इतनी कड़ाई से पालन शायद नहीं होता होगा।

छंदों की इस स्थिति में अनेक स्थानों पर सुधार संभव होने पर भी मैंने कहीं ज्यों का त्यों ही रखना ठीक समझा क्योंकि वैसा करने में मूल पाठ में अंतर पड़ता जो शायद उचित नहीं होता। दूसरे, पाठ-भेदों के अभाव में ऐसा करना ठीक भी नहीं रहता। मैं सदा इस सिद्धांत को

मानता आया हूँ कि प्राचीन ग्रथो का शुद्ध और सही पाठ तथा उनमे प्रयुक्त छदों का भी सही रूप ही दिया जाना चाहिये। ऐसा करते समय मूल अशुद्ध पाठ को नीचे पाद टिप्पणियो के रूप मे दे दिया जाना चाहिये। पर यह सारा कार्य अत्यत श्रमसाध्य होने के साथ ही ग्र थ की अनेक हस्त-प्रतियो की अपेक्षा रखता है, ताकि पाठ-शुद्धि करते समय मूल रचना के साथ न्याय किया जा सके।

प्राचीन राजस्थानी के अइ, अउ आदि रूपो के साथ ही ऐ, ओ व औ रूप भी काव्य में प्राप्त हैं, जिनसे प्रतीत होता है नि सतरहवी सदी के अत मे उन प्राचीन रूपो का स्थान ये नवीन रूप लेने लग गए थे। इस विपय मे मेरी एक और धारणा भी है। अनेक ग्र थो मे मैने यह ध्यान-पूर्वक देखा है कि जैन लिपिकारो ने उन्हे प्राचीन रूप मे लिखने का प्रयास किया है। जिस प्रकार सस्कृतज्ञ लिपिक राजस्थानी आदि देशी भापाओ की रचनाओ में देशी शब्दो के स्थान पर शुद्ध तत्सम शब्द रखने की चेष्टा करते हैं, तथा गावो, नगरो व राजाओ आदि के नामो को सस्कृत मे ढालने का प्रयत्न करते हैं, उसी प्रकार जैन लिपिकार भी प्राय ग्र थो को जैन शैली मे लिखने का प्रयास करते देखे गये हैं। पुराने ग्र थो की तो वात ही छोडिये, वे अपेक्षाकृत नई रचनाओ के साथ भी यही व्यवहार करते हैं।

ऐसा करने मे साधारण तौर पर पाठको को रचनाओ के अधिक प्राचीन होने का भ्रम हो जाता हैं। मेरे सग्रह की 'वेलि' की प्रति का लिपिकार भी अक्षरो की वनावट आदि से जैन मालूम होता है, अत उसने भी प्रस्तुत ग्र थ मे अइ, अउ आदि रूप देने का प्रयास किया मालूम होता है। पर, उस समय काव्य मे ऐसे प्रयोग प्रचलित भी थे इससे इनकार नही किया जा सकता।

काव्य-सौन्दर्य

वेलिकार ने ग्र थ मे प्रधानत शृ गार, वीर और भक्ति का चित्रण किया है। कैलाश पर्वत के प्रसङ्ग मे कुछ प्रकृति-वर्णन भी किया गया

है। शायद इसी प्रसङ्ग को पढ़ कर 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' के लेखक डाक्टर हीरालाल माहेश्वरी ने उसे 'उत्कृष्ट कोटि की रचना प्रकृति का हृदयग्राही वर्णन शैलि परम्परा की अंतिम प्रौढ़ कृति' कह कर संबोधित किया है। वैसे प्रकृति-वर्णन परम्परागत और नाममात्र का ही है।

कवि को प्रस्तुत ग्रंथ की रचना में यदि किसी बात का श्रेय दिया जा सकता है तो वह विस्तृत शृङ्गार के वर्णन का ही है। इस वर्णन के दो प्रसंग काव्य में उपस्थित हुए हैं। दोनों ही सती तथा पार्वती से शिव के विवाह से संबंध रखते हैं। इस शृङ्गार-वर्णन में कवि ने जहाँ षोडस शृंगार की परम्परा का निर्वाह किया है वहीं कुछ नई उपमाओं और मौलिक उद्भावनाओं से उसे विशिष्टता भी प्रदान की है।

सती के रूप का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि निमिष-निमिष में उसके रूप की कान्ति इस प्रकार बढ़ रही थी मानो प्रभात में सूर्य धीरे धीरे उदित हो रहा हो। उसकी पलकनियाँ बीरबहूटी की तरह अविरल वर्णों की थीं। उसकी गौर जंघायें चित्रकार द्वारा चित्र में चित्रित स्वर्ण स्तम्भ की भांति सुशोभित थीं। उसके कुचाग्र अंधाकार देव-शिखरों की झलकती हुई नोक की तरह थे। उसके कोरे नए नख ऐसे प्रतीत होते थे मानो कुंदन में से कोर कर बनाये गए हों।

इसी प्रकार पार्वती का शृङ्गार वर्णन करते हुए भी कवि ने अनेक मौलिक कल्पनायें की हैं। पार्वती की पायल का स्वर इतना सुखद और गम्भीर था मानो भाद्रपद मास में समुद्र का गर्जन अथवा पर्वत-शिखर पर बादलों की विद्युत मिश्रित गरज हो। सिंहल द्वीप के हाथियों के दांतों से बनाया हुआ उसका अत्यंत हलका चूड़ा देखने पर ऐसा लगता था मानो मानसरोवर के हंस हों। उसके हाथों में कंगन ऐसा प्रतीत होता था मानों सूर्य के चारों ओर सूर्य चढ़ दिये गए हों तथा कंगन सहित उसका हाथ भी सुशोभित होता था मानों कमल के चारों ओर कुंदन के कंगूरे कर

दिये गये हो । रेशमी चोली से कसे हुए उसके उभरे हुए कुच मानो अमृत के पात्र थे जिन्हे प्रियतम के लिए भली भाति ढक कर रख छोडा था । हार के मोतियों पर हीरो की पक्ति इस प्रकार जडी हुई थी मानो गगा अपने उज्ज्वल जल को लेकर समुद्र मे मिल रही हो । कानो मे जवाहरो से जडे हुए कु डल ऐसे प्रतीत हुए मानो सूर्य के चारो ओर नक्षत्र जड दिये गए हो ।

स्त्री-सौन्दर्य और लालित्य के वर्णन मे कवि की क्षमता का परिचय देने वाला एक और स्थल भी है जहा उसने वडा मनमोहक दृश्य उपस्थित किया है । वर को देखने के लिए घरो की छतो पर चढी हुई पुरनारियो का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वे सु दरिया ऐसी प्रतीत हुई मानो ज्वालानल को मथ कर यज्ञ की अग्नि-शिखायें निकाली गई हो । जो सु दरिया झरोखो मे से मु ँह निकाल कर देख रही थी वे गवाक्ष रूपी सरोवरो मे खिले कमलो की तरह लगती थी, जिन पर लोचनो रूपी भ्रमर वैठे हुए थे । अनेक काम छोड कर वे कुलवधुयें जब वरयात्रा को देखने दौडी तो आलक्तक से चित्रित उनके चरणो से घरो के आगनो मे सु दर चित्र चित्रित होगए । कई सु दरियाँ प्रियतम का सान्निध्य छोड कर, केलि-क्रीडा मे पकडी हुई अपनी वाह छुडा कर, एक हाथ से कटि-मेखला को सँभाले, शीघ्रतावश अलट-पलट कर चीर ओढती हुई और क्रीडा मे विखरे हुए आभरणो के कारण ध्वनिहीन गति से वर को देखने के लिए वासगृहो पर तेजी से चढी ।

इतना सूक्ष्म और सरस वर्णन एक वार तो उन महाकवियो का स्मरण करा देता है जिन्होने अत्यत उच्चकोटि के शृ गार-वर्णन से सस्कृत साहित्य को श्रीसम्पन्न किया है । ऐसे स्थलो को पढ कर ऐसा लगता है कि कवि लम्बे चौडे कथानक को इन चारसौ के लगभग छदो मे वाधने का प्रयत्न न कर शिव पार्वती के शृ गार का विशद वर्णन करता तो यह काव्य निश्चय ही एक अति उच्चकोटि की रचना कहलाता ।

शृंगार-वर्णन के दूसरे नंबर पर युद्ध-वर्णन के प्रसंग हैं। पर, इनमें कवि का मन रम नहीं पाया है। मध्ययुगीन कवि के संस्कारवश उसने परंपरागत वर्णन अवश्य कर दिया है पर उसमें कोई मौलिकता दिखाई नहीं देती। तलवारों से मुण्ड कट रहे हैं, धड़ पृथ्वी पर लोट रहे हैं रक्त की नदियाँ बह रही हैं योगिनियाँ खप्पर भर रही हैं और अप्सराएँ वीरों का वरण करने के लिए निरंतर नृत्य कर रही हैं। सिंधु राग बज रहा है, सारा ब्रह्माण्ड तथा सातों पाताल संकम्पित हो रहे हैं और शेष नाग भी काँप उठे हैं।

तुछ जल ज्यांही माछळा तड़फड़
भड़ तड़फड़ तिण विध भाराथ

अल्पजल मछलियों से आहत अथवा शक्तिहीन वीरों के धड़ों के तड़फने की तुलना तड़फने की क्रिया के साम्य तक तो ठीक है पर इससे वीरों के वीरत्व में वृद्धि नहीं होती। प्रायः परंपरागत युद्ध-वर्णन से ही कवि ने काम चलाया है। भाषा पर अच्छा अधिकार होने के कारण वह युद्धोचित शब्दावलि अवश्य जुटा पाया है, जिससे वर्णनान्तर्गत विषयान्तर का तुरंत आभास हो जाता है। शिव के गण वीरभद्र का भयंकर युद्ध कवि के लिए अपना कौशल दिखाने का बड़ा प्रभावोत्पादक स्थल हो सकता था पर ऐसा वर्णन उनकी रुचि से मेल खाता प्रतीत नहीं होता।

युद्ध वर्णन की ही तरह भक्ति-वर्णन का हाल है। अपने इष्ट देव के प्रति भरपूर श्रद्धा रखते हुए भी वह इस विषय का भी कोई विशिष्ट वर्णन नहीं कर पाया। गोपीश्वर शिव की प्रशंसा में कही गई सैकड़ों पुराणावलियों में से कुछ का उल्लेख ही वह कर सका है। प्रारम्भ के तैंतीस छंदों के अतिरिक्त अन्य अनेक स्थलों पर भी शिव के प्रति अपनी स्वाभाविक श्रद्धा का परिचय देने के लिए कवि ने उनके गुणों का बखान किया है, पर उनसे उनके इष्टदेव के प्रति पाठक को कोई विशेष आकर्षण नहीं प्रतीत होता।

उपर्युक्त के अतिरिक्त प्रकृति-वर्णन तथा सामान्य शोभा व उत्साह आदि के वर्णन भी कवि ने किये हैं, जिनमे उसे अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। शिव की वारात के समय नदी का शृंगार, वारात का प्रस्थान, कैलाश पर्वत की शोभा, नदी, नालो और वृक्षो का सौन्दर्य—इन सब मे उसका मन उलझता रहा है। इसमे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वेलि का कवि जीवन के ललित पक्ष मे जीने वाला था। क्रिसन रुकमरणी री वेलि के लेखक की स्पर्धा करने का प्रयत्न उसने किया अवश्य, पर वह उन ऊचाइयो तक पहुँच नही पाया। उसका मन वाहरी रूप-शृंगार और साज-सज्जा पर ही मँडरा कर रह गया है। काव्य के पात्रो की आत्मा मे उतर कर गहराइयो मे टटोलने का प्रयत्न उसने नही किया।

उपसंहार

इस भूमिका का उपसहार करते हुए मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि मैं इस सपादन मे अपेक्षित श्रम नही कर पाया हूँ। श्रम के अभाव मे इस प्रकार के ग्र थो के साथ पूरा न्याय कर सकना दुष्कर है। पर, आज की भागदौड के जमाने मे उस श्रम का अवकाश कव मिल पाये या नही, इसी विचार से जो कुछ वन पडा प्रस्तुत कर दिया है। इमसे और कुछ नही तो एक उपकार तो अवश्य होने की सभावना है। जिन विद्वानो को इस विषय का अधिक ज्ञान है, और जो साधिकार कुछ विशिष्ट सूचना देने की स्थिति मे हैं, वे मेरी गलतियो को सुधार सकेंगे और मुझ से न बन सकने वाला कार्य पूरा कर सकेंगे।

ग्र थ के मुद्रण मे अनेक अशुद्धियाँ भी रह गई हैं, जिन्हें भी इस समय न सुधार कर किसी अगले सस्करण मे पाठ-शुद्धि के साथ ही सुधारने का विचार करके ज्यो का त्यो छोड दिया है। प्राचीन ग्र थो के सपादन का कार्य वडी शाति, श्रम और साधनो की अपेक्षा रखता है, जिनके जुटने से ही यथेष्ट कार्य सम्पन्न हो सकता है।

मीरा मार्ग, बनी पार्क
जयपुर

—रावत सारस्वत

महादेव पारवती री वेलि

महादेव पारवती री वेलि

परमेसर सरसतो परमगुरु,
करा प्रणाम सजोडि कर ।
दीनदयाल दया दाखीजइ,
हेत घणइ गाइजइ हरि ॥ १ ॥

परमेश्वर, सरस्वती और बड़े गुरू (शिव) को हाथ जोड़ कर प्रणाम करे । दीनदयाल (शिव) की दया का बखान किया जाय । अधिक हेत से हर (शिव) का गायन किया जाय ।

सिव सकति तणी (ताइ) वेलि वर्णविसु,
सफळ जनम करिवा ससार ।
बावन अख्यर तणी जड बाधी,
वसुधा अचळ हुवउ विस्तार ॥ २ ॥

ससार मे जन्म सफल करने के लिए शिव और शक्ति की 'वेलि' (वेलियो छद मे लिखित काव्य) का वर्णन करू गा । जिन्होंने (शिव-शक्ति ने) बावन अक्षरों (वर्णमाला) की जड़ बाधी, पृथ्वी पर जो (बावन अक्षर) अचल होकर विस्तार को प्राप्त हुए । (अथवा-इस वेलि की जड बावन अक्षरों से बाधी है । पृथ्वी पर यह अचल होकर विस्तृत हो ।)

हरि कहइ जिके करि भाय घणइ हित
घासां तियां तणउ हू दास ।
वरणविजइ ईसर वरदायक
आसा वधण पूरवण हास ॥ ३ ॥

जो भावपूर्वक बड़े प्रेम से हर (शिव) का नाम लेते हैं उनका मैं दासानुदास हूं। (अब) आशाओं को बढ़ाने वाले और पूरी करने वाले वरदाता ईश्वर (शिव) का वर्णन किया जाय।

धरणीधर शंकर देव धियावउ
जोतिप्रकाश अलोप जग ।
मस्तक मुगट प्रकाश मांडियउ
अनत कोट ब्रहमंड लग ॥ ४ ॥

धरती को धारण करने वाले शंकर देव का ध्यान करो जिनकी ज्योति का प्रकाश संसार में अलुप्त रहता है (सदैव प्रकाश मान है।) जिनके मस्तक पर प्रकाश का मुकुट अनंत कोटि ब्रह्मांडों तक सुशोभित है।

जग पुढि(ताइ)जइ रउ नाम जपतां,
आंवण जांण नहीं भय भ्रत ।
नितकउ हुवइ जोग नउ नवलउ
घणा जुग वउळिया अनत ॥ ५ ॥

पृथ्वीतल पर जिसका नाम जपते रहने से सांसारिक आवागमन से छुटकारा मिलता है अनेक अनंत युग बीत जाने पर भी जिसका योग (चमत्कार महत्व) नित्य नवनवीन होता है।

आसति गति नाथ अजोणी अधिकी,
खसतो घणा दईता खाइ ।
बाली वेस कछोटइ बाधइ,
जुग जावइ तउहि दिन न जाइ ॥ ६ ॥

हे अयोनि ! (उत्पत्तिरहित) स्वामी, तुम्हारी शक्ति और गति बहुत अधिक है। तुम युद्ध करते हुए बहुत से दैत्यों का नाश करते हो। तुम्हारी उम्र छोटी है और लगोटी बाधते हो। युग बीत जाते हैं फिर भी तुम्हारा एक दिन भी नहीं बीतता।

आखइ तो पिता नही ईसर,
पुणइ अनेरी तूझ परि ।
रमाडियउ न रग भरि रामा,
धवराडियउ न गोद धरि ॥ ७ ॥

हे ईश्वर (शिव)! कहते हैं तुम्हारा कोई पिता नहीं है। अनेक भाति से तुम्हारा बखान किया जाता है। (किसी भी) स्त्री ने तुम्हें प्रेमपूर्वक (पुत्रवत्) नहीं खिलाया (और) न गोद में बिठा कर दुलराया ही।

उतपति कूण लहइ तो ईसर,
ए मानविया हुवइ अचभ ।
आद अनाद तणउ त् आछइ,
सभवनाथ नीसरइ सभ ॥ ८ ॥

हे ईश्वर, तुम्हारी उत्पत्ति (का भेद) कौन जाने ! मानवों के लिए यह आश्चर्य (का विषय) है। आदि-अनादि काल से तुम विद्यमान हो। हे सृष्टि के स्वामी (तुम्हीं से सारी) सृष्टि उत्पन्न हुई है।

तूं उपजइ न खपइ नहु भाइस
कुळ न कहइ कहियइ उकळीणए ।
मीनउ नादि विनोद महामढि
वृषभ चढइ वइ धावइ वीणए ॥ ९ ॥

हे भाइस (योगी) ! तुम न तो पैदा होते हो और न मरते हो। (तुम्हारा कोई) कुल नहीं कहा जाता (तुम) अकुलीन बताये जाते हो। हे महान् योद्धा ! विनोद के नाद में भीने हुए (मौज-मस्ती में रंगे हुए तुम) बैल पर चढ़े हुए भी वीणा बजाते रहते हो।

अधिकी छत्र अधिकी साइ आसत
वाचासूर न चूकइ वाच ।
सीह धमल वे चरइ सामठा
साचा देव तुहारइ साच ॥१०॥

तुम्हारी महिमा (प्रताप) अधिक है तुम्हारी शक्ति (करामात) अधिक है। हे वचन-शूर ! (वचन को पूरा करने वाले) तुम्हारा वचन कभी झूठा नहीं होता। हे सच्चे देवता तुम्हारे सत्य के बल से सिंह और बैल दोनों एकत्र विचरण करते हैं।

पग ऊमल विषइ पदम विराजइ
आंगमियां पाखडी अतूप ।
आयस नको नको जनमिस्यइ
रुद्र पा पार लहइ तउ रूप ॥११॥

तुम्हारे पवित्र पगों में कमल शोभायमान है और अंगुलियाँ (उस कमल की) अनुपम पंखुड़ियाँ हैं। रुद्र (शिव) के रूप का जो पार पा सके ऐसा न तो कोई जन्मा है और न जन्म लेगा ही।

एकीकइ रोम ऊपरइ ईसर,
माडिया कोट अनत ब्रहमड ।
सायर सात दिपइ परिदक्षिण,
डबर चा अबर धजडड ॥१२॥

हे ईश्वर! तुम्हारे एक-एक रोम पर अनत कोटि ब्रह्माण्ड शोभायमान है (अथवा–टिके हुए हैं)। सातों समुद्र तुम्हारे चारों ओर दीप्त हैं। तुम्हारे माहात्म्य का ध्वज-दड आकाश से लगा है।

बीजा सुर खपइ ऊपजइ बाझइ,
धुरा लगइ अवचळ अवधूत ।
चाढइ ब्रह्म तणी चाचर री,
बीजी चाढइ नही बभूत ॥१३॥

दूसरे देवता उत्पन्न होते हैं, वृद्धि को प्रप्त होते हैं और नष्ट होते हैं, पर योगी (शिव) सृष्टि के अत तक अविचल ही रहते हैं। (वे) श्मसान की राख ही (अगों पर) लगाते हैं, दूसरी कोई राख नहीं लगाते।

उडियाणी कसी मेखळी ऊपरि,
काख अधारी डड कर ।
भल दीसइ फाबियउ विसभर,
सिहरा छायउ मानसर ॥१४॥

'उड्डीयान' आसन लगाये हुए, मेखली (चोगा) पहिने हुए, बगल में अधारी (योगियों द्वारा रखी जाने वाली टिकटी) और हाथ मे डडा लिए हुए विश्वभर (शिव) (कैलाश के) शिखरों पर मानसरोवर के पास सुशोभित दिखाई देते हैं।

सींगी ताइ षठ एहवी सोहद,
झिमळ विप्र जोवतां निगेम ।
साळह् ताइ सात सावन मई
पइरोजइ जडिया कर प्रेम ॥१५॥

वेदाध्ययन करने वाले ब्राह्मण की तरह पवित्र (उनके) कण्ठ में सिंगी इस प्रकार शोभायमान है (मानो) सोलह दाम विप गए (अत्यंत उज्ज्वल) सोने में प्रेमपूर्वक (कुशलतापूर्वक) फीरोजा (रत्न विशेष) जड़ दिया गया हो ।

भरिया घा सूर भयंकर भारथ
करता पुरुष प्रणाम करइ ।
उर ईसवर सगइ ताइ ऊपर
रंडमाळ झिलती रहइ ॥१६॥

भयंकर रूप से भिड़ने वाले युद्ध में लड़ने वाले वीर पुरुष (जिन्हें) प्रणाम करते हैं उन ईश्वर (शिव) के वक्षस्थल पर मुण्डमाल सुशोभित है ।

वासिग रउ कांठलउ विराजइ
सहस करइ फुण गिलण सति ।
जग बारां भावीतां जिसडौ
तेज तपइ मुणि सावरति ॥१७॥

वासुकि (नाग) कण्ठहार (रूप में) विराजमान है (जो) सहस्र फनों से सच्ची स्तुति कर रहा है । बारह आदित्यों के तुल्य उनका तेज जगत में प्रकाशित है ।

मणारभ मथे काढियउ माहव,
जहर इतउ किण बीजइ जरइ ।
ईसर तो सरणइ ऊवरजइ,
तिण वेळा समरीयउ तरइ ॥१८॥

समुद्रमन्थन कर के माधव द्वारा निकाले गए इतने विष को दूसरा और कौन पचा सकता था ? तब, ऐसे समय मे, तुम्हारा स्मरण करके, तुम्हारी शरण मे जाने पर ही उद्धार हुआ। (अथवा–ऐसे (सकट के) समय स्मरण करने वाले का उद्धार हो जाता है।)

थरहरिया भुवण त्रिण्हे विथका भडि,
धरजइ वृष सोई नही धर ।
ईसर तो सरणइ ऊवरिजइ,
हरिसकर समरीयो हर ॥१९॥

तीनों भुवन कॉप उठे, (समुद्रमन्थन करने वाले) वीर चकित हुए (हार मान गए, दुखी हो गए), विष (तरल रूप में) तीव्रता के कारण) उफन रहा है, जिसे धारण करने वाला कोई नहीं, (अथवा थके हुए वीर भी काप रहे हैं, विष को धारण करे ऐसा कोई नहीं) । (ऐसे समय) विष्णु ने शिव का स्मरण किया। हे ईश्वर ! तुम्हारी शरण में जाने पर ही उद्धार हुआ।

पाताळ अनइ (अ) मृतलोक आदीपुरि,
हेकाहेक मनइ सह हार ।
वृषधारी आखियउ विसभर,
दसमउ वृष राखियउ दुवार ॥२०॥

पाताल, मृत्युलोक और स्वर्ग सभी ने एक-एक कर के हार मान ली। विश्वभर (शिव) को ही विष धारण करने मे समर्थ कहा गया। (उन्होंने ही) दशवें द्वार मे विष को धारण करके रखा।

वळिहारी सूभ्ह तरणइ बहुनामी,
महि पालिग ताइ अचळ महि ।
थोक सवळ टाळियउ विसभरि,
सुर नर सुख भोगवइ सहि ॥२१॥

हे स्यातनामा ! तुम्हारी बलिहारी है। तुम पृथ्वी का पालन करने वाले हो और तुम्हारा नाम पृथ्वी पर अचल है। हे विसम्भर ! तुमने सब विपमताओं (दुःखों) को दूर कर दिया है। सुर और नर सभी (तुम्हारी कृपा से) सुख भाग रहे हैं।

कास्मीरी बिन्दु विराजइ कांने
साधां विचइ रहियइ सिंदूर ।
चढती मउज रसण पिण चढती
सेहरां विचइ उगतउ सूर ॥२२॥

तुम्हारे दोनों कानों में काश्मीरी मुद्रायें शोभायमान हैं और (शरीर के) संधिस्थलों में सिंदूर (का लेप किया हुआ) है। तुम अपनी मौज में आनंदमग्न हो कर (अथवा-जिस प्रकार मूं ज का यज्ञोपवीत पहिनते हो उसी प्रकार मूं ज की ही मेखला पहिन कर) पर्वत शिखरों में से उदित होते हुए सूर्य की तरह (शोभित होते) हो।

कैलास तरणइ सिहर तू कहिजइ
जाग ध्यांन रहो आगिद ।
भ्रू हु कवांरण जेहुवी भरिणयइ
थावर तिलक विराजइ चंद ॥२३॥

हे योगीन्द्र ! कैलाश पर्वत के शिखर पर तुम योग में ध्यान मग्न बताये जाते हो। तुम्हारी भौंहें कमान की भांति कही जाती हैं और तुम्हारे ललाट पर चन्द्रमा तिलक रूप में विराजमान है।

राजा जग सगर नामना राखण,
जिगन करण इसमेद जग ।
अस मेल्हियउ करे ताइ आरभ,
सर्ग नइ मृत्य पाताळ लग ॥२४॥

राजा सगर ने ससार मे नाम करने के लिए, अश्वमेध यज्ञ करने के लक्ष्य से यज्ञारम्भ करके (यज्ञ के) अश्व को स्वर्ग, पाताल तथा मृत्युलोक पर्यन्त भेजा ।

भमिया मृत्य लोक भुमण पिण भमियउ,
साठ हजार लिजइ भड साथि ।
राजा सगर तणउ ताइ रेवत,
वहु सबदइ कुण वाधइ घाति ॥२५॥

साठ हजार योद्धाओं के साथ चलता हुआ राजा सगर का वह घोड़ा मृत्युलोक सहित तीनों भुवनों मे घूमा । उस आफत को वाध कर बहुतों से कौन विवाद करे !

साभण पायाळ गयउ अस्व समहरि,
वाका भड पाखती वहइ ।
इद्र गयउ व्रह्मादिक आगइ,
कोई तेण उपाव कहइ ॥२६॥

युद्ध की चुनौती देता हुआ वह अश्व पाताल को जीतने के लिए गया । वाके वीर उसके पार्श्व मे चल रहे थे । (यह देख कर) इन्द्र ब्रह्मादिक देवताओं के पास गया (और कहा कि) इसका कोई उपाय बताओ ।

तिग मात वदइ भ्रन्य बीजा भूपति,
　　मति ही गति दाखवइ मसख ।
ए ब्रह्माव उपाव भ्रासियउ
　　रिख तीरह बाधउ रँवत ॥२७॥

दूसरे सभी राजाओं को बमन मात दे दी है उसकी गति अत्यंत तीव्र कही जाती है। (यह सुन कर) ब्रह्मा ने यह उपाय बताया कि (उस) घोड़ को ऋषि के पास (लजा कर) बांध दो।

ग्रीषम सरस लगावउ ताळी
　　एकण ध्यान रहउ पग एक ।
रहण इसा जोगेंद्र रहंता
　　माछी जुग वउळिया भ्रनेक ॥२८॥

एक पैर पर खड़े होकर ध्यानावस्थित हो त्रिविक्रम (भगवान) से समाधि लगाने वाले योगिराज (कपिल मुनि) को इस प्रकार उत्तम जीवन बिताते हुए अनेक युग बीत गए।

बीहतइ इद्र कपिल रइ भ्रस बाधउ
　　भ्रतर भ्राप रह्यो भ्रह् भ्रोट ।
छोडमा सह भ्राविया छघाहा
　　कळहण जिके सार रा कोट ॥२९॥

इन्द्र ने डरते-डरते कपिल मुनि के पास अश्व को बांध दिया और स्वयं आट लेकर छिपा रहा। उसे छुड़ाने के लिए उत्पन्न योद्धा क्रोधित हो कर आये।

बाधउ रिख, तिया उपराठा बाहा,
ताळी छूट गयउ ततकाळ ।
एकण घाव विवइ अहकारी,
लख हाथळ वाहइ लकाळ ॥३०॥

उन्होंने ऋषि को पीछे की ओर भुजाये कर के बाध दिया, (जिससे) तत्काल ही उनकी समाधि छूट गई। (ऋषि को) अहकारी जान कर योद्धा एक साथ ही दोनों हाथों से लाखों वार करने लगे। (अथवा अहकारी योद्धा एक साथ ही दोनों हाथों से लाखों प्रहार करने लगे।)

तामस रिख करे बाधियउ तरकस,
छोडिया अगनि तणा दळ छेडि ।
एकण सबद बाळिया अतत रा,
जोई नही काइ अवर जेडि ॥३१॥

ऋषि ने क्रोधित हो कर उग्ररूप धारण किया (और क्रोधित नेत्रों से) प्रज्वलित ज्वालायें छोडीं। (श्राप के) एक ही शब्द से (उन्होंने) अत्याचारियों को भस्म कर डाला। इस (कार्य) की तुलना (ससार में) और कहीं नहीं दिखाई दी।

रहियउ ताइ जगन सगर राजा रउ,
कीयउ तरइ इद्र जीव करार ।
अइ तीजी पीढी ऊधरस्यइ,
वडे रिखे आखियउ विचार ॥३२॥

राजा सगर का वह यज्ञ (अपूर्ण) रह गया। तब इन्द्र ने हृदय में दृढता धारण की। वडे ऋषि ने विचार कर कहा कि तीसरी पीढी में इनका उद्धार होगा।

तीजी पीढी हुयउ तियां रइ
वंश अधार धात मेरवड ।
ग्रहिया चरण तियइ गंगा रा
भागीरथ जग महाभड ॥३३॥

उनकी तीसरी पीढी में वंश का आधार सुमेरु से भी अधिक ख्याति वाला जगप्रसिद्ध महान योद्धा भागीरथ हुआ जिसने गंगा के चरण पकड़े।

कितरा दिन लगइ चाकरी कीधी
एकण ध्यान रह्यो एकांत ।
दीठउ साच तरइ वर दीन्हउ
भरम दिमायउ उभय भांत ॥३४॥

एकांत स्थान में एकचित्त हो कर कितने ही दिनों तक (उसने) सेवा की। (उसकी सेवा) सच्ची देख कर (गंगा ने) वर दिया। दोनों प्रकार से उसका भ्रम दूर किया।

भागीरथ गंग प्रसन हुइ भणियउ
वायक एह विध सरस विचार ।
आराधरे हिमद्सुर इसडउ
धर पुड ग्रहइ पडती धार ॥३५॥

गंगा ने प्रसन्न होकर इस प्रकार विचारपूर्ण सरस वचन भागीरथ से कहा—अरे हिमेश्वर की ऐसी आराधना कर कि (वे) पृथ्वी तल पर पड़ती हुई (मेरी) धारा को ग्रहण करें।

भागीरथ कहइ मात ताइ साभळि,
वळ असडउ किरण अछइ वियड ।
आराधनइ जिको सुर आणू,
देवो तइ आगिया दियइ ॥३६॥

भागीरथ ने कहा, हे माता ! ऐसा वल दूसरे किस मे है, वह मुझे वताओ । किस देवता की आराधना करके उसे लाऊ, हे देवी, वह आज्ञा मुझे दो ।

भागीरथ भजि रे भोळी चक्रवर्त्त,
आगा लगइ जोवता अथाह ।
सकर देव पखउ कुण साहइ,
पडती गगा तरणा प्रवाह ॥३७॥

अरे भागीरथ ! भोले नाथ (शिव) का भजन कर । ठेठ से ही उनकी शक्ति अथाह रही है । शकर देव के विना पडती हुई गंगा के प्रवाह को दूसरा कौन रोक सकता है ?

पहतउ किलास तरणइ जाइ परबत,
माता कन्हा आगिया माग ।
तप पिरण ऊहिज ऊहिज तीरथ,
जगत सधाररण ऊहिज जाग ॥३८॥

माता (गगा) से आज्ञा पाकर (भागीरथ) कैलाश पर्वत पर जा पहुँचा । वही उसका तप, वही तीर्थ और वही ससार से उद्धार करने वाला यज्ञ वन गया ।

तपिया तप बारह बरस लग तिण
निर आहार रहाउ विण नीर ।
भखियउ पवन गुफा रहि भीतर
मत साहस जोवतां सधीर ॥३९॥

निराहार और निर्जल रह कर वहाँ (भागीरथ ने) बारह वर्ष तक तप किया। गुफा के भीतर रह कर (उसने) पवन भक्षण किया। (उसका) सत, साहस और धैर्य देखते ही बना।

सुप्रसन हुया तियह तप संकर
रे मानवी वछइ सोइ माग ।
इसरउ फळ जही नू न हुवइ,
जग पुड सहस करइ जे ज्याग ॥४०॥

शंकर उसकी तपस्या से प्रसन्न हुए (और बोले)—रे मानवी जो चाहते हो सो मांगो। पृथ्वीतल पर सहस्र यज्ञ करने वाले को भी इतना फल नहीं मिल सकता।

भागीरथ कहइ भ जोनीसभवि
महा महा जग विरद वहुउ ।
कुळ माहरइ सधारण कवळा
गंगाजी आवती ग्रहउ ॥४१॥

भागीरथ ने कहा—हे अयोनिसम्भव आप संसार में बड़े-बड़े विरुद धारण करने वाले हो। हे कोमल मेरे कुल की रक्षा करने के लिए आती हुई गंगा को (आप) ग्रहण करें।

माडिया उतवंग जियइ द्रू माथइ,
नाम जपता एक निमंख ।
सकर देव पखउ कुण साहइ,
पडती गगा तणा झट पख ॥४२॥

जिसने, एक निमिष मात्र नाम जपने से, पर्वत शिखर पर अपना सिर माड दिया, उस शकर देव के बिना पड़ती हुई गगा के तीव्र प्रवाह को कौन सहन करे ?

पउढिया पान प्रियाग तणइ प्रभु,
कोली यतरउ रूप कर ।
जुग केते एके जागविया,
धुरा समाया ध्यान धर ॥४३॥

भगवान प्रयाग के (अक्षय वट के) पत्र पर शिशु रूप धारण कर सो गए और ध्यान धर कर समाधिस्थ हो अनेक युगों के बाद जगे ।

कमळनाभ तिण वार प्रगटकर,
करिवा ब्रह्मा प्रगट कियउ ।
बोलाई आपणी बराबरि,
दहुनामी सिर हाथ दियउ ॥४४॥

उस समय कमलनाभि (भगवान विष्णु) ने सृष्टि उत्पन्न करने के लिए ब्रह्मा को उत्पन्न किया, और अपने पास बुला कर अनत ख्याति वाले (भगवान) ने उनके सिर पर हाथ रखा (अर्थात आशीर्वाद दिया) ।

दहुणाइ कर छीप प्रगट राआविक
ब्रह्मा आगा तै कीध विचार ।
ईसर तू जगदीस तणउ अंस
सहु ब्रह्मं माँडियउ ससार ॥४५॥

ब्रह्मा ने अनेक दाहिने हाथ से राआदिकों को उत्पन्न किया। उन्होंने ब्रह्मा के आगे (इस प्रकार) विचार व्यक्त किया—हे श्रेष्ठ देव! तुम (स्वयं) जगदीश (भगवान) के अंश हो। हे ब्रह्म! यह सारा संसार (तुम्हारा ही) रचा हुआ है।

वरदान हुयउ दिस तू देवां रउ,
आप सहू लेती अवतार ।
बाजीगर जिम रूप मांधियउ
सहु रामत देखण ससार ॥४६॥

(राजा) दक्ष को देवताओं का वरदान हुआ कि स्वयं सभी (?) (तुम्हारे यहाँ) अवतार लेंगी। संसार को तमाशा दिखाने के लिए (उन्होंने) बाजीगर के समान रूप धारण किया है।

पूरब दस नयर प्रभापुर
नव दीपां धा नमइ नरेस ।
असुरां सुरां पनगपति नरपति
दिस राधा दीपइ दहू देस ॥४७॥

पूर्व देश (या दिशा) में प्रभापुर नामक नगर में राजा दक्ष दशों दिशाओं में दीप्त है। नवों द्वीपों के असुरों, सुरों, नागों और मनुष्यों के राजा (उनके सामने) नतमस्तक होते हैं।

तइ दिख राजा तणइ साठ ताय पुत्री,
साठ हजार कुंवर सिरदार ।
नव खड रा भूपाळ नमइ जिण,
परग्रह लहइ तियइ कुण पार ॥४८॥

उस दक्ष राजा के साठ पुत्रिया और साठ हजार श्रेष्ठ कुमार हैं । नवो खण्डों के राजा जिसके सामने नतमस्तक होते हैं, उसके परिवार (कुटुम्ब) का पार कौन पा सकता है ?

ग्रभवास नही दस मास तणइ ग्रभ,
वात अचंभ जउ लहइ विचार ।
एकण दिन दस पळां अतरइ,
गउरी तणउ हुयउ अवतार ॥४९॥

एक अचभे की वात का विचार करो । दस मास तक गर्भ में वास न कर के, एक ही दिन मे दस पलों के बाद गौरी का अवतार (जन्म) हुआ ।

उछाह करइ मावीत्र अनोपम,
चढइ नही के बीजा चीत ।
आदिआ सकत तणी गति असडी,
ऊगो ग्रहा विचइ आदीत ॥५०॥

माता-पिता अनुपम प्यार करने लगे । कोई भी दूसरी संतान (तुलना में) उनके चित्त को नहीं भाती । आद्या शक्ति का प्रताप ऐसा हुआ मानों ग्रहों मे सूर्य उदय हो गया हो ।

मांनव मको मको साइ मएाधंर
ममरा सरा प्रनेरा भेव ।
इसड़उ रूप प्रनूप प्रासिमइ,
देवांगना न कोई देव ॥५१॥

उसका रूप इतना कहा गया कि न कोई मानव न कोई नाग, न कोई देवाङ्गना न कोई देव और न संसार के दूसरे अनेक जीव ही (उसकी समता कर सके)।

वाधे पउ प्रधिक तेज तनु वाधइ
बाळक तरा कोमता बय ।
दिन दिन भई प्रंतरा देवी
वरस मास रा किसा निबध ॥५२॥

(उसकी) बाल्यावस्था को देखते हुए (उसका) शरीर अधिक वृद्धि को प्राप्त होने लगा और शरीर की कान्ति भी अधिक बढ़ने लगी। वह देवी, वर्ष और मास के बंधनों को (न स्वीकार कर) एक-एक दिन में ही (आयु के) अंतर को प्राप्त करने लगी (अर्थात् बढ़ने लगी)।

ऐकीकइ निमख तेज तनु प्रधिकउ
भांरा ऊगतउ प्रभात ।
कमळ साम मत राजकुमारी
गोरी कमळ सरीसइ गात ॥५३॥

एक एक निमिष में ही उसके तन का तेज बढ़ने लगा, मानो प्रभात का सूर्य उदय हो रहा हो। कमल के समान (कोमल) गात्र वाली (वह) राजकुमारी कमल से भी अधिक गौरवर्ण की (हुई)।

पख एकरा त्रिचइ हुई वर प्रापत,
राजकुमार अनोपम राज ।
सायर विचइ पनग वइस वळि,
जोवरा चा छोडिया जिहाज ॥५४॥

एक पखवाड़े में ही (वह) वर प्राप्त करने योग्य हो गई। राजा ने (उसके लिए) समुद्रवर्ती तथा नाग लोक के अनुपम राजकुमारों को देखने हेतु जहाज छोडे (रवाना किए)।

जाळ घर तराइ गर्भ ताइ जेहवी,
वचन सकोमल अधिक वखारा ।
वदन तरगी छिव कळा जोवता,
भयचक हुवइ दुवादस भारा ॥५५॥

जलोत्पन्न पदार्थ के गर्भ में जैसी कोमलता कही जाती है उससे भी अधिक कोमल वह थी। उसके शरीर की छवि का प्रकाश देख कर बारहों सूर्य भयत्रस्त हो गए।

माडिया सरोज भयग चइ माथइ,
हरणाखी चित लावन हरि ।
अतिरगता विराजइ ऊपर,
पगथळिया मीमलइ परि ॥५६॥

चित्त को हरने वाली (उस) हरिणाक्षी ने पृथ्वीतल पर अपने कमल सदृश चरण रखे, तो वीरवहूटी के समान (लाल और कोमल) उसके पदतलों के ऊपरी भाग मे प्रगाढ लालिमा शोभायमान हुई। -

सुररांणी चरणी ताइ सोभा
सवर्ता अधिक प्रोपमा तिरण ।
खुडिया ऊमरि जांणि सांभियां
मिणधर राजा तणी मिण ॥५७॥

उसके चरणों की शोभा का बखान करें तो वह सुररानी (शची) की उपमा से भी अधिक (ठहरती है)। उसके पैरों पर नख ऐसे प्रतीत होते थे मानो नागराज की मणि हों।

पींडियां तणी प्रोपमा पुणतां
प्रति नाळी जोवतां अनूप ।
मछि ताइ मई महोदधि माहे
रहिया थरक थायकवा रूप ॥५८॥

पींडियों की उपमा कहें तो (उसकी) नलियां अत्यंत अनुपम दिखाई देती थीं। और उनके अन्दर मच्छियां-मांस पेशियां—(ऐसी सुशोभित होती थीं) मानों उन्हीं का रूप प्राप्त करने के लिए महोदधि की मछलियां थिरक कर रह गई हों (अथवा—उनके अन्दर मच्छियां इस प्रकार थिरक रही थीं मानो महोदधि में उन्हीं के रूप वाली मछलियां हों)।

अघस्थल युगम केलिग्रम जिसडा
गति जोवतां जिसा गजखड ।
चितसाळी रचतइ चीतारइ
कु नरण तणा मांडिया कु भ ॥५९॥

(उसकी) दोनों जंघायें कदली वृक्ष के गाम के समान (चिकनी और सुडौल) थीं। (उसकी) चाल हाथी की चाल के सदृश दिखाई देती थी। (ऐसा प्रतीत होता था मानो) चित्रशाला की रचना करते समय चित्रकार ने कुन्दन (स्वर्ण) के खम्भ चित्रित किये हों।

कडि लक तिसी उपमा कहता,
पोरस तणी बाधियइ पाळ ।
सादूळउ कुंजर घड सामुहउ,
अणभख लियइ करतो आळ ॥६०॥

(उसकी) कटि इतनी क्षीण थी जैसे पौरुष की पाल बांध दी हो। (उसकी) उपमा (यों) कह सकते हैं (मानों) हाथियों की सेना (कुच युगल) के सामने, दूसरा भक्ष्य न लेने की प्रतिज्ञा किए हुए, सिंह (अपने शिकार से) छेड कर रहा हो।

आरीसइ जाहि जोवता आगळ,
चिहुर पूठ तइ दीसइ चीर ।
पइता कवळ देखजइ परगट,
नाभ कमळ ऊतरउ नीर ॥६१॥

(उसका) मुखाग्र दर्पण की तरह दिखाई देता था (और) बालों के पीछे तक (जाने वाली माग) (दर्पण की) चीर की तरह दिखती थी। (उसके) मुख का (पिया हुआ) जल नाभि-कमल तक उतरता हुआ स्पष्ट दिखाई देता था।(?)

नाळी ताइ नाभ निरखता,
घणू स ऊजळ ऊपर घणउ ।
चकवा रइ बचइ ज्युं चुगती,
तत छाडियउ कुमोद तणउ ॥६२॥

नाभि तक पहुँचने वाली (उसकी) कण्ठ नाली को देखने पर (वह) अत्यत उज्ज्वल (पारदर्शी दिखाई देती) थी। (उसकी क्षीणता को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता था मानों) चक्रवाक के शिशु ने चुगते-चुगते कुमुदिनी का तंतु छोड दिया हो।

म्रांकुस मदन मा तन ऊपड़िया,
घट महिमा पोयतां घणी ।
देवल जांहि सिखर रा देवल
ईंडा रा झलकिया अणी ॥६३॥

(उसके) शरीर पर मदन (कामदेव) के अंकुरा उभर आये। (उनकी) महिमा घट (घड़े) से भी अधिक दिखाई दी (अथवा घन से उसके शरीर की महिमा अधिक प्रतीत हुई)। देवालय के शिखर की तरह उसका वक्ष स्थल (और शिखर स्थित गोलाकार) अण्डों की नोक की तरह (कुचों के) अग्र भाग झलकते थे।

भुज च्यारे रूप बिराजइ भारी
घरहरसी घुळती घण घाव ।
हेमाचळ गिरवर रा सेहर,
वर्सत तणी रुत हुई बणाव ॥६४॥

अनेक कठिनाइयाँ सह कर तपस्या करती हुई (वह) चार भुजा रूप में खूब शोभित है। हिमालय पर्वत के शिखर पर बसंत ऋतु का शृंगार हो गया है। (?)

पोहण रा पान तिसा कर पुणह
नाळी जिम भांगळी निरेह ।
रूप अनूप विचाळइ रेखा
दिणियर जांहि ऊजळी देह ॥६५॥

कमल पत्र की भाँति उसकी हथेलियाँ ऐसी लगीं। (हथेली के) बीच की रेखायें अनुपम रूप युक्त हैं। (उसका) शरीर सूर्य की तरह प्रकाशमान है।

वइरागर पुणग पइरवा ऊपर,
, लहइ जिके ताइ सवा लख ।
कुदण रइ दळ महा काढिया,
नहरणिया कोरण नइ नख ॥६६॥

अगुलियों के पोरों पर नहरनियों से कोर कर सँवारे हुए (उसके) नख वैरागर की खान में मिलने वाले सवा-सवा लाख के (मोल वाले) रत्न खण्डों (की भाति थे) जो स्वर्ण के दल में से सँघारे हुए (प्रतीत होते) थे।

नाळी ताइ कठ तणी निरखता,
रची अचभ परजापति राव ।
विगताहीण रेखता वणाई,
घण अहिरण अणलागइ घाव ॥६७॥

उसकी कंठ नाली देखते हुए ब्रह्मा ने (उसे) आश्चर्यजनक बनाया। हथौड़े से अहिरन पर चोट लगाये बिना ही उसे रेखा के समान (पतली तथा) अभूतपूर्व बनाई।

अति सु दर कवळ माडिया ऊपर,
सोभा अति पामइ सादीत ।
चदवदनी मुख दिसउ चाहता,
ऊगा किरि बारह आदीत ॥६८॥

(उस) चन्द्रमुखी के मुह की ओर देखने पर (ऐसा प्रतीत होता था मानों) बारहों सूर्य (एक साथ) उग आये हों। उस पर अतिसुन्दर कमल (नेत्र) चित्रित किये हुए थे, जो विकसित होने (खुलने) पर बहुत शोभित होते थे।

दांए उठे दांन दिखाया दामण
चमकत रसण डसण रस चोळ ।
महर प्रवाळी हुता मनोपम
कूं कूं व्रन सारिखा कपोळ ॥६६॥

दन्तपंक्ति के खुलते समय रस से लाल जीभ के साथ चम कते हुए (उसके) दांत विद्युत् प्रभा की तरह दिखाई दिये। (उसके) अधर मूंगे से भी अधिक सुन्दर (और) कपोल कुंकुम के वर्ण की तरह (लाल) थे।

दखे (ताह) चख विहंगम वहलइ
रेखा सकति मनोपम रंग ।
भरी किणही (कइ) विचित्र भरावी
सचउ करि नासिका सुचंग ॥७०॥

न जाने किसके द्वारा क्या ही विचित्र ढंग से सांचे में ढाल कर बनाई गई अनुपम रंग वाली उसकी सुन्दर नाक को देख कर चोंच वाले पक्षी भी घबरा गये, (और उसकी सरलता देख कर) रेखा भी शंकित हो गई।

लहता जग लहरि तुरंगे लागा
सूरांतण जावतां सभीर ।
मृग छावडइ जिसा लोचण मुख
तीखा जिसा सुरंगी तीर ॥७१॥

(उसकी) आंखें मृगशावक की तरह सुन्दर (और) सुरंगी (?) तीरों की तरह तीखी थीं। (वे) संसार को लहरों में तरंगायित कर देने वाली थीं (उनका) शौय (तथा) धैर्य देखते ही बनता था।

भुहारा तणी रेखा ताइ भामणि,
घणू स कोमल रूप घणइ ।
चाढी जाणि कबाण चाढतइ,
तजी कुवरि बलोच तणइ ॥७२॥

उस सुन्दरी के भुहारों की रेखा अत्यत कोमल (और) अत्यत सुन्दर थी। (उसकी उपमा यों कह सकते हैं) मानों बलोच (जाति की) कन्या ने धनुष की डोरी खींचते हुए कमान टेढी कर दी हो।

निलइ तणी महिमा निरखता,
राजकुंश्रार तणउ तप व्याध ।
मदन तणा सिहर चइ माथइ,
बारइ तेज तपइ बाणाध ॥७३॥

ललाट की महिमा देखते हुए (उस) राजकुमारी का तप (तेज) विशिष्ट (प्रतीत होता) था। (ऐसा लगता था मानों) कामदेव के शिखर (कुच युगल ?) पर बारह सूर्यो का प्रकाश दीप्त हो।

वेणी डड जिसउ विराजइ वासउ,
पिंड उदमाद धरती पाव ।
वृख ताइ चद तणइ विलागउ,
ग्रख लइतउ घणाइ वृख राव ॥७४॥

शरीर के (यौवनजन्य) चाञ्चल्यवश पाव धरती हुई (उसका) वेणी दड सर्प के समान शोभायमान था, (जो) उसके (शरीर रूपी) चदन वृक्ष से लिपटा हुआ था (और) अनेक प्रतापी राजाओं को (अपने) विष से प्रभावित (अतिशय रूप से मुग्ध) कर रहा था।

परणाई अवर रायहर अवरां
बेठी कुंवरि करे वड ज्याग ।
कीजइ जिम कीयइ कन्याहळ
दीजइ जिम दीन्हउ ज्याग ॥७५॥

दूसरी सभी राजकुमारियों को बड़े उत्सव करके दूसरे राजपुत्रों से ब्याह किया। जैसे कन्यादान किया जाता है वैसे ही किया गया (और) जैसे दानादि दिया जाता है वैसे ही दिया गया।

परवार सयल राजांन पूछियउ
पूछिया वडा वडा परधांन ।
दीजइ गवर जिसउ वर दाखउ
वश तणउ वाधारण वांन ॥७६॥

राजा ने समस्त परिवार से पूछा (और) बड़े-बड़े प्रधानों से (भी) पूछा कि वंश की कीर्ति को बढ़ाने वाला ऐसा (कोई) वर बताओ जिसे गौरी (विवाह करके) दी जाये।

आलोच करे परवार आखियउ
अवर नको राजांन इसउ ।
वींद नको सारिखउ विसभर
सिहर नको कैलास जिसउ ॥७७॥

परिवार (के लोगों) ने विचार कर के कहा (कि) और ऐसा कोई राजा नहीं है। विश्वम्भर (शिव) के समान कोई वर नहीं है (और) कैलाश जैसा कोई (पर्वत) शिखर नहीं है।

परवार तरण(उ) (परण)कह्यउ न लोपइ,
गहिलउ वर जाणइ गिरमेर ।
बाप तणइ मन बात न बैठी,
नेह पखउ दीन्हउ नाळेर ॥७८॥

पर्वतराज ने वर (शिव) को पागल जानते हुए भी परिवार के कथन का लोप नहीं किया। पिता के मन मे बात जची नहीं (पर) विना मन के (भी) नारियल दे दिया।

मन माठइ सइ नाळेर मेल्हियउ,
आगा लगइ करण ऊछाह ।
परणीजसी कुअर पाटोधर,
वरदळ तणइ हुस्यइ वीमाह ॥७९॥

अप्रसन्न चित्त से नारियल भेज दिया गया (और) पहिले से ही चाव करने लगे (कि) श्रेष्ठ राजकुमारी व्याही जायेगी, जोडी के अनुरूप (ही) विवाह होगा।

नवखड रा भूपाळ निरखता,
वडा प्रधान जिके वडवार ।
गिर कैलास करता गाहड,
आया खडे कियइ इलगार ॥८०॥

जो वडे प्रधान (विवाह के) वडे कार्य के लिए रवाना हुए थे, (वे) नवों खण्डों के राजाओं को देखते हुए, गर्व के साथ चलते हुए, कैलाश पर्वत पर आये।

वणराय प्रवारइ भार फळिय वन,
कोइल मोर मल्हार करइ ।
ईसर तणी प्रान्या इसड़ी
धांवरियाळ सवाळ चरइ ॥८७॥

(जिस) वन में राशि-राशि वनस्पतियां फली हैं (वहां) कोयल (और) मोर आनंद कर रहे हैं । शिव का प्रताप (ही) ऐसा है कि (वहां) चंवरी गायें और सिंह (एक साथ) विचरण करते हैं ।

प्रवसर एक प्रनेक प्राहवइ
करणी मनवछित फळ काज ।
वृख सायर पासती विराजै
जांण रथ सांमिया जिहाज ॥८८॥

(वहां) मनवांछित फल (प्राप्त) करने के लिए अनेकानेक अवसर उपस्थित होते हैं । (विशाल) सरोवरों के पास वृक्ष (इस प्रकार) सुशोभित हैं (मानो) जहाजों (को बांधने) के खम्भे हों ।

नदी वहइ झावुका नोसती
घोम उदक थी लागी धार ।
ईसर तणी प्रान्या इसड़ी
पइडउ दइस उतारइ पार ॥८९॥

नदी (इस प्रकार) वमक कर बह रही है (मानों) धुएं की धार पानी से आ लगी हो । (लेकिन इतने पर भी) शिव का ऐसा प्रताप है कि (उसमें) पग रखते ही पार उतर जाय ।

तिण वनि गहण विचाळइ पथी,
आविया गग सनान कियउ ।
चढस्या किम करता चीतवणी,
वृख एकण विसराम लियउ ॥६०॥

ऐसे गहन वन के बीच आकर पथियों ने गगा-स्नान किया। (आगे) किस प्रकार चढेंगे (ऐसा) सोच करते हुए (उन्होंने) एक वृक्ष (के नीचे) विश्राम लिया।

किम आया किसउ ताइ कारिज,
कहउ नही मेल्हिया किण ।
मनुख्य तणी भाख्या बोलै मुख,
जीव जिके वन रहइ जिण ॥६१॥

'क्यों आये हो, क्या काम है, कहो ना, किसने भेजा है ?' —उस वन में जो जीव रहते थे (उन्होंने) मनुष्य की भाषा मे बोल कर (इस प्रकार पूछा)।

तरइ पखेरू आगळि परधाना,
विवरा सुधउ कह्यउ वतकाव ।
वहिलउ दरसण हुवइ विसुभर,
अस इछ कहि पखी ऊपाव ॥६२॥

तब प्रधानों ने पक्षी से विवरण सहित सारी बात कही—'हे पक्षी, विश्वम्भर के प्रिय दर्शन हों, ऐसी इच्छा है, कोई उपाय बताओ।'

जोयन बीस हजार आवतां,
सहस दस पहिलउ कइलास ।
प्रसहउ रूप अनोपम भासियइ
एकरण थंभ तरणउ आवास ॥८१॥

बीस हजार योजन (के विस्तार) में से दस हजार में पहला कैलाश है। उसका सौन्दर्य इतना अनुपम कहना चाहिए (मानों) एक खंभे वाला महल हो।

धुरराय तिसा गिरराव विराजइ
प्रति साखा सवळकता अग ।
सिसहर तणी पासती सोहइ
ग्रह जांणे लागा गमराग ॥८२॥

(उस) पर्वतराज पर ऐसे कोमल व मधुर शाखाओं वाले श्रेष्ठ वृक्ष शोभित हैं (जो) आकाश से लगे हुए (होने के कारण) (ऐसे प्रतीत होते हैं) मानो चन्द्रमा के पास में ग्रह शोभायमान हों।

तिरण पग २ चदरण तणा तरोवर
विविध २ फूली वणराइ ।
पंगी मुनि हरि नांम पुणंतां
सुर ताय मांनव सबै सुहाय ॥८३॥

उस (पर्वतराज) पर जगह जगह चंदन के वृक्ष हैं (और) विविध प्रकार से वन राजि पुष्पित है। (वहां) मानव के स्वर में मुख से हरि नाम बोलते हुए पक्षी सुहाते हैं।

छिलता पहाड २ पाखती,
अधर भरता चरण वरइ ।
अंब तणा वृख लुब आविया,
कुंजर बिच सारसी करइ ॥८४॥

पहाड पहाड़ पर, पास-पास सटे हुए, अधर में ही भरते हुए आमों वाले वृक्ष झुके हुए है, (जिनके) बीच मे क्रीडा करते हुए हाथी विचरण कर रहे हैं।

छिलता भिलता घणू छछोहा,
ताढी तट छाया वृख ताड ।
मदभरता इतरा मयगळ,
पाएले चालस्यइ पहाड ॥८५॥

छलक कर (आपूर्ण) बहते हुए अनेक भरने शोभित है (जिनके) तट पर ताड वृक्षों की ठण्डी (अथवा ऊंची) छाया है। (वहां) मद भरते हुए हाथी ऐसे (प्रतीत होते) है (मानों) पहाड पैदल चल रहे हों।

कसतूरी नाभि जिसधि निकेवल,
उडियण जाइ लागा आकास ।
मृग तेथि थकत हुया वन माहे,
वाजइ पवन तणा सुर वास ॥८६॥

जहा पवन के स्वर वासों में बज रहे हैं, ऐसे वन मे, उड कर (उछल कर) आकाश से जा लगने वाले क्षीणकाय कस्तूरी मृग भी थक (कर विश्राम करने लग) जाते हैं।

वरणराय मझारइ भार फळिय वन
कोइल मोर मल्हार करइ ।
ईसर तणी प्रान्या इसडी
षांवरियाळ वयाळ चरइ ॥८७॥

(जिस) वन में राशि-राशि वनस्पतियां फली हैं (वहां) कोयल (और) मोर आनंद कर रहे हैं। शिव का प्रताप (ही) ऐसा है कि (वहां) चंवरी गायें और सिंह (एक साथ) विचरण करते हैं।

प्रवसर एक प्रनेक माहवइ
करणी मनवछित फळ काज ।
वृख सायर पासती विराजै
जांण रथ थांभिया जिहाज ॥८८॥

(वहां) मनवांछित फल (प्राप्त) करने के लिए अनेकानेक अवसर उपस्थित होते हैं। (विराजमान) सरोवरों के पास वृक्ष (इस प्रकार) सुशोभित हैं (मानो) जहाजों (को बांधने) के खम्भे हों।

नदी वहइ भाळुका भांसती,
धोम उदक चौ लागी धार ।
ईसर तणी प्रान्या इसडी
पइसत वइस उतारइ पार ॥८९॥

नदी (इस प्रकार) चमक कर बह रही है (मानों) धुएं की धार पानी से आ लगी हो। (लेकिन इतने पर भी) शिव का ऐसा प्रताप है कि (इसमें) पग रखते ही पार उतर जाय।

तिण वनि गहण विचाळइ पथी,
आविया गंग सनान कियउ ।
चढस्या किम करता चीतवणी,
वृख एकण विसराम लियउ ॥६०॥

ऐसे गहन वन के बीच आकर पथियों ने गगा-स्नान किया। (आगे) किस प्रकार चढेंगे (ऐसा) सोच करते हुए (उन्होंने) एक वृक्ष (के नीचे) विश्राम लिया।

किम आया किसउ ताइ कारिज,
कहउ नही मेल्हिया किण ।
मनुख्य तणी भाख्या बोलै मुख,
जीव जिके वन रहइ जिण ॥६१॥

'क्यों आये हो, क्या काम है, कहो ना, किसने भेजा है ?' —उस वन में जो जीव रहते थे (उन्होंने) मनुष्य की भाषा में बोल कर (इस प्रकार पूछा)।

तरइ पखेरू आगळि परधाना,
विवरा सुधउ कह्यउ वतकाव ।
वहिलउ दरसण हुवइ विसु भर,
अस इछ कहि पखी ऊपाव ॥६२॥

तब प्रधानों ने पक्षी से विवरण सहित सारी बात कही—'हे पक्षी, विश्वम्भर के प्रिय दर्शन हों, ऐसी इच्छा है, कोई उपाय बताओ।'

निहुँ प्रीखे मागळि कुंड मग्राह
सह भावइ सुर क्रीसिवा मनेक ।
रघ पहेस्यइ हुएस्यइ रळियाइत,
वात कहे वाखविज्यो विमेक ॥६३॥

(पक्षी ने कहा—) आगे तीन कोस (कदम ?) पर (एक) कुण्ड है वहां अनेक देवता जल-क्रीड़ा के लिए आते हैं। (थ) प्रसन्न हो कर (आपको) रत्नों पर पधा लेंगे, विवेक पूर्वक बात कह देना।

अमृत सहित ईस रस आसां
भरिया कुंड तणइ मइ मात ।
उण माहे इसी मां आचरतां
अहमव तणी आणिजइ वात ॥६४॥

ईस रस सहित अमृत (की बात भी क्यों (तो उस) भरे हुए कुण्ड के आगे वह भी मात है। उस में आचमन (?) करने मात्र से (अखिल) ब्रह्माण्ड की बात जानी जा सकती है।

आंण प्रवीरा मतर ताइ आंमी
दिमंस दिन पहिलउ दीदार ।
तीयह विखाळी रांम मथरी
करइ ज विखवाळ महंकार ॥६५॥

(उन्हें) प्रवीण जान कर उस अन्तर्यामी ने पहले दिन ही (?) दर्शन दे दिए। वह दिखावा (?) भी भगवान ने उन के अहंकार के कारण ही किया।

आपण पान फर मेल्हिया ईसर
मोटै सुपह दियता मान ।
आया हूति तइ अर्थ आया,
परधाने मिलिया परधान ॥६६॥

बडे राजा (के योग्य) मान देकर शिव ने अपनी ओर से पान-फल भेजे। जिस कार्य के लिए वे आये थे (?) उसी कार्य के लिए आकर प्रधान प्रधानों से मिले।

चढिया रथे जोवता चिहु दिसि,
ग्रह छाडे वन रा वचन ।
पळ माहे जितरी रथ पहुचइ,
मनछा तितरी धरइ मन ॥६७॥

वन मे (पक्षी द्वारा कहे गये) वचनों को ग्रहण कर (तथा उनका) उपयोग कर (वे) चारों ओर देखते हुए रथ में चढे। एक पल में मन जितनी इच्छा करे उतनी ही (दूर) वह रथ पहुँचा दे।

आया गिर कैलास ऊपरइ,
पग २ किता अऊब परि ।
कही कलीया तणा किता ही,
रहि रीखीसिर ध्यान धरि ॥६८॥

कितनी (ही) अद्भुत प्रकार से धीरे-धीरे (करके) कैलाश पर्वत पर आये। कितने ही ऋषीश्वर वहा ध्यान धरे (बैठे थे) ?

दस जोयण लग जिये री देही
अनवतां जोवतां विस्तार ।
इउहिज वार तगा ऊमरइ,
इसडा वृक्ष वाधिया उदार ॥ ९९ ॥

(जिसके) विस्तार को देखते हुए दस योजन तक जिसकी देह का वर्णन किया जाय (ऐसे) कैलाश पर (उस) उदार (विस्तृत हृदय वाले) ने (अपने) द्वार पर ऐसे ही (विस्तृत) वृक्ष लगा रखे थे ।

अधकार हुवइ नइ सूर आथमइ
कळा इसी घरत कैलास ।
माडियउ मुहुल सातमइ ब्रहमंड
रतना तणी दखिजे रास ॥१००॥

(उस) कैलाश पर (शिव का) ऐसा चमत्कार है कि न तो सूर्य अस्त होता है (और) न अंधकार (ही) होता है । सातवें ब्रह्माण्ड में (अत्यंत ऊँचे स्थान पर) बनाया गया (उनका) महल रत्नराशि के समान दिखाई देता है ।

कवाडउ रतन गारि कुंदण री
मुगति शिलावट घुणी सुजांण ।
तेज समइ कुण दस्न तियां रउ
भुवण २ जिहां ऊगइ भांण ॥१०१॥

(उसे) रत्नों के पत्थरों और कुन्दन के गारे से सुजान शिलावट ने युक्तिपूर्वक बनाया है, (और) उसके हरेक भवन में सूर्योदय (का सा प्रकाश) होता है जिसके तेज को कौन सह सकता है ?

निरमळ जळ गग सनान करइ नितु,
ताढी तट छाया वृख ताड ।
वेद थकइ आगळि ब्रह्मादिक,
पडसादा गू जिया पहाड ॥१०२॥

तट पर के ताड वृक्षों की ठण्डी (?) छाया मे, गगा के निर्मल जल मे नित्य स्नान कर के, ब्रह्मादिक देवता (उसके भवन के) आगे वेद-पाठ करके हैं, (जिसकी) प्रतिध्वनियों मे पहाड गूज उठते है।

मूठी भरि सती रेणु जळ साम्ही,
आपणपउ दाखइ अधिकार ।
कु भ हुवइ ततकाल कहता,
सो पाणी ल्यावै पणिहार ॥१०३॥

(वहा) सती मुट्ठी भर धूल जल के सामने (कर) अधिकार-पूर्वक अपनी सत्ता प्रकट करती हुई कहती है-'घडा बन जाओ', सो तत्काल बन जाता है, (जिससे) पनिहारिने जल भर कर लाती हैं।

ऊचउ आवास अपछरा अरधग,
अनगळ रिधि जोवता अनत ।
वसइ जिके नर वास सिवपुरी,
होण जाति (तइ) तिके महत ॥१०॥

शिव के (उस) ऊचे आवास मे अनगिनत अप्सराये (और) अनत ऋद्धि हैं। जो नीच जाति के लोग भी शिवपुरी मे (रहते है) वे भी महान हैं।

दीठी सिवपुरी किसु राजा दिस
मनुसां तणी सलल कइ मात ।
इद्रापुरी हुता रथ आवइ
जीवन तणी करेवा जात ॥१०५॥

शिवपुरी देखने पर राजा वश तो क्या मानवों के अनेक राजसिंहासन (भी) मात हो जाते हैं । (यहां) जीवन की तीर्थ यात्रा के लिए इंद्रपुरी से (भी) रथ आते हैं ।

विनिता मिलि विनोद विचक्षण
गहकइ हसइ रमइ वडि गात ।
देवां तणा आंह सुख दीठा
मनुसां तणा तखित कइ मात ॥१०६॥

(यहां) सुन्दर शरीर वाली चतुर वनितायें आपस में आनंद विनोद करती हुई हसती-खेलती हैं । जहां (ऐसे) देव तुल्य सुख प्राप्त हों (वहां) मनुष्यों के तो कई सिंहासन मात हो जाते हैं ।

पूरउ तप हुउ पतन्या पूगा
ईसर तांईं मून व्रत लीयइ ।
बारां जुगां हुती बहुनामो
ताळी छोडो दीह तीयइ ॥१०७॥

तप पूरा हुआ शिव के मौन व्रत धारण करने की प्रतिज्ञा पूरी हुई । (उस) अनेक नामधारी (शिव) ने बारह युगों के बाद उस दिन समाधि छोड़ी ।

आया परधान आगळै ईश्वर,
गिर माथइ बइठउ गिरमेर।
दीन्ही प्रभु दोळी परदक्षरा,
रहस करे दीन्हउ नाळेर ॥१०८॥

पर्वत पर निश्चल (रूप से) बैठे हुए शिव के सामने प्रधान आये (और) प्रभु के चारों ओर परिक्रमा देकर प्रेमपूर्वक नारियल दिया (भेंट किया)।

नाळेर लियउ प्रभु वात परीछी,
जाणणहार सुजाण जगि।
आया महुल करे ताइ आइत,
प्रिथी प्रमाणइ धरण पगि ॥१०९॥

जगत् (व्यवहार) को जानने वाले चतुर प्रभु (शिव) ने बात समझ कर नारियल ले लिया। उनकी आवभगत कर, पृथ्वी के परिमाण से पग धरने के लिए-अर्थात् मानवों जैसा व्यवहार (विवाह) करने के उद्देश्य से-महल में आये।

आया सिवपुरी हुओ कारिज सिध,
परमगुरू चा ग्रहिया पगि।
माहोमाहि करइ वाता मिलि,
जनम सुकियारथ हूओ जगि ॥११०॥

(प्रधान लोग) आपस मे बातें कर रहे है कि शिवपुरी आने से कार्य (भी) सिद्ध हो गया (और) परमगुरु (शिव) के चरण-स्पर्श करने से ससार में जन्म (लेना भी) सफल हो गया।

परधांने परधांन पूछिया
लगन मुहूरत वार लहि ।
आव किये दिहाड़ै ईसर
कही राव सो जात कहि ॥१११॥

(शिव के) प्रधानों ने प्रधानों से पूछा कि लग्न मुहूर्त (और) वार निकालो । शिवजी किस दिन (बरात लेकर) आयें राव (दक्ष) ने जो बात कही है सो कहो ।

दिख राजां (न) बीनती दाखी
पुहव लगन लाइ नहीं पछइ ।
प्रभु थे त्रबावतो पधारउ
आठे पहरे लगन अछइ ॥११२॥

(तब प्रधानों ने कहा) दक्ष राजा ने (यह) प्रार्थना की है (कि) पुष्य लग्न के बाद और (कोई) नहीं है । (यह) आठ पहर का लग्न है (अतः) हे प्रभु आप (उसी में) त्र बावती पधारें ।

कूकतड़ी मेल्ही चिहु कनारां
नीधसजइ आगळि नीसाए ।
ब्रह्मा विष्णु पधारउ वहिला
जोगेसर तेडीया जोए ॥११३॥

चारों ओर कुंकुमपत्रिका भेज दी गई (और) द्वार पर नगाड़े बजने लगे । ब्रह्मा (तथा) विष्णु (आदि) शीघ्र पधारें योगीश्वर (शिव) ने बारात के लिए बुलाया है ।

पधारिया ब्रह्मा ले परिग्रह,
नवा खडा चा जिके नरिंद ।
आया इद्र चढे अइरापति,
गरुड चढे आयउ गोविंद ॥११४॥

नवों खण्डों के राजाओं के (अपने) परिवार को लेकर ब्रह्मा पधारे। ऐरावत (हाथी) पर चढ कर इद्र आये (और) गरुड पर चढ कर गोविन्द (विष्णु) आये।

जानी एक अनेक जोवता,
नर सुर वडा वडा नागिंद्र ।
वडइ सुपहि बोलता वडावडि,
आया जुडे अठारह इद्र ॥११५॥

अनेकानेक बाराती दिखाई देते थे (जिनमे) नर, सुर (और) नागों के बडे-बडे राजा थे। बढ-बढ़ कर बोलते हुए बडे-बडे राजा और अठारह इन्द्र एकत्रित हुए।

मिलिया गज थाट सिवपुरी माहे,
पूरइ हालरण तरणइ पह ।
जरणायउ वींद वळि विगताळउ,
गरथ खरचिवा घरणइ गह ॥११६॥

शिवपुरी में अत्यधिक भीड ने चलने के मार्ग भर दिये (अवरुद्ध कर दिए)। फिर बडे आनदपूर्वक द्रव्य व्यय करने के लिए वर (शिव) ने (अपनी) महानता प्रकट की (?)।

माता मनइ ऊमता मिलिया
　　भिलता महइ दियता भाट ।
आनी राव जगन्नाथ जेहवा
　　घडइ हुया हालइ गज घाट ॥११७॥

मस्त और उन्मत्त बराती मिलकर ठाठ से चलते हुए सुशोभित हो रहे हैं (?) राव जगन्नाथ जैसे बराती (भी) बरात की भारी भीड़ में सम्मिलित हुए चल रहे हैं।

अवरां नइ दीजइ उदियारण
　　तइ ईसर तणइ नहीं काइ ताट ।
बहुनांमी दीवाड बहूसी
　　चढिया चींद दमामे चोट ॥११८॥

औरों को (जिसका) उदाहरण देते हैं उस ईश्वर (शिव) के किसी भी प्रकार का टोटा नहीं है। बहुत दान देने वाला (वह) विख्यात वर (शिव) दमामे पर चोट देकर (नगाड़ा बजा कर) सवार हुआ।

पेसखाना वाळी वात परीखइ
　　आगा लगइ करण आरास ।
दळवादळ ताणिया दुवाहे
　　फारक ईसर तणा फरास ॥११९॥

पेशखाने वाली बात सुना (जिसमें) पहिले से ही सजावट होने लगी थी। शिव के फुर्तीले (?) फर्राशों ने दोनों ओर (?) बड़े-बड़े तंबू तान दिए।

दीवाण तणउ चोज देखता,
किसा मनुख वाखाण करइ ।
परगह इतउ इतउ दीपै परि,
सीह अजा वे साथ चरइ ॥१२०॥

दीवान (शिव) के प्रताप (?) को देखते हुए कौन मनुष्य (उसका) वखान कर सकता है ? इतना (वडा) परिवार है, (पर उनका प्रभाव) इस भांति प्रकट है कि सिंह और वकरी दोनों एक साथ विचरण करते हैं ।

वीद कन्हा २ जानी वखाणा,
वहइ विसम गति वादोवादि ।
वसुधा अनइ असमान विचाळइ,
पवन चलइ रथ जिके प्रसादि ॥१२१॥

(उन) वारातियों का वखान करें जो वढ-वढ कर विषम गति से (एक दूसरे से आगे) हाक रहे हैं, अथवा (उस) वर का वखान करें जिसकी कृपा से पृथ्वी और आकाश के वीच मे हवा मे ही। (पवन वेग से) रथ चल रहे हैं ।

ऊतरिया कोस ऊपरइ आए,
इतरा दळ जोवता अथाह ।
आगळियार वधाऊ आया,
आई जान हुवै ऊछाह ॥१२२॥

वारातियों का दल इतना विशाल दीखता था कि एक कोस दूर पर ही आकर वे उतर गये । वधाईदार आगे आये (और) वारात का आगमन (सुन कर) उछाह शुरू हुआ ।

पइसारइ सराउ मोडियउ प्रारभ,
मोटइ दिस जोमतां मडाए।
घणाघट पमड जांगीए घुग्से,
मापा ले परिग्रह प्रापांए ॥२२३॥

वह (राजा) वस न (बारात की) विराजलता देख कर (उसे नगर में) प्रविष्ट कराने की तैयारियां कीं। अत्यंत घमड से बजते हुए नगाड़ों के साथ, अपने लोगों को लेकर (वह बारात के सामने) आया।

मृगत्वचा पहिरी पहिरी रुडमाळा,
भोळी भ्रमपति वरिणयो भेस।
चढियो वृस भम बभूति चढावे
वर तोरए वादिवा विसेस ॥१२४॥

शिव ने मृगछाला (और) मुडमाल पहिन कर मोळीचक्रवर्त (भोलेनाथ ?) का वेष बनाया। (फिर) भमूत लगा कर विवाह के तोरण की वदना करने के विशिष्ट कार्य से बैल पर सवार हुए।

मोळ भा दियइ किताई भ्रावे
(कोइ) मेल्हइ लगन भ्रमाधइ माम्फ।
राजकु मार मरीखउ राजा दिस
राजकु मार न लायउ राज ॥१२५॥

कितने ही आकर लग्न देते हैं कोई लग्न को छिपा कर रख देते हैं (?) (और कहते हैं कि) राजा तब राजकुमारी के योग्य राजकुमार नहीं लाये।

महुल २ कीजइ वाता मिलि,
हुवै जिकू विह लिखियउ होइ ।
कही कलीया तराउ कहउ नइ,
जोगी कठा आणीयउ जोइ ॥१२६॥

महल-महल मे आपस मे (यही) चर्चायें हो रही हैं कि जो विधाता का लिखा हो वही होता है। कहो न, (यह) योगी कहा से देख कर लाये है ?

आडवर इतइ जान ताइ आई,
किता मरम री वात कहि ।
देखइ वीद ताळिया दे दे,
साळाहेली हसइ सहि ॥१२७॥

वारात (जो) इतने ठाठ-वाट से आई है, उसे कई (लोग) मर्म की वात बताते हैं। सभी सालाहेलिया वर को तालिया बजा-वजा कर देखती हैं (और) हसती हैं।

बूढउ वीद नइ वीदरगी वाळक,
भेद अलाधइ, नेत्र भरइ ।
सासू ही वतकाव साभळी,
कितरउ ही अरणदोह करइ ॥१२८॥

(शिव की) सास भी (ये) वाते सुन कर वहुत ही दु ख करती है। (वह) बूढे वर और वालक वधू का भेद न जान कर आखें भर लाती है।

बूझइ किसू बापड़ा मानव
वीसहथी सहु लहइ विचार ।
गवरी जाणे लाडगहेली
ईसर देव तणा अधिकार ॥१२६॥

बेचारे मानव क्या समझें, बीसहथी (गौरी) सारा भेद जानती है। (शिव की) लाडली गौरी (ही) शिव के प्रताप को जानती है।

विधि कीधी वळे वांदतइ तारण
मूंग नांखिया जोई मुख ।
सुख संपदा हुई सिगळां ही
दळद्र गयउ गइ गयउ दुख ॥१३०॥

फिर तोरण की वंदना करते समय विधि (पूर्वक) कार्य किये गए। (वर का) मुख देख कर मूंग उछाले गये। सभी को सुख-समृद्धि की प्राप्ति हुई (और) दारिद्र्य मिट गया तथा दुःख का अंत हो गया।

सांम्हउ जिण कळस आणियउ सु वर
वदायउ अर भली विधि ।
जनम जनम बकुंठ पांमिस्यइ
वळे वदावइतां नवे निधि ॥१३१॥

जिस स्त्री ने कलश लेकर (वर के) सामने आकर भली प्रकार विधिपूर्वक वदना की (उसे) वंदना करते हुए ही नवों निधियां (प्राप्त हो गईं और) फिर (मरणोपरांत) जन्म जन्म तक बैकुण्ठ प्राप्त करेगी।

हे अउ वोलइ किसइ देस री वोली,
खडत चरणा तणी खुडी ।
अणवर वीद टूटियउ आयउ,
जोगी रसा जुगती जुडी ॥१३२॥

(स्त्रिया वातें करती है—) अरी, यह किस देश की वोली वोलता है? (इसके) पावों का अग्र भाग (?) टूटा हुआ है (लंगडा है)। (इसका) विंदायक (भी) टूटा (ही) आया है। जोगी के वरावर ही जोडी मिल गई है।

सहु मिलिया आवे सखी सहेली,
धवळ दिइ बाजोट धरइ ।
पहिरण वसत आभरण पहिरण,
रायकुवार माजणउ करइ ॥१३३॥

सभी सखी-सहेलिया आकर इकट्ठी होती हैं (और) (स्नान के लिए) पाटा रख कर मागलिक गीत गाती हैं। राजकुमारी (नये) वस्त्राभूषण पहिनने के लिए स्नान करती है।

मेवा वस्त्र आभरण मिश्री,
बदजइ किसा किसा वाखाण ।
वरी घणइ (ताइ) उछाह ल्याया,
जानी ईसर तणा सुजाण ॥१३४॥

शिव के चतुर वाराती वडे उछाह से वरी (वधू के लिए वेप) लाये हैं। (उस) मेवा-मिश्री (और) वस्त्राभूपणों का क्या क्या वखान किया जाये?

वाचइ गीत साळियां वातां,
करतां मगळ तइ गीत कहइ ।
गवरी नाह करइ रायग्रगण
हसत पगां तळ गग वहइ ॥१३५॥

सालियां गीतों में वार्ते (बना-बना कर) कहती है (?) (और) मंगलाचार के गीत भी गाती हैं। गौरी सुन्दर आंगन में स्नान कर रही है। (उसके) पद-तल से गंगा का स्वच्छ जल बह रहा है।

कर ऊठी मांजरण रायकु वरी,
सुपहिरण लागी सिरणगार ।
भ्रागळियार सहेली आई
वात तरणा जे लहइ विचार ॥१३६॥

राजकुमारी स्नान करके उठी (और) सुन्दर श्रृंगार धारण करने लगी। बात का मर्म समझने वाली (उसकी) सेवा में नियुक्त (आगे रहने वाली) सहेलियां आई।

तिरण नाद थक्त हुई रथ मयकर
घणू सुसव जोयतां घणी ।
काढा कार घडइ कारीगर
पाहड परमा अजाय तणी ॥१३७॥

उस (गीत) ध्वनि से चन्द्रमा का रथ (खींचने वाले मृगों के विमुग्ध होने के कारण) रुक गया। उसकी अत्यधिक सुरुचि देखने पर और भी अच्छी (लगती) थी। (ऐसा प्रतीत होता था मानों) कुशल कारीगर ने (पैर में पहनी जाने वाली) नाड़ पायल (आभूषण विशेष ?) की कोर निकाली ही हो।

दीवाण तणी तन कळा देखनइ,
सिगळा अचरिज रह्या सुरिद ।
जोति जुडी कर तियइ जोवता,
चदवाही किना ऊगउ चद ॥१३८॥

दोवान (शिव) के शरीर-सौन्दर्य को देखकर सभी देवता आश्चर्यचकित रह गए। उनके हाथो मे चदवाही (आभूपण ?) देखने पर (चन्द्रमा के) समान ज्योति (दिखाई देती) थी (और ऐसा प्रतीत होता था मानों) चद्रमा (ही) उग आया हो।

उदमाद घणइ जगि चढती वानी,
करि निरखती फोरती कध ।
साईं मिलण कारणें सुदर,
वाधिया चोली तणा ज बध ॥१३९॥

चढते हुए यौवन के कारण अत्यधिक चाञ्चल्यवश, (वार-वार) हाथों को देखती और कधों को (इधर-उधर) घुमाती हुई (उस) सुन्दरी ने प्रियतम से मिलने के लिए चोली के वध कसे।

बाधिया चिहू करे वाजूबध,
धर आगळि बहुरखा धर ।
कामण हाथ विराजइ काकण,
प्रोचा ऊपर अबज पर ॥१४०॥

(उसने) चारों हाथों मे बाजूबध वाधे (और उनके) आगे बोहरखे (आभूषण) धारण किये। कामिनी के हाथों मे कमल सदृश कलाइयों पर ककन शोभायमान थे, (अथवा—कमिनी के हाथों मे कंकन शोभायमान थे तथा कलाइयों पर अवज-आभूषण विशेषण ?—थे)।

गुणदाणा इसा अमलोक गाढा
मोती ताइ आंवळा प्रमांण ।
सुंदरि हार तिसउ उर सोहइ
बीजी गंग प्रगट की थांण ॥१४१॥

आंवले के समान आकार वाले जिसके मोतियों के बड़े दाने इतने अमूल्य और गाढे थे कि वह हार (उस) सुन्दरी के वक्ष पर ऐसा सुन्दर लगता था मानों शिव ने दूसरी गंगा प्रकट करली हो।

वनिता छव इसी आभरण वाधइ
वळ स आवउ आंक वळइ ।
कठमाळी मोतियां कनारइ
गवरी पहरयउ हांस गळइ ॥१४२॥

गौरी ने मोतियों की कंठमाला के पास ही गले में हांस (आभूषण) धारण किया। (उसका) स्त्री-सौंदर्य आभूषणों से ऐसा वृद्धि को प्राप्त हुआ कि उसके आगे अंकों की इति हो गई (सौंदर्य वर्णनातीत हो गया)।

उदमाद हुई छिब देख अमोपम
बळ छळ तणउ विचारत सच ।
वांमा जडित पहिरी नकवेसर
मद आविया ज्याही मदगंध ॥१४३॥

(उसकी) अनुपम छवि देख कर (तथा उसके रूप की) शक्ति और चमत्कार का प्रभाव अनुभव कर (हृदयों में) हलचली मच गई। (जब उसने) रत्नजटित नकवेसर (नाक का आभूषण) पहिना (तो ऐसा लगता मानों) हाथियों के मद भर आया हो। (अर्थात्—सौन्दर्य अतिशय हो उठा)।

सिरागार किया सोळइ ही सुंदर,
आदिया सकति करण वस ईस ।
आगळ नडरा हुता अणियाळा,
काजळ दे चाढिया कसीस ॥१४४॥

(उस) सुन्दरी ने सोलहों शृङ्गार किये। आद्याशक्ति ने ईश्वर (शिव) को वश में करने के लिए पहिले से ही तीखे (अपने) नेत्रों में काजल लगा कर (उन्हें) और भी गहरे तीखे बना लिए।

पुहरी रा छेह ढळकता पासइ,
लाज करे अजळउ लीयउ ।
कोरज वळ पहरि रायकुवरी,
कुकम तिलक निलाट कीयउ ॥१४५॥

(उसने) पार्श्व में लटकते हुए पवरी (दुलहिन के चीर) के किनारों (पल्लों) को लज्जावश हाथों में ले लिया, (और) फिर राजकुमारी ने कोरज (कोरपाण-साडी का वस्त्र) पहिन कर, ललाट पर कुंकुम का तिलक बनाया।

ब्रह्मादिक सारीखा ब्राह्मण,
नवग्रह कन्हइ अनाथानाथ ।
वेई जोडी देखता बराबर,
हथलेवइ ले दीधउ हाथ ॥१४६॥

ब्रह्मा आदि (देवताओं) के समान ब्राह्मणों ने नव ग्रहों के पास दोनों अनाथों के नाथों–शिव और शक्ति–की जोड़ी बराबर देख कर हाथों का हथलेवा कर दिया।

मायं बइठा माया तणइ आगळि,
भरिया थाळ रतन बहु भाति ।
सनमुख हुए कहइ सुरराणी
अयचळ गवरि तणउ अहवाति ॥१४७॥

दोनों (वर-वधू) माया (देवी-देवता का थान) के सामने आ बैठे (जहां) अनेक प्रकार के रत्नों से थाल भरे हुए थे। सुर रानी (शची) ने सामने आकर कहा—गौरी का सुहाग अविचल हो।

दिस राजा आगळि दाखियउ
राज परीखउ काइ रूख ।
अचरिज सहु रहियउ अंतेउरि,
माया अरइ बोलिया मुख ॥१४८॥

(किसी ने) राजा दक्ष के पास आकर कहा—आप आकृति (शिव की वेष भूषा) से क्या परीक्षा कर रहे हैं? सारा अन्तःपुर आश्चर्यचकित रह गया अब (स्वयं) माया मुंह से बोली (शिव की प्रशंसा करने लगी?)।

सोना रा कळस घणू ताइ सु दर
मण मांडिया इकवीस मसाड ।
जडिया कु दण तणी जेवडी
वांस जिके लागा ब्रह्मांड ॥१४९॥

सोने के कलशों से, अत्यधिक सुन्दर इकीस मजबूत खंड बनाये गए, (और) (ऊंचे) आकाश तक लगे हुए जो बांस थे, (उन्हें) कुन्दन की रस्सियों से बांधा गया।

आयउ राजान सिहासण ऊतर,
सिध साधक तेडोया सिध ।
पारभ कोध कुवरि परणावण,
वेह वाधी भली विधि ॥१५०॥

राजा (दक्ष) सिंहासन से उतर कर आया, (और) (विवाह कार्य की) पूर्ति के लिए सिद्धि-साधकों को बुलाया। भली प्रकार वेह (मटकियों की पंक्ति) बांध कर, राजकुमारी का विवाह प्रारम्भ किया।

वामा अग गवरि आठ गण आगळि,
लखइ अलख कुण ताळी लाइ ।
मृग तणी खालडी न नीसरि,
वइठा बिहु विचइ विछाइ ॥१५१॥

सम्पूर्ण मृग की खाल बिछा कर दोनों (वर-वधू) बीच में बैठ गए। (शिव के) बायीं ओर गौरी व आठों गण सामने थे। अलख (शिव की महिमा) को कौन ध्यान लगा कर (भी) देख सकता है ?

वीवाह करण तेथ वैठा ब्राह्मण,
समधा अगिनि सीचतइ सारि ।
नवग्रह दश दिग्पाळ निजीकी,
अथवा वरइ करइ आचार ॥१५२॥

वहा यज्ञ की अग्नि को घी से सींचते हुए, ब्राह्मण विवाह कराने के लिए बैठे। नवों ग्रहों और दशों दिग्पालों के समीप अथर्व-वेदी (ब्राह्मण) वैवाहिक आचार करने लगे।

मानव ताइ किसू किसू ताइ मराधर
जाग क चापडा भजांग ।
मिलिया इय इतरा दखिरामुख
घासइ मुगट तियां घमसारा ॥१४३॥

मानवों और नागों की तो बात ही क्या वे बचारे अनजान क्या जानें ? यहां (मडप) में इतन इन्द्र (राजा) एकत्रित हुए कि घमासान (अत्यधिक भीड़) में उनके मुकुट (एक दूसरे से) घिसन (रगड़ने) लगे।

भजळ करि रतन कांचळी भाडी
भादिया सकति भनाथांनाथ ।
सालइ सनमुख होइ भगन सू
हाथ तपे तप दीन्हा हाथ ॥१४४॥

(हवन निमित) कवच का परदा कर (तथा) रत्नों से अञ्जलि भर आद्याशक्ति और शिव ने सम्मुख होकर अग्नि के ताप से तपते हुए हाथों को यज्ञाग्नि की ओर किया ?

मसाग सिमा हिज भात सरदही
रामहर जिका दिखाली रीत ।
गीत तिके मंगळीक गाइजै
गाया तियइ दिहाडइ गीत ॥१४५॥

(उस दिन) राजा (दक्ष) ने जो (वैवाहिक) रीति मर्यादा की वही संसार में चल पड़ी। उस दिन जो मांगलिक गीत गाये गये वही गीत (आज संसार में) गाये जाते हैं।

ऊतरिया परण वधाऊ आया,
कतराइ अर्थ खरचिया कुवेर ।
आया खडे डेरइ एकरसउ,
घणघट घमड कियइ बहु घेर ॥१५६॥

(शिव और शक्ति) विवाह कर के (मण्डप से नीचे) उतरे (तो) वधाईदार आये। उस समय कुवेर ने कितना ही धन खर्च किया (बांटा)। एक वार (वहा से) चल कर (वे) अत्यधिक ठाठ-बाट और भारी भीड के साथ (बारात के) डेरे मे आये।

नयणा तणा वाण नीछटता,
निमख निमख ताइ वाधइ नेह ।
रुत जाणती समउ जाणीयउ,
साईं सू पहिलकउ सनेह ॥१५७॥

(गौरी के) नयनों से छूटते हुए बाणों (मुग्ध दृष्टिपात) से निमिष-मिमिष में (शिव के) स्नेह की वृद्धि होने लगी। ऋतु और समय का ज्ञान कर (उसने) प्रियतम (शिव) से पूर्व जन्म के स्नेह का ज्ञान किया (स्मरण किया)।

मिलिया सेज आप रइ समुचइ,
वाता रस रहियउ सुविचार ।
कहइ सती प्रभु रूप प्रगट करि,
सिगळउ ही देखइ ससार ॥१५८॥

(वे दोनों) अपने समुच्चय (समूचे तन-मन) से सेज पर मिले (आलिङ्गनबद्ध हुए), (और) अच्छी विचार पूर्ण (आपस की) वातों का रस रहा। सती ने कहा—हे प्रभु ! अपना (असली) रूप प्रगट करो (दिखाओ) (जिससे) सारा ही ससार देख सके।

दुनियान सयल राजान देखस्यइ,
पग २ कु दण झारिजइ पाज ।
दरीखानइ नांखिया दुलीचा
आवण तणी हुई आवाज ॥१५९॥

दुनिया के सभी राजा देखेंगे। पग-पग पर कुन्दन के पद चिह्न बनने लगे (?) दरीखाने (सभागृह) में गलीचे बिछ गए, (और) (शिव के) पधारने की आवाज (पूर्व सूचना) हुई।

कियउ प्रगट प्रभु रूप कहतां
वदतां जे पहिली वाखांण ।
आयउ वोल तियां रउ ऊपर
दूल्हउ जिम आयउ दीवाण ॥१६०॥

कहते ही प्रभु (शिव) ने रूप प्रगट किया। पहिले जो बखान (रूप वर्णन) किया जाता था, उनसे भी ऊपर यह बोल आया (अर्थात्—उन सभी रूपों से यह रूप श्रेष्ठ रहा)। दीवान (शिव) दूल्हे के रूप में आये।

आणीस किसू मह इंद्र किसू आखियइ
असकी छव जोवतां अनूप ।
ईसर तणइ रूप रह आगइ
रव सहु हुवइ अनेरा रूप ॥१६१॥

(उनकी) छवि ऐसी अनुपम दिखाई देती थी (कि उसके आगे) क्या नृप और क्या इन्द्र (की छवि) का बखान किया जाय। ईश्वर (शिव) के रूप के आगे दूसरे सभी रूप रद्द हो गए।

आठा पहरा तणइ आतरड,
करे परधाना वात कही ।
आया किम इतरी अवगाहै,
राव तणइ मन खुटक रही ॥१६२॥

(दक्ष के) प्रधानों ने कहा-आठ पहर का अन्तर (विलम्ब) करके आप कैसे आये ? इस (बात) का विचार कर राव (दक्ष) के मन मे खुटक (चिंता) रही ।

परधान कहइ किम राजा परिछउ,
मनछा रथ चालइ महिराण ।
भाजण घडण अउहिज अनमीभड,
किया इयइ हिज वेद कुराण ॥१६३॥

(तब शिव के) प्रधानों ने कहा—राजा (दक्ष) क्या जाने ! (शिव का) रथ समुद्र पर (भी) मन (के अनुकूल वेग) से चलता है । ये (शिव) ही सृजन और संहार करने वाले अजेय योद्धा हैं, (और) वेद-पुराण (भी) इन्हीं के बनाये हुए हैं ।

दाखवियउ घणूं घणउ कहि दूजइ,
शंभु अथगा प्रभु वाय वहइ ।
आपण दिख अहमेव अहगळी,
कोडि न मानइ वात कहइ ॥१६४॥

दूसरे लोगों ने बहुत प्रकार से बहुत कुछ कहा (कि) भगवान शंभु (का प्रताप) अथाह है, (यह बात) सभी लोग जानते हैं । (लेकिन) अपने अहंकार मे ही समाये हुए (राजा) दक्ष ने करोड उपाय करने पर भी (किसी की) कही हुई बात न मानी ।

इस दिहाड़ा जान रासी राजा दिस
मत पखउ दाइजउ दियउ ।
सुसरइ वळे जवाई सरिसउ
क्यु हेक खाटउ चीत कियउ ॥१६५॥

राजा दक्ष ने दस दिनों तक बारात को रखा (और) अनंत दहेज दिया। पर फिर भी श्वसुर (दक्ष) ने जामाता (शिव) से कुछ जी खट्टा कर लिया।

जणावइ नहीं जिके वडु जाणइ
लाखउ भतर भेद लहइ ।
दिस क्यु हेक ग्रहमेव दाखवइ
बेपरवाही सभ वहइ ॥१६६॥

जो बड़े ज्ञानी हैं वे (अपने ज्ञान का) विज्ञापन नहीं करते। हर (शिव) भीतर के भेद को जान गए थे। (इसीलिए) दक्ष ने (जब) कुछ अहंकार प्रकट किया (तो) शंभु ने बेपरवाही दिखाई।

कवळइ मांगण किया कवि करण
अगहथ बांघ करे वड आंन(जग?) ।
जीतह तगा दिवाड़ जागी
मायउ सड़ किळास ममग ॥१६७॥

(उस) कीर्ति-भानु (श्रेष्ठ कर्त्ता-शिव) ने कवियों को (दानादि देकर) उऋण कर दिया (उनका दारिद्र्य हर लिया) (और) बड़ा भाग्य करके दिग्विजय के पापड़ा-पत्र बांध दिये (अपना यश फैलाया)। जीत के नगाड़े बजवाते हुए बरसाई सहित पास कर (वे) कैलाश (पर्वत) पर आये।

वर लाडो मोतिया वधाया,
अति आणद विनोद अति ।
मगळाचार सिवपुरी माहे,
गूडो ऊछळी दैव गति ॥१६८॥

बड़े आनद और बड़े विनोद के साथ मोतियों से वर-वधू का स्वागत किया गया। शिवपुरी में मगलाचार हुआ (और) विचित्र प्रकार से गुलाल उछली (आनदोत्सव हुआ)।

जुग वउळिया किताइक जग पुड,
दिख आरभियउ जगन दयाल ।
पन्नग लोक स्रग लोक तणा सहि,
भुवण तणा तेडिया भुपाल ॥१६९॥

पृथ्वी तल पर कितने ही युग बीत गए। राजा दक्ष ने यज्ञ आरम्भ किया। नागलोक, स्वर्गलोक (तथा) समस्त भुवनों के राजाओं को निमंत्रित किया गया।

पन्नग लोक मृत लोक तणा प्रभु,
वडा रिखीसर जोवै वाट ।
दहनामी दीदार देखवा,
घडे हुवा हूवा गजथाट ॥१७०॥

नागलोक (तथा) मृत्युलोक के राजा (और) बड़े-बड़े ऋषीश्वर वाट देखने लगे। शिव के दर्शन के लिए सभी एकत्रित हुए, बड़ी भीड़ हुई।

आदर जिए ठांव भएाउ होवइ आगइ
थोड़ा हुवइ आदर तिए ठाम ।
जाईजइ क्यु तोयँ जाइगह,
महि अजाद रासजइ माम ॥१७७॥

जिस जगह पहिले अधिक आदर होता था वहीं (यदि) थोड़ा आदर मिले (तो) ऐसी जगह क्यों जाया जाय ? पृथ्वी पर प्रतिष्ठा और मर्यादा रखी जानी चाहिए।

असरी ताइ भ्रांत न आणी अतरि
हित हिय करे जांगियउ हेक ।
माता पिता मिलण ऊमाहइ
ऊथपिया शिव वचन अनेक ॥१७८॥

उस (सती) ने इतना भी विचार मन में नहीं किया और (अपने माता-पिता से मिलन के) हित की ही एक बात सोची। माता-पिता से मिलन के उत्साह में (उसने) शिव के अनेक वचनों का उल्लंघन किया।

वरजइ ताइ ब्रह्मा विसन इन्द्र सुर नर
मइ छुडिया भिगन पूजुई जात ।
दिरस जागेसर कोइ न दीसइ
वडे वडेर पूछी यात ॥१७९॥

ब्रह्मा विष्णु इन्द्र आदि (दूसरे) अनेक प्रकार के देवता तथा मनुष्य (जो) यज्ञ में आ जुड़े थे (राजा को) बरजने लगे। बड़ों-बड़ों ने दक्ष से पूछा कि योगीश्वर (शिव) क्यों नहीं दिखाई पड़ते हैं ?

मुहड़ै भरि वोलियउ महीपति,
नेडइ कुण इसडउ अवधूत ।
गढपत तितरइ दाखतउ गाहड,
भड अणजाण हुयउ भयभूत ॥१८०॥

राजा (दक्ष) ने भारी मुह से कहा कि ऐसे अवधूत को कौन बुलाये ? गढपति (दक्ष) ने तभी तक गर्व दिखाया जब तक वह अनजान (शिव के प्रताप को जान कर) भयभीत (नहीं) हो गया ।

ऊठिया विसन अनइ ब्रह्मादिक,
जिगन न होवइ राव अजाण ।
धुर ताइ करइ प्रणाम वृखभध्वज,
कथ ब्रह्म तउ वेद पुराण ॥१८१॥

विष्णु तथा ब्रह्मादिक (देवता) (यज्ञ से) उठ गये (और कहने लगे)—(हे) ना समझ राजा, यज्ञ नहीं होगा । (सृष्टि के) प्रारम्भ से ही (लोग) वृखभध्वज (शिव) को प्रणाम करते आये हैं । ब्रह्मा तो (उनके सामने) वेद-पुराण पढते हैं ।

अहमेव गयउ दिख वाळउ ऊतर,
हुअउ सचीत धरा दह हाथ ।
ब्रह्मा विसन वडा सुर वळिया,
अह ज जिकू वावरजइ आथ ॥१८२॥

दक्ष का अहङ्कार उतर गया । धरती से दस हाथ (ऊपर रहने वाला) चिन्तित हो गया । ब्रह्मा (तथा) विष्णु (जैसे) बडे देवता लौट गये । वही पूंजी थी जिसके (भरोसे) (सारा) खर्च था (?) ।

आदर जिण ठांव घणउ हावइ आगइ
थोड़ा हुवइ आदर तिण ठाम ।
जाईजइ क्यु तीमै जाइगह,
महि मरजाद राखजइ मांम ॥१७७॥

जिस जगह पहिले अधिक आदर होता था वहीं (यदि) थोड़ा आदर मिले (तो) ऐसी जगह क्यों जाया जाय ? पृथ्वी पर प्रतिष्ठा और मर्यादा रखी जानी चाहिए।

अतरी ताइ आंत न आणी अतरि
हित हिज करे जागियउ हेक ।
माता पिता मिलण ऊमाहइ
ऊथपिया शिव वचन अनेक ॥१७८॥

उस (सती) ने इतना भी विचार मन में नहीं किया और (अपने माता-पिता से मिलन के) हित की ही एक बात सोची। माता-पिता से मिलने के उछाह में (उसने) शिव के अनेक वचनों का उल्लङ्घन किया।

वरजइ ताइ ब्रह्म विसन इन्द्र सुर नर
अइ जुड़िया जिगन पूजुई जात ।
दिरक जोगेसर कांइ न दीसइ
वडे वडेरे पूछा वात ॥१७९॥

ब्रह्मा विष्णु, इन्द्र और (दूसरे) अनेक प्रकार के देवता तथा मनुष्य (जो) यज्ञ में आ जुड़े थे (दक्ष को) बरजने लगे। बड़ों-बड़ों ने दक्ष से पूछा कि योगीश्वर (शिव) क्यों नहीं दिखाई देते हैं ?

मुहड़ै भरि बोलियउ महीपति,
तेडइ कुण इसडउ अवधूत ।
गढपत तितरइ दाखतउ गाहड,
भड अणजाण हुयउ भयभूत ॥१८०॥

राजा (दक्ष) ने भारी मुह से कहा कि ऐसे अवधूत को कौन बुलाये ? गढपति (दक्ष) ने तभी तक गर्व दिखाया जब तक वह अनजान (शिव के प्रताप को जान कर) भयभीत (नहीं) हो गया ।

ऊठिया विसन अनइ ब्रह्मादिक,
जिगन न होवइ राव अजाण ।
धुर ताइ करइ प्रणाम वृखभध्वज,
कथ ब्रह्म तउ वेद पुराण ॥१८१॥

विष्णु तथा ब्रह्मादिक (देवता) (यज्ञ से) उठ गये (और कहने लगे)—(हे) ना समझ राजा, यज्ञ नहीं होगा । (सृष्टि के) प्रारम्भ से ही (लोग) वृखभध्वज (शिव) को प्रणाम करते आये हैं । ब्रह्मा तो (उनके सामने) वेद-पुराण पढते हैं ।

अहमेव गयउ दिख वाळउ ऊतर,
हुअउ सचीत धरा दह हाथ ।
ब्रह्मा विसन वडा सुर वळिया,
अह ज जिकू वावरजइ आथ ॥१८२॥

दक्ष का अहङ्कार उतर गया । धरती से दस हाथ (ऊपर रहने वाला) चिन्तित हो गया । ब्रह्मा (तथा) विष्णु (जैसे) बडे देवता लौट गये । वही पूजी थी जिसके (भरोसे) (सारा) खर्च था (?) ।

नदी गण चढी आठ गण आगळ
सापी मगड तणी ताइ साज ।
उण वेळा दिस रइ मुह आगळि
माई सती हुई आवाज ॥१८३॥

नदी पर चढ़ कर आठ गणों को साथ लेकर और अनु
ल्लङ्घनीय मर्यादा को लांघ कर (आई हुई) सती के आगमन की
आवाज उस समय दक्ष के सामने हुई ।

अऊकार दीन्हउ न कीयो आदरि
पडलइ नेत्र तिण छाया पाप ।
दोठी सती आवती दुवारइ
बइठउ हुए अपूठउ बाप ॥१८४॥

(दक्ष ने) न तो 'आओ-आओ' कहा (और) न आदर
(ही) किया । उसके नेत्रों में पहिले ही पाप छाया हुआ था ।
सती को द्वार पर आती हुई देख कर पिता (दक्ष) पीठ फेर कर
बैठ गया ।

वइरी ही जउ हुवइ घरे आवइ
आदर तिहां कीजइ अग्यान ।
वाप हुती वीहती न बोलइ
माता ही दीयइ सुध मान ॥१८५॥

जो वैरी ही हो (और) वह घर पर आये तो वहां पर (घर
पर वा) ना समझ (भी) (उसका) आदर करते हैं । पिता से
डरती हुई (सती) नहीं बोली (पर) माता न भी शुद्ध मान
ही दिया ।

सुहा ताइ विसन ब्रह्म ताइ सुहा,
इद्र सुहा आसीस दीयइ ।
न कहइ सुहा घणू नान्हडियउ,
कवळ मजीठउ राव कीयइ ॥१८६॥

विष्णु ने उसे सौभाग्य का आशीर्वाद दिया, ब्रह्मा और इन्द्र ने भी दिया, (पर) राजा ने अत्यल्प आशीर्वाद भी नहीं दिया (और) मुह लाल कर लिया (क्रोधित हो उठा) ।

अकळ अछद अजोनी अवचळ,
खत्री ऊजड काइ खडइ ।
दिरक जोगेसर इसउ देखता,
चरणे रज तिकाइ चढइ ॥१८७॥

(जो) अनत कला युक्त, असीम (सर्वव्यापी), अयोनि और अविचल (है)—ऐसे योगीश्वर (के प्रताप) को देख कर, उनके चरणों की रज (मस्तक पर) चढानी चाहिए । (हे) क्षत्रिय दक्ष, कुमार्ग पर क्यों चल रहे हो ?

आन्या हु मेटि अठइ ताइ आई,
वात इयइ रउ अउहिज विचार ।
माण हवइ मन भग(तेथ) मरिजइ,
सती तणउ वायक ससार ॥१८८॥

(ऐसे) उस (मेरे पति) की आज्ञा का उल्लङ्घन कर मैं (जो) यहा आई हूँ, इस बात का यही विचार है कि जहा मान-भंग हो वहा मर जाना चाहिए । यही ससार (के लिए) सती का वचन (उपदेश) है ।

मराजारण करइ निंद्या ईसर री
गह दाखइ दखे गढ़ गांम ।
आ ऊपनउ सरीर ईय भी
किसउ सरीर सियै सु कांम ॥१८६॥

(यह) नासमझ (दक्ष) (अपने) गढ (और) गांव देख कर गर्व कर रहा है (तथा) शिव की निंदा कर रहा है। (मेरा) यह शरीर इसी (जनक) से उत्पन्न हुआ है, (अतः) ऐसे शरीर से भी क्या काम ?

तांमस कियउ सती तन त्यागण
आप रागण चालियउ कथ ।
हठ कर पड़ी हुतासण माहे
बीजउ हीं जगन कियउ धजमद ॥१९०॥

सती न क्रोध किया (और) विरक्त होकर (अपने) शरीर का त्याग करने के लिए उद्यत हुई। हठपूर्वक (वह) यज्ञाग्नि में (कूद) पड़ी। राजा ने (फिर) दूसरा ही यज्ञ किया।

सात हो ब्रह्मंड सकिया
पूड़ साते मकिया पयाळ ।
वाजिया लोह रहक सिर वाजइ
लागा युध करिवा लकाळ ॥१९१॥

सातों ही ब्रह्माण्ड कर गये (कर) सातों पाताल (भी) कर गये। योद्धा लड़ाई करने लगे। शस्त्र बजने लगे (और) तलवारें सिरों पर पड़ने लगीं।

धकचाळ हुवइ उतबग पडइ धड,
नड नाचइ अपछर निर (भग) पळ ।
भारथ तणउ पहाड महाभड,
जुडता अणी करइ वड जग ॥१९२॥

घमासन मच गया, धड़ और सिर पड़ने लगे, अप्सरायें निरता नाचने लगीं। युद्ध करने वाले पर्वत तुल्य योद्धा सेनाओं से भिड़ते हुए महान् युद्ध करने लगे ।

वजिया भड सिंधू राग वडाळा,
लथबथ भारथ घणा लोह ।
चद्रप्रहास खेलता चाचर,
छिलता छात तणी ताइ छोह ॥१९३॥

बड़ा सिंधू राग बज उठा (और) अनेक शस्त्रों से योद्धा युद्ध-रत होगए। राजा (दक्ष) के अहङ्कार से भरे हुए (योद्धाओं के) सिर तलवारों से खेलने लगे। (अथवा) राजा के प्रति क्रोध से भरे हुए योद्धा तलवारों से युद्ध का खेल खेलने लगे ।

धडछइ धार बिटूक हुवइ धड,
खाग व्रजाग वाव रण खेत्र ।
गण आठे वाजिया विसम गति,
निलवट सुर बाधियो नेत्र ॥१९४॥

तलवारें रणक्षेत्र में वज्राग्नि बरसाने लगीं (जिससे) (योद्धाओं के) शरीरों के दो-दो टुकड़े होने लगे (और) (रक्त की) धारा बहने लगी। शिव के आठों गण भयङ्कर युद्ध करने लगे (मानों) शिव ने ही ललाट का (तृतीय) नेत्र खोल दिया हो ।

विढता कुंभ निकुंभ वाकारइ
नव नाडिया आयइ रे नरिंद ।
ऊपर ग्रहे ग्राछटइ ग्रम्बर
ग्रहइ पळे ग्रावसत गिरिंद ॥१६५॥

युद्ध करते हुए कुंभ और निकुंभ (शिव के अनुचर) ललकारने लगे–अरे राजा नवों नाडियों (?) को देखो जो (पहाड़ों–योद्धाओं ?) को पकड़ कर ऊंचे आसमान से टकरा देते हैं (और) गिरते हुओं को फिर पकड़ लेते हैं ।

ग्राठे गण तिके महाभड़ ग्राखां,
एकाहेक चढता हाथ ।
लंक तणइ तोरण जाइ लागा,
भड़ ग्राछटइ तिके भाराथ ॥१६६॥

(शिव के) आठों गण, जिन्हें महान योद्धा कहा जाना चाहिए, प्रहार करने में एक से एक बढ़कर थे । उन्होंने युद्ध में जिन योद्धाओं को झटके से दूर फेंका वे लंका के तोरण तक (दक्षिणोदधि की सीमा तक) जा लगे ।

सादूळउ एक ग्रनेक सिंहरती,
घूमर कियइ फेरतउ घंस ।
बगतर हुता त्रूटइ बगतर
हाक समाती उडियइ हंस ॥१६७॥

(जिस प्रकार) अकेला सिंह अनेक मृगझुंडों (?) को (उनके) चारों ओर प्रहार करता हुआ नष्ट कर देता है (उसी प्रकार) शिव के अनुचरों की जिनके (जोश से फूलते हुए अंगों के कारण) कवचों के बंध टूट पड़ते थे हुंकार मात्र से (ही शत्रुओं के) प्राण–पंखेरू उड़ जाते थे ।

भृग आगळि दिरक गयउ भाजे नइ,
प्रभु अ्रबेलि तुहारी पूठि ।
जग माहे तू मुखो जाणियइ,
दिरख रिख वचन कहइ मुख दूठि ॥१६८॥

दक्ष भाग कर भृगु के आगे गया, (और)–हे प्रभु मैं तुम्हारी शरण में हू, (मेरी) रक्षा करो। तुम (ही) ससार मे सर्वप्रमुख माने जाते हो–(इस प्रकार के) वचन ऋषि से कठिनता पूर्वक (अथवा दुष्टता पूर्वक) दक्ष ने मुख से कहे ।

भृग कीया प्रगट जिग महा हुती भड,
वेढीमणा कुदरथी वीर ।
आठे गण पाछा अउहटिया,
एकण घाय मनाई हीर ॥१६६॥

भृगु ने (दक्ष की प्रार्थना मान कर) यज्ञ (कुण्ड) में से युद्ध करने वाले स्वाभाविक वीर योद्धा प्रगट किये, (जिन्होंने) एक ही बार में आठों गणों को हार (?) मनादी, (और) उन्हें पीछे हटा दिया ।

साभळियउ तरइ विसभर सउणे,
सती दियउ मृत, वळियउ साथ ।
वाणी ताइ ब्रहमड वखाणइ,
भारी एक हुयउ भाराथ ॥२००॥

इसके बाद विश्वम्भर (शिव) ने कानों से सुना कि सती ने मृत्यु का वरण किया (और) साथ गये हुए गण लौट आये। वाणी से उसका बखान किया जाये (तो वहा) एक भारी भयकर युद्ध हुआ ।

रउद ळ किन्यउ सिए धार रूप रुद्र,
पणइ स तीजइ नेत्र धियाग ।
फोट मनइ ब्रहमंड कांपिया,
जडा छुटी काढीयउ ज्याग ॥२०१॥

(यह सुनकर) उस समय शिव ने रौद्ररूप धारण किया (और) तीसरे नेत्र से अत्यधिक क्रोधाग्नि (निकली)। (पृथ्वी पर) के दुर्ग और ब्रह्माण्ड काँप उठे। (यज्ञ के) यज्ञ को जड़ से निकाल फेंका।

चढिया आइ पन्नंग कोप चढि,
रोस सरोस थरकिया रोम ।
पावक धू मइ पसइ परजळियउ
विकटी जटा विलागी व्योम ॥२०२॥

(शिव के) क्रोध के कारण (गले के) सर्प फुफकार उठे क्रोधजन्य उद्वेग से रोम थरकने लगे (तृतीय नेत्र की) अग्नि निर्धूम प्रज्वलित हो उठी (और) जटा विकट (रूप धारण कर) आकाश से जा लगी।

धमस सणाइ भनकार करइ धन,
विढणा भुव नीमिजइ भिवार ।
इकवीसे ब्रहमंड धडहडइ
सहइ न वासग भार-सहार ॥२०३॥

जिस समय शिव धनुष्टंकार की ध्वनि करके लड़ने को उद्यत हुए (तो) इक्कीसों ब्रह्माण्ड काँप उठे (और शेषनाग (पृथ्वी के) भार को संभाल न सका।

सूरातन जाही घणाइ सूरातन,
ईसर तणा वाधिया अग ।
प्रळय काळ हुसी ताइ प्रिथमी,
द्रोही तणा थरकिया द्रग ॥२०४॥

वीरों के शौर्य की तरह अत्यधिक शौर्य से (जब) शिव के अ ग प्रत्यग फूलने लगे (तो) पृथ्वी पर प्रलय काल होगा (ऐसा जानकर) शत्रुओं की वस्तिया कापने लगीं ।

वरियाम जिको विकराळ वडाळइ,
हद वहद हद करण हद ।
तीजी जटा काढियउ ताहरा,
भड ताइ सुजसउ वीरभद ॥२०५॥

तब (शिव ने अपनी) तीसरी जटा से वीरभद्र नामक सुयशस्वी योद्धा को उत्पन्न किया, जो श्रेष्ठ (वीर), बड़ा विकराल (योद्धा) और अत्यधिक वृहदाकार (?) (रूप वाला) तथा परम असीम था ।

बीजइ पुड करण जिगन भड बेऊ,
दिख पडताळण हुकम दिया ।
करवा भारथ वडउ कुदरती,
'कुदरत रइ घर प्रगट किया ॥२०६॥

बडे चमत्कारी (शिव) ने युद्ध करने के लिए प्राकृतिक वीर को प्रगट किया, (और) दक्ष के दूसरे यज्ञ को फिर ध्वस्त करने के लिए (तथा) उसकी खबर लेने के लिए (उस) योद्धा को 'हुक्म दिया ।

ठसमीम करे पृठियौ तिमारइ,
पग सातमइ परठिया पयाळ ।
ब्रहमंड एकवीस मइ विमागउ
चतमग जिमइ करतो प्राळ ॥२०७॥

(वह) फेर तब (शिव को) प्रणाम करके उठा। उसके पैर सातवें पाताल तक पहुँचे और उसका क्रोधित मस्तक इक्कीसवें ब्रह्मांड से जा लगा।

जाळामळ बळे न मरइ मारियौ,
धरणी ज दीन्हउ खडग सिध ।
मड अनमीए जुडर्ता भारथ
वाहइ प्राविधि किसी विध ॥२०८॥

वह न (तो) अग्नि में जलाया जा सकता था (और) न मारने से मर ही सकता था। स्वामी (शिव) ने (उसे) सिद्ध (सर्व विजयी) खड्ग दे दिया था। (वह) अजेय योद्धा युद्ध करते समय किस (अद्भुत) प्रकार से आयुध के प्रहार करता था।

मयमंक हुयो अनेक महाभड
दिख री माज गई मकभूर ।
प्रयो (आयो) दिख रइ घट ऊपर,
केवा मांगण वडउ करूर ॥२०९॥

अनेक महान योद्धा भयत्रस्त होगये (और) दक्ष के (तो) होश (ही) गायब होगए (?)। यह अत्यंत क्रूर (योद्धा) दक्ष के द्वार पर (सती की मृत्यु का) बदला लेने के लिए आया।

नाठी अगन नइ राव नीसरियउ,
भड मिटिया छडे भाराथ ।
जावा न दइ किसो दिस जावइ,
बळवत तरइ पसारो बाथ ॥२१०॥

(यज्ञ की) अग्नि बुझ गई और राजा (दक्ष) निकला। योद्धा (भी) युद्ध छोड़कर भागने लगे। तब (उस) बलशाली (योद्धा) ने बाहें पसारी (और उन्हें) जाने नहीं दिया। किस ओर से जाये ?

बगतर सहित ऊछळइ बरगा,
घीब पडइ नेजाळ घड ।
भाजइ भृगिट अरी चा भिडता,
घाय रमाडइ ति विध घड ॥२११॥

(योद्धाओं के) अंग कवच सहित (कटकर) उछलने लगे। शरीरों पर भालों की चोटें पडने लगीं। युद्ध करते हुए शत्रुओं के सिर कँट कर गिरने लगे। (वह योद्धा-वीरभद्र) सेना को इस प्रकार घायल करने लगा।

चट घट विकट खेलता चाचर,
खाग विभाग करइ भड खड ।
कसकइ ताइ कोपट कचरीता डोहइ,
सतहर करइ ताइ चिहड ॥२१२॥

विकट प्रकार से युद्ध करते हुए उस योद्धा की तलवार शीघ्रतापूर्वक शत्रु के शरीर के दो भागों में टुकड़े करने लगी। फिर भी (उसका) क्रोध कसकता रहा (और वह घायलों) को कुचलता हुआ फिरने लगा, (तथा) शत्रुओं का सर्वनाश करने लगा।

कथर कूट मांसिया भड किवरा,
छूटइ पसरा सोह छर ।
घाम घुडइ प्राधरस घुळ सा,
घरण थट विकट वाढाळघर ॥२१३॥

(उसने) कितने ही योद्धाओं को मार कर कुचल डाला। शस्त्र प्रहार से (रक्त की) पिचकारियां छूटने लगा। (उस) खड्गधारी विकट (योद्धा) से युद्ध करते समय विशाल शत्रु दल घावों से पूर्ण होगया।

थुछ जळ ज्यांही माछळा तडफड
भड तडफड़ सिरा विध भाराथ ।
भमकइ रुधिर भडअर भागा
एकरण कहर छाविया हाथ ॥२१४॥

जिस प्रकार थोड़े पानी में मछलियां तड़पती हैं उसी प्रकार युद्ध में (घायल) योद्धा तड़पने लगे। घायल शरीरों से रुधिर वेगपूर्वक निकलने लगा। (उसके) एक ही प्रहार ने (शत्रु पक्ष पर) वज्रपात (सा) कर दिया।

भारथ घउ खेल विखाळण भारथ
भड छाइ त्रिविध घुडइ घण घाय ।
दिस राजान सिधूर तणइ दुख
वेणीदंड राखियउ विलाय ॥२१५॥

युद्ध का भयङ्कर खेल दिखाने के लिए, अनेक प्रहार (करता हुआ) वह सेना से तीनों प्रकार से (?) भिड़ा। राजा पक्ष ने सिन्दूर वृक्ष पर वेणीदंड (?) को छिपा कर रख दिया।

वीजै पुड किया जिगन भड वेऊ,
तीजउ जगन माडियउ तिण ।
होमाया उण हीज हुतासण माहे,
महि एक ऊभा मुगटमण ॥२१६॥

दूसरे यज्ञ को (भी जव) योद्धा ने दूसरी बार ध्वस्त कर दिया (तो) उस (दक्ष) ने तीसरा यज्ञ रचा। उसी हुताशन में कई (?) (पास में) खड़े हुए राजाओं को होम दिया (?)।

वेणीडड छोड लियउ वाकारे,
आवध दीन्हा आथ अनग ।
कहिसि पछइ तइ मनू न कहियउ,
जुडस्या बिन्हे करारइ जग ॥२१७॥

(उसने) ललकार कर वेणीडड छुड़वा लिया (और उस) निरस्त्र के हाथ में आयुध देकर (कहा कि) दोनों करारा युद्ध करेंगे, फिर कहोगे (कि) तुमने मुझे कहा नहीं।

जाणी सहि वहि जुडता जोडइ,
धड नीमजइ ऊबगइ धार ।
आवध ग्रहिया हाथ आप रा,
अवर लागउ वडउ इयार ॥२१८॥

सव कुछ जानते हुए उसने उमडती हुई रक्त धाराओं में धड़ों को डुवाने की युक्ति जोडली (?)। हाथों मे अपने आयुध लेकर (वह) महान योद्धा (?) आकाश से जा लगा।

खुटिया जिन्हे मावरत जुहरी
घाए रीठ घडड़ धमचाळ ।
उड मछा मावधां मुहड
पाछा दियण परत री वार ॥२१९॥

दोनों योद्धा युद्ध में जुट गये (और तलवारों के) प्रहारों से अत्यधिक घमासान युद्ध करने लगे । झपट पैर रखने के समय भी (वे) प्रमत्त योद्धा झपट कर आयुधों के सामने आते थे ।

धुस भूठिया जिन्हे भड धुकिया
धारा मांहृ घूमिया धड़ ।
रुघ वाजा नीसाण वीर रस
नाचइ सत थइ भड निवड ॥२२०॥

युद्ध में संलग्न दोनों योद्धा क्रोधित हो उठे । उनके धड़ तलवारों की धारों पर विचरण करने लगे । वीररस के ओजस्वी वाद्य बज उठे (जिन्हें सुनकर) योद्धा भयंकर युद्ध नृत्य करने लगे ।

भागइ पत्र जोगणियां तणा पूरिया
ग्रीभ्रण गूद गिलइ मउगाळ ।
वीजा गिरवर किया बहादर
चुणिया सुरख मंजर चाळ ॥२२१॥

योगिनियों के खप्पर (रक्त से) भर गये । गृद्धिनियां मांस भक्षण करने लगी । (उस) वीर ने योद्धाओं के अस्थिपञ्जरों के ढेर चुन चुन कर दूसरे (पहाड़) ही बना दिए ।

वेरणी डड वाळियउ वळाके साम्हउ,
साम्हो अणी लियउ दिख साहि ।
तिल तिल तिल करे पुरजा तन,
होमइ चउरण ही ज हुतासरण माहि॥२२२॥

वेणीडड को अग्नि के सन्मुख कर जला डाला। राजा दक्ष को शस्त्र की नोक के सामने लिया (निशाना बनाया)। शरीर के छोटे छोटे टुकड़े करके उसी हुताशन मे होम दिया।

बीजइ पुड किया जिगन भड बेऊ,
वड रावत काढियउ विचाळ ।
हुतासरण उरण ही ज लागइ हठ,
दिरक होमिया ताइ सहित दयाळ ॥२२३॥

(इस प्रकार) दूसरी बार (उस) दूसरे यज्ञ को ध्वस्त करके (उस) महान योद्धा ने (उसे यज्ञ कुण्ड में से) निकाल फेंका, (और) उसी यज्ञाग्नि में हठपूर्वक दक्ष को उसके साथियों सहित होम दिया (?)

जइ जइ जपइ इद्र सुर नर अहि,
दया कीजइ हिवइं दयाळ ।
पायउ, दिरक आपरणउ कमायउ,
प्रभु तू प्रथी तरणउ प्रतिपाळ ॥२२४॥

इद्र, सुर, नर और नाग जयजयकार करने लगे-हे दयालु,, अब दया कीजिए ! दक्ष ने अपने किये का फल पा लिया। हे प्रभु ! तुम पृथ्वी के रक्षक हो।

माखइ ताइ अरज करे ईसर सू
सांम सू ही ज अपराध सहइ ।
मळधारी मानवी न मू झइ
कहइ ज ब्रह्मा विसन कहइ ॥२२५॥

ब्रह्मा तथा विष्णु ने विनयपूर्वक शिव से कहा कि हे स्वामी ! अपराधों को सहन करने वाले तुम ही हो। दोषों से भरे हुए ये मानव (इस रहस्य को) नहीं समझ पाते ।

दीनदयाल दमा (न) दया करि
अपराधी बगसउ अपराध ।
माखइ दिख शिव सु मेवासा
सुख री थळे करण मन साध ॥२२६॥

हे दीनदयाल क्षतिराय दया करके अपराधी का अपराध क्षमा करो। यह दक्ष (बड़ा नासमझ है जो) शिव से शत्रुता करके भी सुख प्राप्त करने की इच्छा मन में रखता है ।

मायच छइलइ थराउ मढियउ
की प्रगट थे हुती काय ।
दीन्हउ राजान थळ विसु नु
दहनांमी साइ करे दयाल ॥२२७॥

(उनकी प्रार्थना सुनकर शिव ने दक्ष के) बकरे का मस्तक लगा दिया (और) उससे (उसके) शरीर को जीवित कर दिया। दयालु (शिव) ने राजा दक्ष को पुनः अमर कर दिया ।

वुहराडे भसम जिगन री वाधी,
नाखाडइ हेमगिर निजीक ।
पारवती अवतार प्रगटसी,
कहियउ तरइ ब्रह्म मरमीक ॥२२८॥

यज्ञ की भस्म बुहार कर बाँधली (और उसे) हिमगिरि के समीप पटक दिया। तब मर्म को जानने वाले ब्रह्मा ने कहा (कि उससे) पार्वती का अवतार प्रकट होगा।

जोडी अचळ सकत सिव री जग,
हेक विनोद चढता हेक ।
उण ही ज ताइ अत रायकु वारी,
आई रा अवतार अनेक ॥२२९॥

ससार में शक्ति और शिव की जोडी अचल है। एक से एक चढते हुए शक्ति के अनेक अवतारों मे भी राजकुमारी (पार्वती) की (महिमा) अधिक है।

जागिंद्र नमो गति तूझ जोवता,
भोळी चक्रवति जगत भणइ ।
हूओ ज होण पदारथ हूतउ,
घणदानी ने ठाह घणइ ॥२३०॥

हे योगीन्द्र, (तुम्हें) नमस्कार है। तुम्हारी लीला को देखकर (ही) ससार (तुम्हें) "भोली चक्रवर्त्ती" (भोलेनाथ ?) कहता है। हे अतिशय दान देने वाले, (तुम्हें) भूत, भविष्य और वर्तमान सभी का पूरा ज्ञान है।

भद्र तेड़िया अपूठउ भारथ,
भरिया वळ ईसवर ध्यांन ।
वाज्यउ पड़हउ ससार ववीतउ
गति अवगति सहू जांणइ ग्यांन ॥२३१॥

शिव ने वीरभद्र को युद्ध से वापिस बुला लिया (और) स्वयं पुनः ध्यानावस्थित हो गए। गति अवगति के सारे ज्ञान को जानने वाले (शिव के यश) का नगाड़ा, (सारे) ससार को विदित करवाता हुआ बजा।

हेमाचळ खेलता हसता
हसत दियउ मिना रइ हाथ ।
ढूक कोइ भावी ढूका
सिगळइ लियइ अतेवर साथ ॥२३२॥

(एकबार) हंसते-खेलते हुए हिमाचल ने (प्रेम पूर्वक) मैना के हाथ में हाथ दिया। (तब मैना) सारे अन्तःपुर को साथ लेकर किसी पर्वत शिखर पर आई (?)।

गिरवर रइ सिखर माडियउ गाहड
तिको अचरिज पेखीयउ तिण ।
सोच हुओ मन माहि संपेखे
वध कमळ किम वार विण ॥२३३॥

पहाड़ के शिखर पर आनन्द-क्रीड़ा (?) आरम्भ हुई। (उस समय) उसन (मैना ने) यह आश्चर्य देखा। (उसे) देख कर (उसके) मन में सोच हुआ (कि) पानी के बिना कमल कैसे बढ़ सकता है (?)।

किया प्रणाम जोडे वेऊं कर,
तिण नइडउ आवियउ तरइ ।
बाळक देखे लियउ बोलाए,
कामिण आप उछाह करइ ॥२३४॥

(उस आश्चर्य युक्त बालक ने) दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया, (और वह) फिर उसके (मैना के) समीप आया। बालक देखकर (उस) कामिनी (मैना) ने स्वय उत्साह पूर्वक (उसे) बुला लिया।

अउछाडे लीध रिदइ रइ आगइ,
आणियउ ताइ आप रे आवास ।
मिलीयइ नाळ उछाह माडिया,
पळ एक तिया न छोडइ पास ॥२३५॥

(मैना ने) दोनों हाथों से खींचकर (उसे) हृदय से लगा लिया और अपने घर ले आई। परस्पर मिलते ही आनन्द होगया। एक पल के लिए भी उनका साथ नहीं छूटता।

खिण पालणइ गोद लीजइ खण,
चवर ढुळइ चिहु दिसे सुचग ।
बाळक तणइ बाधिया बधण,
ऐकीका सइ सालै अग ॥२३६॥

एक क्षण तो पलने में और दूसरे ही क्षण (उसे) गोद मे लिया जाता है। (उसके) चारों ओर सुन्दर चवर डुल रहे हैं। (उस) बालक के अग-प्रत्यग का प्रत्येक सौष्ठव आकर्षित करने वाला है।

धवराइण प्रूय म धांणे धरसां
चित्र पुहर करतां चाळ ।
मन लागौ बाळक माईतां
पूजो छोडो सहु दुवाळ ॥२३७॥

माता-पिता का मन (इस) बालक में (ऐसा) लगा कि (उन्होंने) दूसरे सब धन्धे छोड़ दिये। (उसे) लाड़पूर्वक खेलाने में (उन्होंने) धैर्य धरना नहीं जाना (और) चारों पहर (उससे) विनोद करते रहे।

मावीतां तणी इसी तइ माया
ध्यांन रहइ धर प्राण प्राधार ।
वाधइ सायर वळे ज्यु ही विप्र
वासुर वरस तणइ विस्तार ॥२३८॥

माता-पिता पर उसकी माया ऐसी (प्रभाववती) हुई (कि वे) प्राणाधार (की तरह उसका) ध्यान रखने लगे। फिर (उसका) शरीर समुद्र (?) की तरह बढ़ने लगा (और) एक-एक दिन एक-एक वर्ष का सा विस्तार (प्राप्त करने लगा)।

भर जोवण ज्यु ही नेत्र छक भरिया
जोत कळा जोवतां जुई ।
बारे दीहे वरस बारा री
हेमाचळ री कुवरि हुई ॥२३९॥

यौवन आते ही (उसके) नयनों में कान्ति छागई। (उसके) (शरीर की) शोभा देखने पर निराली ही (लगती थी)। बारह दिनों में ही हिमाचल की कुंवरी बारह वर्ष की हो गई।

चढती वय उपमा चढती,
मृगलोचनी कळाइर मोर ।
गति आसति मति गयद तणी गति,
जोवन तणउ दिखायउ जोर ॥२४०॥

(उस) चढती हुई अवस्था मे (उस) मृगनयनी पर 'कलाइर' (कालीघटा को देखकर नाचते हुए) मोर की उपमा फबती थी। (उस) गजगमनी की चाल, पराक्रम और बुद्धि (सभी मे) यौवन का प्राबल्य दिखाई देता था।

दीजइ तइ तणी ओपमा दुनिया,
उण केही ओपमा दियइ ।
नख सिख लगइ रूप निरखता,
तेज न खमियउ जाय तियइ ॥२४१॥

दुनिया में उसकी (ही) उपमा दी जाती है, उसको (फिर) किसकी उपमा दी जाये! नख से सिख तक (उसके) रूप को देखते हुए उसके तेज को सहा नहीं जा सकता।

मृग मणधर की मणाल मीढता,
सिंहलोक ओपमा किसी ।
अपछर किसु सकत रइ आगइ,
जग अचरिज जोवतां जिसी ॥२४२॥

(उससे) तुलना करने पर मृग, सर्प तथा मृणाल क्या हैं! सिंह की उपमा भी कैसी! शक्ति के आगे अप्सरा भी क्या है! वह तो संसार में आश्चर्यजनक (ही) दिखाई देती है।

घवराहण घ्रू य म जांणे घरतां
    पित्र पुहर करतां ष्याळ ।
मन लागौ बाळक माईतां,
    दूजी छोडी सहु दुवाळ ॥२३७॥

माता-पिता का मन (उस) बालक में (ऐसा) लग्न कि (उन्होंने दूसरे सब धन्धे छोड़ दिये । (उस) लाडपूर्वक खेलाने में (उन्होंने) धैर्य धरना नहीं जाना (और) चारों पहर (उससे) विनोद करते रहे ।

मावीतां सरणी इसी लाइ माया
    ध्यान रहइ घर प्राण माधार ।
वाधइ सायर वळे ज्यु ही विग्र
    वासुर वरस लगइ विस्तार ॥२३८॥

माता-पिता पर उसकी माया ऐसी (प्रभावशाली) हुई (कि वे) प्राणाधार (की तरह उसका) ध्यान रखने लगे । फिर (उसका) शरीर समुद्र (?) की तरह बढ़ने लगा (और) एक-एक दिन एक-एक वर्ष का सा विस्तार (प्राप्त करने लगा) ।

भर जोवण ज्यु ही नेत्र छब भरिया
    ओस कळा जोवतां जुई ।
बारे दीहे बरस बारा री
    हेमाचळ री कु वरि हुई ॥२३९॥

यौवन आते ही (उसके) नयनों में कान्ति छागई । (उसके) (शरीर की) शोभा देखने पर निराली ही (लगती थी) । बारह दिनों में ही हिमाचल की कु वरी बारह वर्षों की हो गई ।

चढती वय उपमा चढती,
मृगलोचनी कळाइर मोर ।
गति आसति मति गयद तणी गति,
जोवन तणउ दिखायउ जोर ॥२४०॥

(उस) चढती हुई अवस्था मे (उस) मृगनयनी पर 'कलाइर' (कालीघटा को देखकर नाचते हुए) मोर की उपमा फवती थी। (उस) गजगमनी की चाल, पराक्रम और बुद्धि (सभी मे) यौवन का प्राबल्य दिखाई देता था ।

दीजइ तइ तणी ओपमा दुनिया,
उण केही ओपमा दियइ ।
नख सिख लगइ रूप निरखता,
तेज न खमियउ जाय तियइ ॥२४१॥

दुनिया में उसकी (ही) उपमा दी जाती है, उसको (फिर) किसकी उपमा दी जाये ! नख से सिख तक (उसके) रूप को देखते हुए उसके तेज को सहा नहीं जा सकता।

मृग मणधर की मणाल मीढता,
सिंहलोक ओपमा किसी ।
अपछर किसु सकत रइ आगइ,
जग अचरिज जोवतां जिसी ॥२४२॥

(उससे) तुलना करने पर मृग, सर्प तथा मृणाल क्या हैं ! सिंह की उपमा भी कैसी ! शक्ति के आगे अप्सरा भी क्या है ! वह तो संसार मे आश्चर्यजनक (ही) दिखाई देती है।

बीजइ माळे र हुवइ को दूजउ,
इयउ रग सरग आप रइ रहइ ।
दासपि परि काहिक रिस नारद,
कर जोडे हेमगिर कहइ ॥२४६॥

जिसको मारिपक किया जाय (ऐसा) दूसरा कौन है ? (अर्थात् कोई नहीं) ? यह (शिव) अपने ही रंग में (रंगे हुए और अपनी ही) तरंग में (समाये हुए) रहते हैं । हिमगिरि ने हाथ जोड़ कर नारद से कहा-हे ऋषि (इस संबंध का) कोई उपाय बताओ ।

हैमाचळ केइलास विचइ हिक
ध्यांन राच्या तिण सहरि परि ।
प्रसन हुसी इण वात सही प्रभु
किरि मागउ फळ सेव करि ॥२५०॥

(इस पर नारद ने कहा) हिमालय और कैलाश के बीच एक शिखर पर (शिव) ध्यान मग्न (बैठे) हैं । इस (पार्वती के विवाह की) बात पर प्रभु सचमुच प्रसन्न होंगे अथवा सेवा करके फल मांगलो ।

फूले भरि छाब चढी रथ फउरइ
आराधइ हुओ धन दिन ओ आज ।
सजसी बिहेक सहेली साथइ
लहुवी वय अधिकी घट लाज ॥२५१॥

(आराधना के लिए) फूलों से छबड़ी भरकर, (उसने) रथ पर चढ़कर (उसे) हांका । आनंद हुआ आज का यह दिन धन्य है । छोटी उम्र में भी शरीर में अधिक लज्जा (लिए उसके) साथ अनेक सहेलियां (भी) सजीं ।

आवीया खडे ईसवर आगळि,
पहिली प्रीत अनेक परि ।
चाढे पुहप उदक सिर चाढे,
ध्यान कियउ जिण धूप धरि ॥२५२॥

(वहा से) चलकर (वह) शिव के आगे आई (जिनसे) अनेक प्रकार से पहिले (जन्मों में) प्रीति (की थी)। पुष्प चढाकर (शिव के) चरणोदक को सिर पर धारण कर, धूप जलाकर (उसने शिव का) ध्यान किया।

ताळी छूटइ नही एक तिल,
सबळी की सेवा खटमास ।
इउ आराधना करइ ईसर री,
आवइ वळे बाप रा आवास ॥२५३॥

छ महीनों तक (उसने शिव की) प्रबल सेवा की, (पर शिव की) तनिक भी समाधि नहीं छूटी। इस प्रकार शिव की आराधना कर (वह अपने) पिता के घर लौट आई।

ब्रह्मादिक तणउ हुओ दइता वर,
अति गति माडी तिया अनत ।
इद्र री सभा इंद रइ आगळ,
कितरा देव पुकार करत ॥२५४॥

दैत्यों को ब्रह्मा का वरदान हुआ। (इस पर) उन्होंने घोर अत्याचार प्रारम्भ कर दिया। इन्द्र की सभा मे कितने ही देवताओं ने इन्द्र के आगे पुकार की।

दीजइ नाळेर हुवइ को दूजउ,
इयउ रग तरग आप रइ रहइ ।
दाखवि परि काहिक रिख नारद,
कर जोडे हेमगिर कहइ ॥२४६॥

जिसको नारियल दिया जाय (ऐसा) दूसरा कौन है ? (अर्थात् कोई नहीं) ? यह (शिव) अपने ही रंग में (रंगे हुए और अपनी ही) तरंग मे (समाये हुए) रहते हैं । हिमगिरि ने हाथ जोड कर नारद से कहा–हे ऋषि (इस संबंध का) कोई उपाय बताओ ।

हैमाचळ केइलास विचइ हिक
ध्यांन रह्या तिण सहरि घरि ।
प्रसन हुसी इण वात सही प्रभु
किरि मागउ फळ सेव करि ॥२५०॥

(इस पर नारद ने कहा) हिमालय और कैलाश के बीच एक शिखर पर (शिव) ध्यान मग्न (बैठे) हैं । इस (पार्वती के विवाह की) बात पर प्रभु सचमुच प्रसन्न होंगे अतएव सेवा करके फल मांगो ।

फूले भरि छाब चढी रथ फउरइ
माणद हुओ धन दिन ओ आज ।
सजसी विहेक सहेली सायइ
महुवी वय अधिकी घट साज ॥२५१॥

(आराधना के लिए) फूलों से छबड़ी भरकर, (उसने) रथ पर चढ़कर (उसे) हांका । आनंद हुआ, आज का यह दिन धन्य है । छोटी वय में भी शरीर में अधिक लज्जा (लिए उसके) साथ अनेक सहेलियां (भी) सजीं ।

वन उद्यान गुफा तरइ विचइ,
धू णी घाती सबळ धडइ ।
मिलिया प्रभु झगडउ माडण री,
घणी स वाता जीव घडइ ॥२६४॥

वनोद्यान के बीच गुफा मे (उसने) पूरे जोर से धूनी रमाई (और) मिलने पर प्रभु से झगडा करने की अनेक वाते मन मे विचारने लगी ।

विजया जया लियावइ नइ ल्यइ,
वळे स फळ किण ही कइ वार ।
निसग्रह आराहइ दिवस नित
ईसर पवन तणइ आधार ॥२६५॥

विजया और जया अनेक वार (खाने के लिए) फल लाती हैं (पर वह) एक भी (फल) नहीं लेती । प्रति दिन पवन के आधार पर (ही वह) अहर्निश शिव की आराधना करती है ।

खटमास लगइ तप कियउ अखडित,
त्री असडी खेलता निघात ।
सिव सिव सिव हिज कहत सक्त,
वदइ न काई बीजो वात ॥२६६॥

छ महीनों तक अखण्ड तप किया । पार्वती ने ऐसा जबर्दस्त खेल खेला (?) शक्ति (केवल) 'शिव-शिव' ही कहती रहती थी, कोई भी दूसरी वात नहीं वोलती थी ।

आया गिर कैलास ईस्वर,
ओळगवा लागी रत पास ।
गिरवर कुंवर गोद करे नह गाया
वर कुंवर वळे ही बांधी आस ॥२६१॥

शिव कैलाश पर्वत पर प्रियतम (कामदेव के विरह में) झूरती हुई रति के पास आये। गिरिराज (हिमाचल) कुंवरी (पार्वती) को गोद भर कर (यह सोचकर प्रमुदित हुए कि) कुंवरी को वर (प्राप्त होने) कि आशा फिर बंधी। (?)

वाणी इम आकाश चवांणी
जो भोळी चक्रवर्ति भूपाळ ।
आ जो तपइ रहे जो ईस्वर
तप करिस्यु मिलसी ततकाळ ॥२६२॥

इस प्रकार आकाशवाणी हुई (कि) राजा (हिमाचल) की (पार्वती) भोलेनाथ (?) की तपस्या करे तो (वसे) शिव तत्काल मिलेंगे।

परणीया री चली पारवती
तपि करिवा एकांत तरह ।
विजया जया सहेली वासह
धरा छछोहा चरण धरह ॥२६३॥

तब गिरिकन्या पार्वती एकान्त में तप करने के लिए चली। विजया (और) जया (नामकी) सहेलियों का पीछे लिए (वह) पृथ्वीतल पर चंचल गति से पैर रखने लगी।

वन उद्यान गुफा तरउ विचइ,
धूंणो घाती सबळ धडउ ।
मिलिया प्रभु झगडउ माडण री,
घणी स वाता जीव घडउ ॥२६४॥

वनोद्यान के बीच गुफा मे (उसने) पूरे जोर से धूनी रमाई (और) मिलने पर प्रभु से झगडा करने की अनेक बातें मन मे विचारने लगी।

विजया जया लियावइ नइ ल्यइ,
वळे स फळ किण ही कइ वार ।
निसग्रह आराहइ दिवस नित
ईसर पवन तणइ आधार ॥२६५॥

विजया और जया अनेक बार (खाने के लिए) फल लाती हैं (पर वह) एक भी (फल) नहीं लेती। प्रति दिन पवन के आधार पर (ही वह) अहर्निश शिव की आराधना करती है ।

खटमास लगइ तप कियउ अखडित,
त्री असडी खेलता निघात ।
सिव सिव सिव हिज कहत सक्त,
वदइ न काई बीजो वात ॥२६६॥

छ महीनों तक अखण्ड तप किया। पार्वती ने ऐसा जबर्दस्त खेल खेला (?) शक्ति (केवल) 'शिव-शिव' ही कहती रहती थी, कोई भी दूसरी बात नहीं बोलती थी ।

लाबी दाढी हाथ लाकडी
घड बाजइ खूखुवा सघारण ।
पवित्र जनोई गळइ पहर नइ
आयउ विप्र आचरण आपाण ॥२६७॥

लम्बी दाढ़ी हाथ में लकड़ी शरीर की पृथक्-पृथक् संधियां कड़क रहीं और गले में पवित्र जनऊ पहिन कर विप्र (रूप धर कर शिव पार्वती की शक्ति-परीक्षा करने आये ।

माणस भला रहउ वन माहे
कहउ नहीं तप करउ किम ।
पूछइ तरह बांमण परमारथ
जांणणहार अजाण जिम ॥२६८॥

सब जानते हुए (भी) अजान की तरह ब्राह्मण ने परमार्थ पूछते हुए कहा भले मानस ! वन में रह कर किस लिए तप करती हो कहो न ?

विजया जया कहइ आगइ विप्र
प्रेम घणइ प्रभु नाम जपइ ।
प्री बाछइ ईसर पारबती
तप उनपइ रइ मेळ तपइ ॥२६९॥

विजया और जया विप्र से कहती हैं (कि यह) अति प्रेम पूर्वक प्रभु (शिव) का नाम जपती हैं । पार्वती शिव को पति रूप में (प्राप्त करना) चाहती हैं (और) उन्हीं से मिलने के लिए तपस्या कर रही हैं ।

पायउ जिम बामण परमारथ,
कहतउ वात निघात कहइ ।
जाणीयउ पारबती जाणपणउ,
कोइ गहिला सु आखडी ग्रहइ ॥२७०॥

ब्राह्मण को जैसे परमार्थ प्राप्त हो गया हो। (उसने) बात कहते ही यह मर्म (?) कहा—पार्वती का ज्ञान देख लिया। कोई पागलों (से मिलने) की (भी) प्रतिज्ञा करता है ?

धोबा बि तिनि खाय धतूरउ,
चढइ भसम ऊखधी चाढि ।
वासउ गिरे कदरे वासइ,
ता गहिला सरिस न कीजइ वाद ॥२७१॥

(जो) दो–तीन धोबे धतूरा खाता हो, भग (?) पी कर भस्म रमाता हो, गिरिकन्दराओं में निवास करता हो–ऐसे पागलों से वाद नहीं करना चाहिए।

वहु सबदइ लाजती न बोलइ,
कहिस्यइ वळे अनेरी काय ।
आगणइ काइ माहरइ आयउ,
जाणइ परउ रिखीसर जाइ ॥२७२॥

लजाती हुई (वह उस) बढ कर बोलने वाले (?) से नहीं बोलती (कि) फिर (यह) और कुछ कहेगा। (वह मन में) सोचने लगी (कि यह) ऋषीश्वर मेरे आगन मे क्यों आ गया, दूर चला जाये (तो ठीक हो)।

लांबी दाढी हाथ लाकडी
धड वाजइ खूखुवा सधाण ।
प्रधत्र जनोई गळइ पहर नइ
आयउ विप्र आवरण आपाण ॥२६७॥

लम्बी दाढ़ी हाथ में लकड़ी शरीर की पृथक्-पृथक् संधियाँ कड़क रहीं और गले में पवित्र जनेऊ पहिन कर विप्र (रूप धर कर शिव पार्वती की शक्ति-परीक्षा करने आये ।

मांणस भला रहउ वन माहे
कहउ नहीं तप करउ किम ।
पूछइ तरह वांभण परमारथ
जांणणहार अजाण जिम ॥२६८॥

सब जानते हुए (भी) अजान की तरह ब्राह्मण ने परमार्थ पूछते हुए कहा भली मानस ! वन में रह कर किस लिए तप करती हो कहो न ?

विजया जया कहइ मागइ विप्र
प्रेम घणाइ प्रभु नाम जपइ ।
प्री वांछइ ईसर पारवती
तप ऊभइ रइ मेळ तपइ ॥२६९॥

विजया और जया विप्र से कहती हैं (कि यह) अति प्रेम पूर्वक प्रभु (शिव) का नाम जपती है । पार्वती शिव को पति रूप में (प्राप्त करना) चाहती है (और) उन्हीं से मिलने के लिए तपस्या कर रही है ।

पायउ जिम बामण परमारथ,
कहतउ वात निघात कहइ ।
जाणीयउ पारबती जाणपणउ,
कोइ गहिला सु आखडी ग्रहइ ॥२७०॥

ब्राह्मण को जैसे परमार्थ प्राप्त हो गया हो। (उसने) वात कहते ही यह मर्म (?) कहा—पार्वती का ज्ञान देख लिया। कोई पागलों (से मिलने) की (भी) प्रतिज्ञा करता है ?

धोबा बि तिनि खाय धतूरउ,
चढइ भसम ऊखधी चाढि ।
वासउ गिरे कदरे वासइ,
ता गहिला सरिस न कीजइ वाद ॥२७१॥

(जो) दो–तीन धोवे धतूरा खाता हो, भग (?) पी कर भस्म रमाता हो, गिरिकन्दराओं में निवास करता हो–ऐसे पागलों से वाद नहीं करना चाहिए।

बहु सबदइ लाजती न बोलइ,
कहिस्यइ वळे अनेरी काय ।
आगणइ काइ माहरइ आयउ,
जाणइ परउ रिखीसर जाइ ॥२७२॥

लजाती हुई (वह उस) बढ़ कर बोलने वाले (?) से नहीं बोलती (कि) फिर (यह) और कुछ कहेगा। (वह मन में) सोचने लगी (कि यह) ऋषीश्वर मेरे आगन में क्यों आ गया, दूर चला जाये (तो ठीक हो)।

चींतवियउ इसउ ऊठि नइ चाली,
हसि झालियउ तरइ प्रभु हाथ ।
वनिता तप वस किया ईस्वर
निज भाखियउ अनाथानाथ ॥२७३॥

ऐसा सोच कर (वह) उठ कर चली । तब प्रभु (शिव) ने हंस कर (उसका) हाथ पकड़ लिया । अनाथों के नाथ ईश्वर ने स्वयं कहा (इस) स्त्री ने तप से (हमें) वश में कर लिया है ।

सुप्रसन हुया देख प्रभु सेवा
धरउ हुकम जिम चरण धरां ।
पूछिया तरइ ईसर पारबती
कहउ जियइ विध व्याह करां ॥२७४॥

प्रभु (शिव उसकी) सेवा को देख कर सुप्रसन्न हो गए । तब शिव ने पार्वती से पूछा—जैसी आज्ञा हो वैसा ही काम करें । कहो किस विधि से विवाह करें ।

दूजी सखी कहि दाखवीयउ
विधि सु प्रभु कीजइ वीवाह ।
आवइ जांन वधाऊ आवइ
अति मावीत करइ ऊछाह ॥२७५॥

दूसरी सखि ने (यह) कह कर निवेदन किया (कि) हे प्रभु विधिपूर्वक विवाह कीजिये । बारात आए (और) बधाईदार आवें (ताकि) माता-पिता अत्यन्त हर्षोत्साह करें ।

पारवती पिता तणइ थळ पुहती,
आयउ ईसर आपरै आवास ।
परणीजण नू वळे नवी परि,
दळ मेलवा पठावै दास ॥२७६॥

पार्वती पिता के घर पहुँची (और) शिव अपने स्थान पर आये। फिर, नई विधि से विवाह निश्चित करने के लिए प्रतिनिधियों को भेजने के निमित्त, दासों को (उन्हें बुलाने के लिए) भेजा।

सात सात रे मेल्हिया ईसर,
गरुड प्रधान जिके अउगाढ ।
मागण कुवर लगन पिण मागण,
चचळ रथे आपणे चाढ ॥२७७॥

शिव ने (अपने) सात (?) जबर्दस्त (सधे हुए ?) बड़े प्रधानों को, अपने चचल रथों पर चढा कर, कुवरी की याचना करने तथा (विवाह का) लगन निश्चित करने के लिए भेजा।

आया गिरवर तणे आवासे,
गिर साम्हउ आयउ वडगात्र ।
आगळि दीन रिखीसर आखइ,
जीविया हुई कितारथ जात्र ॥२७८॥

(वे) गिरिराज के निवास पर आये। यशस्वी (?) गिरिराज (भी उनके स्वागतार्थ) सामने आये। ऋषीश्वर (नारद) ने पहिले ही (उन्हें यह) सूचना देदी थी। वे बोले हम तो जी गए, (हमारी) यात्रा सफल हो गई।

माहीनइ पहिली लगन मेल्हियउ,
भति मामीत्र करइ ऊछाह ।
परठा नवा नवा परठीजइ
उन्दधि गिरिंद जोवसा मयाह ॥२७९॥

एक महीने पहिले ही लगन भेज दिया गया । माता-पिता अत्यन्त हर्षोत्साह करने लगे । नई-नई सजावटें (?) होने लगी (जो) पर्वत और समुद्र से भी असीम थी (?)

गगाजळ अघर भीलियइ भिलसउ
दामति जिम भाजें दरवार ।
लाडउ मवउ किना लाडसी
वळे सुघट मिसइ सुविचार ॥२८०॥

जैसे दरबार में 'दामति' बजती है (?) (शिव) अधर में ही गंगाजल को वहन करते हुए स्नान करते हैं (?) दूल्हा सुन्दर है अथवा दुलहिन (इस पर वो) फिर एकत्रित लोग ही भली प्रकार विचार करेंगे (अर्थ अस्पष्ट है ।)

वर कन्या बिन्हे धातिया बांनह,
बई बारां वरसां रा बाळ ।
भमर ज्यु ही केतकी भीगा
माळी चक्रवर्ति भूपाळ ॥२८१॥

वर और कन्या दोनों को ही 'बाने' में बैठा दिया गया । दोनों ही बारह वर्ष के बालक थे । मोहे चक्रवर्ती राजा (शिव) केतकी (पार्वती) पर अनुरक्त भ्रमर की तरह थे ।

चढता थट वळे मेलिया चढतइ,
जानी आप जिसा घणजाण ।
इद्र फुणद्र नागिद्र निरखता,
वरणवजइ केहा वाखांण ॥२८२॥

फिर (वर यात्रा के लिए) सवार होने के निमित्त (?) शिव बहुज्ञ ने अपने समान ही बहुत बाराती बुला भेजे (?) ।।इन्द्र, फणीन्द्र और नागेन्द्र जैसे उन बारातियों का कैसे बखान किया जाय।

सुजसा थट गरट मेलिया ईसर,
आवे महल सचाळा आप ।
लाडा तणइजि दरसण लाधइ,
प्रिथी तणा खाइजस्यइ पाप ॥२८३॥

सुयशस्वी (बारातियों के) झुण्ड के झुण्ड बुलवाकर (?) शिव स्वय उमग सहित (?) महल में आये। वर (रूपी शिव) के दर्शन प्राप्त करने पर पृथ्वी के सभी पाप नष्ट हो जायेंगे ।

आपणपा सयण तेडिया आह (व)इ,
लाजउ घणी निरवाहण लाज ।
वर ईसर जगनाथ अणबर,
प्रेम तणी ताइ बाधी पाज ॥२८४॥

(वारात के लिए) बुलाये हुए आत्मीय स्वजन आये (जिससे भक्तों की) अतिशय लज्जा का निर्वाह करने वाले (स्वय शिव भी) लजा गये। शिव ने वर तथा जगन्नाथ (विष्णु) ने अन्यवर (स्थानापन्नावर) बन कर उस (त्रिदेव के) प्रेम की मर्यादा बाध दी।

अनत कोट ब्रह्म ड तणा इद्र,
तन सोहण मृत लोक तणा ।
सात पायाळ तणा इद्र सासद,
घणू सु थक मेलिया घणा ॥२८५॥

अनंत कोटि ब्रह्माण्डों के स्वामी मृत्युलोक के तीन शोभिणी (इस) तथा सातों पातालों के नरेश (इस प्रकार) अनेकानेक लोगों को (?) बुलवाया।

राजान अनेक तीयइ सिंग रमतउ
भरियइ गिर थिटी आधार ।
मुरळी अधर झालियइ माहव
आया गरुड़ तणा असवार ॥२८६॥

अनेक राजाओं के साथ रमण करते हुए, कनीष्ठिका पर पर्वत को धारण किये हुए और अधर पर मुरली रखे हुए गरुड़ के सवार माधव आये।

आया ले सृष्टि तणउ आडेवउ,
बिहु हुती अउ प्रोहित बगास ।
सिव साडा रह बांध सेहरउ
चढवा तणी उहतको चाल ॥२८७॥

दोनों ओर से (?) जो यह (?) पुरोहित ये वे सृष्टि का "आडवा' (?) लेकर शिवजी दूल्हे के सेहरा बांध कर बारात के लिए सवार होने की अतिशय इच्छा (?) से आये। (अर्थ अस्पष्ट है)

दस दस दिगपाळ दीसइ दस,
मिलिया ग्यान पखइ कळमूळ ।
दीवाणी मुजरउ देखण नूं,
छिलता छडीहथा घण भूल ॥२८८॥

दशों दिशाओं के सैंकडों दिक्पाल, योद्धाओं के विना ही(?) छडीदारों के अत्यधिक समूह से भिड़ते हुए (भीड के कारण), (शिव) दीवान का मुजरा देखने के लिए एकत्रित हुए ।

तिण वेळा तरइ फरास तेडिया,
जाणइ परठा जिके घणजाण ।
आवइ पेसखानउ ईसर रउ,
मिलणइ आगइ करइ मिलाण ॥२८९॥

तब उस समय फर्राशों को बुलाया गया, जो बहुत जानकार थे (और अनेक प्रकार की) सजावटें (?) जानते थे। (वे) मिलने के स्थान पर आकर शिव के पेसखाने का मिलान करते हैं। (अर्थ अस्पष्ट है)

छाया तिण गयण रयण ऊछळती,
मनछा तवइ तरइ खट मास ।
गाजइ गयण कन्हा नगारा,
गाजइ सादूळउ आहचइ लइ सास ॥२९०॥

उससे उछलती हुई धूल से आकाश आच्छादित हो गया। नगारों की आवाज (ऐसी थी) मानों गगन गरज रहा हो। (उस गरज को सुनकर) सिंह भी दहाडता हुआ ऊंचे सास लेने लगा ?

वाघ वृखभ एकठा वहता,
फरह नहीं मन सका काइ ।
मेट सकइ न का मरजादा
हालइ सको मरजादा माहि ॥१६१॥

बाघ और बैल एक साथ चलते हुये (भी) मन में कोई डर नहीं रखते। सभी मर्यादा में चलते हैं, कोई भी मर्यादा को मेट नहीं सकता।

इम मिलणइ करता आया
हेमाचळ महला हूइ थाट।
घर ऊपर जोवरण क्रम धरतां
महइ गरट घट ऊवट वाट ॥१६२॥

पृथ्वी पर योजन क्रम से चलते हुए (बारातियों के) बड़े समूह उबड़ मार्गों से चले (और) इस प्रकार एकत्रित होकर (बधू पक्ष से) मिलने के लिए हिमाचल के निकट आए।

निष गउखे चढि चढि वाट निहाळइ
महुरस पिरण आयो तिस मात ।
तोभइ भवरण थांभियउ तोरण
गिर मंडप छायउ वडगात ॥१६३॥

यशस्वी पर्वतराज ने तीसरे भुवन (स्वर्ग-अति ऊँचे) पर तोरण बाधा (और) मंडप बनाया। मुहूर्त अत्यन्त निकट आया (जान कर) अपने अपने गवाक्षों में चढ़ कर (पुरनारियाँ) (बारात के आने का) मार्ग निहारने लगीं।

वधाऊ मुहर मेल्हिया विध सू,
ताह आहचइ दीध वधाई आय ।
आई जान घणइ आडबर,
घोराडिया जागी घण घाय ॥२६४॥

आगे विधिपूर्वक वधाईदार भेजे गये, जिन्होंने शीघ्रता से आकर वधाई दी (कि) वारात वडे ठाठ-वाठ से आई है (तथा) नगारे वहुत जोर से वज रहे है।

हेमाचळ आदर दीध घणइ हित,
पूछण लागा तीया परि ।
वड जानी कुण कुण वाचीजइ,
कहिवा लागा विनउ करि ॥२६५॥

हिमाचल वडे हित पूर्वक (उन्हें) आदर देकर उनसे विवरण पूछने लगे। (वे) विनयपूर्वक कहने लगे कि वडजानी (विशिष्ट वाराती) कौन कौन हैं।

जगदीस अछइ माहे वड जानी,
आछइ ब्रह्म तइ आछइ इन्द्र ।
सुर किन्नर नागिद्र निरखता,
नव खड रा आछइ नरिंद्र ॥२६६॥

(वधाईदारों ने कहा) विशिष्ट वारातियों मे तो जगदीश हैं, ब्रह्मा है, इन्द्र है और सुर, किन्नर, नागेन्द्र तथा नवों खण्डों के नरेन्द्र (भी) हैं।

चित हरखंत हूया हिमाचळ
वउडिया दइण वधाई दास ।
हेमाचळ रइ तप सस कोई,
मउछाअइ नव नवा प्रवास ॥२६०॥

हिमाचल चित्त में हर्षित हुए। दास बधाई देने के लिये दौड़े। हिमाचल के प्रताप से सब कोई नये-नये आवासों को आच्छादित करने लगे (तंबू आदि खड़े करने लगे अथवा फर्श बिछाने लगे)।

हेमाचळ मेल्हिय वधाऊ
आगळि आंन स आगळियार ।
अति जोवास करइ ऊमाहइ
निरखण वर आवइ नर नार ॥२६८

हिमाचल ने बारात की अगवानी के लिए सामने बधाईदार भेजे। अत्यन्त अभिलाषा से उत्साहित होकर नर-नारी वर को देखने के लिये आने लगे।

अतुलीबळ पट्ट मेल्हिया आंहचइ
महूरत गिर साझिवा मसद ।
प्रभु तिण घमड किया पइसारइ,
दळ मेले आविया नरद ॥२६९॥

पर्वतराज ने मुहूर्त सामने के लिये अतुलबल सम्पन्न साथ को शीघ्रता से भेजा। शिव ने भी उसी प्रकार (बड़े) गर्व से प्रवेश किया (और) राजाओं का दल लेकर (नगर में) आये।

आगळती हिमाचळ आया,
जान आय ऊतरिया तठइ ।
माडिया जाणे अचळ माडणी,
तीन भुवण तिण वार तठइ ॥३००॥

(जहा) वारात आकर उतरी वहा हिमाचल स्वागतार्थ आये । उस समय वहा (इतनी भीड हुई) मानों तीनों भुवनों ने स्थायी निवास बना लिया हो ।

धरियउ बाजउट गिरमा जळ धरियो,
सूधा अगर कटोळ कस ।
आगळि छडेहथा तिण ऊभा,
दिस ही दस दिग्पाळ दस ॥३०१॥

(स्नान के लिए) पाटा रखा गया, झरनों का (?) जल रखा गया (और) सुगन्धित अगरु, खस (आदि) के कटोरे (रखे गये) । वहा आगे दसों दिशाओं मे ही दसों दिग्पाल हाथों मे छडी लिये खडे हो गये ।

लागउ तेथ करण माजणउ लाडउ,
इद्र सुर कहइ धनउ दिन आज ।
जाणे कमळ सरोवर जाडा,
कर माडिया चरणोदक काज ॥३०२॥

वहा वर (शिव) स्नान करने लगे । इन्द्र, सुर और नर (सभी) कहने लगे (कि) आज का दिन धन्य है । यह जान कर (देवताओं ने) (शिव के) चरण प्रक्षालन के निमित्त घने कमलों वाले भरे हुए सरोवर बना दिये । (?)

मुगटराउ करे सिंहासण प्राय,
पहिरण लागा प्राभरण ।
मो वागप्रो घणइ धूप सू
लरा सु प्राठ अमास गरण ॥३०३॥

उबटन, स्नानादि के अपरांत सिंहासन पर आकर आभूषण (वस्त्रालंकार) पहिनने लगे। आठ असली अवासों (सेवकों) ने बहुत ध्यानपूर्वक वागा (वर की पोशाक) पहनाया।

धणतइ वर जइ पहिरीयउ वागउ
भस घोली सु धइ सु भेस ।
प्रसरी कळा दखजै ईसर
देवां ? विराजइ देव ॥३०४॥

वर का रूप धारण करते समय शिव ने सुगन्धित द्रव्यों से (वागे की) धोती को भली प्रकार भिगो कर जो वागा पहिना (तो वमका) तब ऐसा दिखाई दिया (मानों) देवों के देव (स्वयं) विराजमान हैं।

प्रति सींग प्रमायव थम धणइ पट
वाकइ बंध सु बांधि जिहाज।
सभि कीजइ तिको वठण नु साहिभा
महि जिण सुजे महादधि माफ ॥३०५॥

जो अपने अति विचित्र सींगों से पृथ्वी-तल पर विराजते पर्वतों को (और) समुद्र में अपने दृढ़ कन्धों से बांध कर जहाजों को रोक देने वाला था उस वृषभ को (वर की) सवारी के लिए सजाया गया। (?)

घूघरमाळ चिहू दिसि घमकइ,
घणू स थट्ट जोवता घणाउ ।
मुखमल रउ गउखउ गेर माडियउ,
जडियउ जाण जडाव तणाउ ॥३०६॥

चारों ओर (चारों पैरों तथा गर्दन आदि में) घु घरू की पक्तिया बजती थीं। देखने पर (उसका) ठाठ अत्यधिक लगता था। गेरुई (रग की) मखमल की भूल (?) (ऐसी) सुशोभित होती थी मानों जडावों (रत्नों) से जड़ी हुई हो।

जरबाफ तणा ताइ पाटा जोडिया,
रेसम री महुरी बहुरग ।
मन असवार तणाउ ताइ मू भइ,
तरह चलइ आपणाइ तुरग ॥३०७॥

उसके जरबाफ के पट्टे जोडे गये (तथा) बहुरगी रेशम की महुरी (बाधी गई)। (जब) वह अपनी चाल से चला (तो) घुड़-सवारों के मन (भी, (अपेक्षाकृत कम चाल के कारण) अमूझने लगे।

रतनारी पाखर पूठि रुळती,
भिडज वधइ ताइ आगळ भाण ।
अबरराव हतउ ओभाडइ,
सिहरा रा सीगे सहिनाण ॥३०८॥

(जिसकी) पीठ पर रत्नजटित पाखर लटक रही थी (वह) सूर्य के घोड़ों से (भी) आगे चलने वाला था। (उसके) सींगों पर सूर्य के शिखरों (उदयाचल-अस्ताचल) पर प्रहार करने के निशान (लगे हुए) थे। (?)

आगळि रथ सिणगार आणियउ,
तिण वेळा जोवता तयार ।
जोजन पाच धनुख सिर धरतउ
वसधा देखण तणइ विचार ॥३०६॥

उस समय (प्रस्थान की) तैयारी देख कर रथ को सजा कर लाया गया जो पृथ्वी को देखने के विचार से पांच योजन की तीव्र गति (?) से चलता था।

कुरजनसाल तिलक सिर दीन्हइ,
बीडउ लियउ पसार बांहि ।
चढियइ वृखभ कपूर चढावे
छिलता छात तणी ताइ छांहि ॥३१०॥

ललाट पर 'कुलनसाल' तिलक लगाये हुये (शिव ने) बांह पसार कर (ताम्बूल का) बीड़ा ग्रहण किया। कपूर का लेपन कर (वे) छत्र की छाया में सुशोभित होकर वृषभ पर सवार हुए।

विरह वेहडा अनेक आंण वदावइ
कामण किसा उछाह करइ ।
आवइ गिरवर तणे आवासे
तोरण वांदण काज सरइ ॥३११॥

अनेक कामिनियां भांति-भांति के कलश लेकर (वर की) वंदना करती (हुई) अनेक हर्षोल्लास करने लगीं। इसके बाद (वे) तोरण की वंदना के लिए गिरिराज के निवास पर आई ।

देखण नुं चढण ईस ताइ दीसइ,
जाळानळ मथ काढी ज्याग ।
मुख ताइ कवळ गउख सर माहे,
लोचन भवर रह्या तनु लाग ॥३१२॥

शिव को देखने के लिये (ऊंचे पर) चढ़ती हुई वे (ऐसी) दिखाई दी (मानो) ज्वालानल को मथ कर यज्ञ की (?) अग्नि-शिखायें निकाली गई हों। गवाक्षों रूपी सरोवरों मे उनके मुख कमलों की भाति (प्रतीत हुए, जिन पर) लोचनों रूपी भ्रमर बैठे हुए थे।

व्रनवजइ काम रूप रउ वणतउ,
हेआ सरस हजूर हुअउ ।
कहइ स भूट वाळियउ कंद्रप,
मयण सही अउळजे मुअउ ॥३१३॥

(स्त्रिया कहती है) अरी, शिव की रूप-सज्जा का (क्या) वर्णन किया जाय, सरस कामदेव (स्वय) उपस्थित हो गया है। (लोग) झूठ ही कहते है कि कामदेव को भस्म कर दिया। काम तो मरा हुआ भी (मनों मे) उलझा हुआ है (यह बात) सही है।

देखण नू इसइ आहचइ दउडी,
कितरा छोड अनेरा कांम ।
चरण हु ता अलतइ चीतरिया,
चिहटा राय आगणइ चित्राम ॥३१४॥

कितने ही अन्य काम छोड़ कर (पुरनारिया शिव को) देखने के लिये इतनी शीघ्रता से दौड़ी (कि) आलक्तक से चित्रित उनके चरणों से रायागण में चित्र मॅड गये।

छोडावे बांह ग्रापणी छिलती,
प्रीतम सरण छोड मइ पास ।
मसट पलट सिर चीर ग्रोढिया,
ग्रांहचाइ चढी देखरण ग्रावास ॥३१५॥

(प्रीतम द्वारा) पकड़ी हुई अपनी बांह छुड़ा कर तथा प्रीतम का सामिप्य छोड़ कर (शीघ्रता वश) मसट-पलट कर सिर पर चीर ओढती हुई (कामिनियां) (शिव को) देखने के लिये मगी-मगी घरों (की छतों) पर चढ़ीं।

छन २ ताह हुआ ग्राभरण छूटा
सु थर छम चहुती ग्रसुर ।
कट मेखळा तरण रहियउ कर
कोड ग्रहीयउ हु तो कर ॥३१६॥

(शीघ्रता से दौड़ने के कारण) उनके आभरण (निकल-निकल कर) छन-छन करते हुये गिर पड़े। इस प्रकार सुन्दरियाँ स्वर रहित (बजने वाले आभरणों के गिर पड़ने के कारण) चलने लगीं। रस-क्रीड़ा में (प्रियतम द्वारा) पकड़े हुये हाथ से (अब वे) कटिमेखला संभाले रहीं।

पारवती तरणइ वसत कुरण पूजइ
चउवारे चढि करइ विचार ।
दासी हुइ जउ सउ ई ग्रीविजइ
देसीजइ दिग कउ दीवार ॥३१७॥

पार्वती के सौभाग्य की कौन समता करे? —चौबारों पर चढ़ी हुई (स्त्रियाँ ऐसा) विचार करने लगीं। दासी बन कर भी जैसे-तैसे रहा जाय (और) शिव के दर्शन किये जायें।

मिलिया जाणे सिहर वीजळी,
माहे कळा चढती रूप ।
निकूप जिण ही विध जोवइ (तिण ही विध) दीसइ,
रूप तणउ आगर वहु रूप ॥३१८॥

रूप की चढती हुई कलाओं में (शिव और पार्वती ऐसे प्रतीत हुए) मानों पर्वत-शिखर और विजली हों। (उनके) अतिशय रूप को जिस प्रकार देखा जाये उसी प्रकार (वह) सौन्दर्य का आगार दिखाई देता था।

जोसी जग कहइ ए जुडता जोडइ,
वदइ तिके ही ज नाण वखाण ।
अवरा दोहा तणी उतारी,
जोडी आ करतइ घणजाण ॥३१९॥

जोशी कहते हैं कि ससार में (उत्कृष्ट) जोडी की जो पहिचान बताई जाती है वही जोडी यह है। बहुज्ञ विधाता ने वहुत दिनों से (मनमें कल्पित) यह जोडी वनाई है।

ब्रह्मादिक मुहर विसन वर समवड,
घणइ उमंग ताइ घमड घणइ ।
सवणे जस आवइ साभळता,
तोरण प्रभु हेमगिरि तणइ ॥३२०॥

ब्रह्मादिक को आगे किये हुए (और) विष्णु को वरावर में लिए, अति उमग (और) अति गर्व के साथ, कानों से यशोगान सुनते हुए, वर रूप धारण किये हुये शिव हिमगिरि के द्वार पर आये।

वदामत्त वर तोरएा म्राव वधाळे,
वाधाया मोतियां विचारि ।
गउखे चढी ग्रपछरा गावइ
निरखइ ताइ केता नर नारि ॥३२१॥

बुजुर्गों ने द्वार पर वर की वन्दना की (और) मोतियों से स्वागत किया। गवाक्षों में चढ़ी हुई अप्सराओं ने गीत गाये और कितने ही नर नारियों ने (उन्हें) देखा।

करि थाळ कियइ मुख जोवए मेना
भल कुंकुम वाटकउ भरि ।
चोटियाळी तियां ऊपरि चावळ
कियउ तिलक बहु प्रेम करि ॥३२२॥

सुन्दर कुंकुम से पात्र भर कर हाथ में थाल लिए, मैना ने (वर का) मुख देखा (और) प्रेम पूर्वक तीखा (?) तिलक लगाकर उस पर चावल चिपकाये।

पहिरायउ हाथ म्रापणइ पर सू,
ग्रवर किया सिगळा म्राचार ।
रांमा रहस म्रावती रळती
वागउ से भाविया विचार ॥३२३॥

प्रेमपूर्वक आने वाली स्त्रियां विचार कर वागा ले आई (जिसे मैना ने) अपने हाथ से पहिनाया और दूसरे सभी आचार किये। (अर्थ अस्पष्ट है)

रथ ऊतर ऊभा रायअगरण,
हरि ग्रहियइ हरि रइ ताइ हाथ ।
साळाहेली अनइ सासवा,
निरखइ नयरण अनाथानाथ ॥३२४॥

रथ से उतर कर शिव विष्णु का हाथ पकड़े राजाङ्गण में खड़े हो गये। सासें तथा सालाहेलिया अनाथों के नाथ (शिव) को नयनों से निहारने लगीं।

मुहलदार मेल्हीया मुहरइ,
खोजा असली जिके खरा ।
वर पधरायउ तिया भली विध,
धुर मुखमल अउछाड धरा ॥३२५॥

जो असली खरे नाजिर थे उन्हें अगवानी के लिये भेजा गया। उन्होंने मखमल की बिछायत करके भली प्रकार वर को विराजमान किया।

माजरगउ करे जोत कळा मुख जोवइ,
नृमळ कमळ जिम हार नग ।
रतन सरीर ओपियउ आन रस,
जोति तीय ओदयउ जग ॥३२६॥

स्नानोपरात उस (पार्वती के) मुखमडल की ज्योति का प्रकाश कमल और हार में (पिरोये हुये) रत्न की भाति निर्मल दिखाई दिया। रत्न के समान कातिमान (उसके) शरीर की ज्योत से ससार प्रकाशमान हो उठा।

ऊठी ताइ करे मावरणउ उमया
वेणी झर मंखग्रह वड ।
वादळ स्वास तणउ ताइ वरसइ
झीणी बूंदां केर झड ॥३२७॥

उमा स्नान करके उठी तो (उसकी) बाल से भीगी हुई वेणी झरने लगी, मानों इसका बादल झीनी बूंदों की झड़ी लगाकर बरस रहा है।

बीजइ बाजवट आइ नइ बइठी,
देवांग वसत्र पहिराया देव ।
आगळि सखी आभरण आंणइ
भसम सगार सहइ जउ भेव ॥३२८॥

(वह) दूसरे पाटे पर आकर बैठी। देवोचित वस्त्र (उसके) देवोपम अंगों में पहराये गये। सेवा में नियुक्त सखियां जो सुन्दर शृंगार का भेद जानती थी आभरण लेकर आ गई।

पग पहुरी सकळ वाजणी पायल,
ने आंघइ आगळी नद ।
गोडीरव भाद्रवइ सणी गति
सेहरा ऊपरि साण सद ॥३२९॥

शक्ति (पार्वती) ने बजने वाली पायल पैरों में पहनी और कलाई के आगे नद (?) नामक आभूषण पहना। भाद्रपद में (जिस प्रकार) समुद्र का गर्जन (होता है तथा) पर्वत शिखरों पर गरज की ध्वनि (होती है वैसा ही रव उन पायलों का था)।

डड हुता डसण सघली सायर,
घणू समुद्ध रइ पवन घणा ।
चूडउ देखे इसउ चीतवइ,
तुरग सही मानसर तणा ॥३३०॥

सिहल (द्वीप) के उत्तम हाथियों के दांतों से बहुत यत्नपूर्वक बनाये गए अत्यत हलके चूडे को देखकर ऐसी कल्पना होती थी मानो ठीक मानसरोवर के हस ही हों ।

कर सोहइ हाथ तीयइ कर काकण,
दिणियर जिम चउगिरद दिया ।
कमळ तणा फूल रइ कनारइ,
कु दण - रा कागरा किया ॥३३१॥

उस (पार्वती) के हाथ में कर-ककण (ऐसा) शोभायमान था मानों (उसके) चारों ओर सूर्य जड़ दिये हों, (अथवा) कमल के फूल के किनारे कु दन (स्वर्ण) के कगारे किए गये हों ।

आगळिया तिया मूदडी इसडी,
अधिकी कर ओपमा उयइ ।
पइरोजइ री जोति परखता,
हीण नजर तउ नजर हुवइ ॥३३२॥

उन अगुलियों में अगूठी ऐसी (शोभायमान थी) जिससे उनकी उपमा और भी अधिक हो गई थी । (अगूठी में जडे हुए) पिरोजे की ज्योति को देखने पर मन्द दृष्टि (अथवा अन्धे) को भी सुदृष्टि मिल जाये ।

प्रीसम रइ कारण पारवती
राखीयउ जाणे आंम रस ।
मोकीयउ उर ऊपर कांचू भर
कसणा रेसम तणा कस ॥३३३॥

जान पड़ता है कि पार्वती ने प्रियतम के लिए अमृत रस (संभालकर) रखा था, (तभी तो) उसे वक्षस्थल पर कंचुक से ढक कर रेशम के बंधनों से कस कर हृदय से लगा रखा था।

मोती अति अमळ कोर सिर काढे
कासइ हीर पोविया खास ।
मिळती गंग समुद्र जळ भेळो
ऊजळ उदक सणइ ऊजास ॥३३४॥

अति निर्मल मोतियों के सिरों पर कोर निकाल कर बिल्कुल असली हीरे पिरोये गए (जो ऐसे लगते थे मानों) गंगा (अपने) उज्ज्वल जल के उजास से समुद्र के जल में मिल रही हो।

तिको हार गळइ पहिरियउ हठाळी
आगइ पहिरिया आभरण अनेक ।
नांम तिणइ रा मनुस न जाणइ
हेकाहेक चढ़ता हेक ॥३३५॥

ऐसा (मोतियों का) हार हठीली (पार्वती) ने गले में पहिना। (इसके) आगे अनेक आभरण पहिने (जो) एक से एक बढ़ कर थे (तथा) मनुष्य (तो) जिनके नाम भी नहीं जानते।

अग अग ताइ अधिका आभ्रण ओपइ,
गिरिद सुता अति घणइ गहि ।
नाक जरइ पहिरो नकवेसर
मयण धनुख चाढियउ महि ॥३३६॥

बहुत अधिक (यौवन के) उन्माद वाली गिरिराजपुत्री का प्रत्येक अग आभरणों से और भी अधिक शोभायमान था। (इस पर भी) जब (उसने) नाक में नकवेसर पहिनी तो पृथ्वी पर कामदेव ने धनुष चढालिया (अर्थात् सभी पृथ्वीवासी उसे देखकर मोहित हो गये)।

अणियाळा नयण आजिया अजण,
काजळ रेख सुरेख कर ।
इद्र तणइ दिन मूठ अपूठी,
भळका नाखइ वाम वर ॥३३७॥

काजल की सुन्दर रेखा बना कर (उसने अपने) अनियारे नयनों को अञ्जन से आजलिया। (आभरणों से सजी हुई अथवा काजल लगी हुई आखों से वह) श्रेष्ठ सुन्दरी (इस प्रकार) आभरणों के प्रतिविम्ब डालती (अथवा दृष्टि निक्षेप करती) थी (जैसे) वर्षा के दिन बिजली (चमक के साथ नीचे गिरकर आकाश में) लौटी हो।

पारवती कान पहिराया कुडळ,
सूरिज तिण ऊगा ससार ।
जवहर नखत्र पाखती जडिया
अर्क तणा रथ रइ आकार ॥३३८॥

पार्वती ने कानों मे कुण्डल पहिने जिनसे (ऐसा आभास हुआ मानों) ससार में सूर्य उग आया हो। सूर्य के रथ के आकार (वाले कुण्डलों) के चारों ओर नक्षत्र रूपी जवाहरात जडे हुए थे।

मांडो परि वेहां मांडण को
निज विप्र करे पांवड़ा नवध ।
लीला वांस कळस लीला कर
बांधिया भला सजत ना बंध ॥३४५॥

अपने (घर) ब्राह्मण से पावड़ों का बंध (?) करवा कर विवाह मंडप के उपयुक्त वेह रोपी। हरे बांस और कोरे कलश लेकर भली प्रकार (सजाकर अथवा दृढ़ता से) बांध दिये गए।

मुखमल री सवडु पाथरी माहे
पाथरियउ रेसम री पाट ।
कळ पदम करि चिहु कनारे
थरकाई वेहां कर थाट ॥३४६॥

मखमल की सोड़ बिछाई गई जिसमें रेशम के भाग वाले गए (अथवा जिस पर रेशमी वस्त्र बिछाया गया)। चारों किनारों पर कला पदम (?) धरकर वेहों को। मजबूती से स्थिर किया गया। (अर्थ अस्पष्ट है)

वर कन्या बइठ वेहां विचि
विप्र करिवा लागा वीवाह ।
समधक री जोवता सगाई
उदधि मांही चावता उछाह ॥३४७॥

वर और कन्या वेहों के बीच में बैठ गये (तथा) ब्राह्मण (लोग) विवाह करवाने लगे। समधियों का संबंध देखकर (उनके हृदयों में) समुद्र की तरह उत्साह बढ़ रहा था।

इद्र ढाळइ चवर आगळि ऊभा,
विधि कीजइ वावरिजइ वीत ।
इद्राणी आरसी उतारइ,
गावइ तठइ अपछरा गीत ॥३४८॥

आगे खडे होकर इद्र चवर हिला रहे थे, ब्रह्मा द्रव्य लुटा रहे थे (?), इन्द्राणी आरसी (अथवा आरती ?) उतार रही थी (और) अप्सरायें वहा गीत गा रही थीं ।

साळउ दइ हाथ तपे तप शकर,
ब्रहम तियइ रउ करइ विचार ।
बीजी दुनो राखडी वाधइ,
शभूनाथ अचळ ससार ॥३४९॥

साला हाथ (से हव्य ?) दे (और) शकर तप करे, ब्रह्मा इसी (बात) का विचार करने लगे । ससार (मे) अविचल (रूप से स्थित) शभूनाथ के, दूसरे लोग राखी (रक्षासूत्र) बाधे (यह कैसी विचित्र बात है !)

परणेत हुया सिग चढ तीयइ प्रब,
जागी सद गू जीया जग ।
ईसर किया कवीसुर ईसर,
उमयावर दइ तइ उदग ॥३५०॥

इस पर्व पर सिग (वैवाहिक आचार) चढकर (शिव-पार्वती) विवाहित हुए । ससार मे नगारों की ध्वनि गूजी । उमापति ईश्वर ने उदक (पुण्य की जागीर,) देकर कवीश्वरों को भी (प्रभुता सम्पन्न) स्वामी बना दिया ।

मइठा तखत आइ नइ बेऊ
कु वळवाराह यमय कियइ ।
पुत्रवती हुई पारवती
देव ब्राह्मण आसीस दियइ ॥३५१॥

(शिव पार्वती) दोनों आकर तख्त पर बैठ । कोल में पठ (?) (शिव) ने गर्व (?) किया । देवों और ब्राह्मणों न आशीर्वाद दिया (कि) पार्वती पुत्रवती हो ।

ब्रह्मा विसम सुरे वीनवियउ
कांम सजीवति करइ कृपाळ ।
अवसर तणी वीनती अवसर
दियउ सरइ हि ज हुकम दयाळ ॥३५२॥

ब्रह्म विष्णु (आदि) देवताओं ने विनयपूर्वक कहा (हे) कृपालु ! कामदेव को जीवित कीजिये । अवसर के अनुकूल विनती जानकर दयालु (शिव) ने उसी समय (कामदेव को जीवित करने की) आज्ञा दे दी ।

मिसिमा सेज आपणइ मदिर
बे मणजांण बिहू घण नेह ।
पहिसच ई हुसउ पारवती
सहिस गुणउ वाधियउ सनेह ॥३५३॥

दोनों चतुर (और) दोनों अत्यधिक स्नेही अपने महल में (केलि) शय्या पर मिल । पार्वती के प्रति स्नेह (तो) पहिले ही था (पर अब वह) हजार गुना बढ़ गया ।

पनरह दिन लगइ नव नवा परठा,
घवळ हरे वइसरणा घरि ।
जाम जाम ताइ भगत जूजूई,
की हेमाचळ हेत करि ॥३५४॥

महल में डेरा करवा कर, पदरह दिनों तक नई नई सजावटें (?) (करवाते हुए) हिमाचल ने प्रेमपूर्वक याम-याम पर भांति-भांति की आवभगत की।

रस रहियउ जग मेरहर जीतउ,
जोइ जोइ करि परठ जिरण ।
दीन्हउ गिरवरए इतउ दाइजउ,
कीमति जिरण री हुवइ किरण ॥३५५॥

विजय पर्वतराज की रही, जिसके (द्वारा किये गए) स्वागत सत्कार (?) को देख-देख कर (बडा) आनद रहा। गिरिराज ने इतना दहेज दिया, जिसका मूल्याङ्कन किससे हो ?

छाही व्रना सुद्रव्य छेलिया,
प्रिथी प्रमाणइ घरइ पगि ।
दियरण तरणइ ईसर घरणदानी
जगहथ बाधउ तरइ जगि ॥३५६॥

लोकानुकूल कार्य करते हुए (शिव ने) छहों वर्णों को भरपूर द्रव्य देकर तृप्त कर दिया। बहुदानी (शिव) ने उस समय दान द्वारा संसार में श्रेष्ठ ख्याति (?) अर्जित की।

माया परणीज शिवपुरी ईसर
मउछाहे मुखमखे भावास ।
प्रिथी सयल आवी पइसारइ
दिन आज रउ वखांणइ दास ॥३४७॥

शिव विवाह करके शिवपुरी में आये। आवास में मखमल की बिछायत की गई। सारी पृथ्वी (के लोग) मिलने के लिए (?) आये। दास आज के दिन का कैसे बखान करे!

अतुळीबिळ तपइ सिवपुरी ईसर,
अनखां मडण अनाथांनाथ ।
सिगळां ही सुख दमरा सेवकां
हुय वर हसत वरीसरा हाथ ॥३४८॥

अनखों को मस्त बनाने वाले अनाथों के नाथ सेवकों को सभी सुख प्रदान करने वाले (और) श्रेष्ठ घोड़ों (तथा) हाथियों का (अपने) हाथ से दान देने वाले अतुल पराक्रमी शिव शिवपुरी में तप रहे (प्रताप सहित विराजमान) हैं।

पुत्र तरह हुया मनोरथ पूगा
सिगळा हो हरखीया सुर ।
देव अनेक जियइ दुहविया
सुर ऊथा नांखिया असुर ॥३४९॥

तब (पार्वती के) पुत्र उत्पन्न हुआ। जिस असुर ने अनेक देवताओं को दुःखित किया और सुरों को उखाड़ (?) डालिया (उसका संहारक जानकर) मनोरथ पूर्ण होने से सभी सुर हर्षित हुए।

आया सुर मिले महोछव ऊपर,
पच सवदउ वाजियउ पडूर ।
देव तणाउ मुख झाखउ दीसइ,
सहस गुणउ ऊगउ जग सूर ॥३६०॥

(पुत्र जन्म के) महोत्सव पर (सभी) देवता मिलकर आये। पाचों मागलिक वाद्य वजे। देवताओं के मुख खिन्न (?) देखकर ससार में हजार गुने (प्रकाश वाले कार्तिकेय रूपी) सूर्य का उदय हुआ।

कातिगसुर नाम दियउ व्रह्मादिक,
राज अचळ अचळ जग रिद्ध ।
दइत तणाउ सिहासण डिगियउ,
कोई धोम प्रगटिओ वडसिद्ध ॥३६१॥

व्रह्मादिक (देवताओं) ने (उसे) कार्तिकेय नाम दिया। (उसका) राज्य अचल (और) ससार मे (उसका) यश अचल (वतलाया)। दैत्य का सिंहासन डिगा (जिससे उसने समझा कि) कोई वडा जवर्दस्त सिद्ध प्रगट हुआ है।

इद्र रथइ ज्याग तेडिया ईसर,
गवरी सरस करे बहु गाढ ।
व्रह्मा विसन देव अन दाखइ,
आया खडे वडा अवगाढ ॥३६२॥

शिव (और) गौरी ने अत्यधिक प्रेमपूर्वक यज्ञ में इद्र के रथ (पर) व्रह्मा, विष्णु और अन्य वड़े पराक्रमी देवताओं को बुला भेजा (जिनका वर्णन कौन करे), जो चल कर आये।

तीस कोडि तिन्न कोड देव तन्न
सुर आयी आवीया सहि ।
दास तणी परि कांम दिखावइ,
मुनवर रुधा दइत महि ॥३६३॥

तेतीस कोटि देव और देवियां सभी (वहां) आये । दैत्य द्वारा सताये हुए मुनिवर (भी) दास्यभाव प्रगट कर रहे थे ।

सिव कहियउ देवां सिगळां ही
दूजा कोइ न दीसइ देव ।
देवां वियां कन्हा धणा दानी
भोळी चक्रवति पूछइ भेव ॥३६४॥

शिव ने सभी देवताओं से कहा (कि क्या) दूसरा कोई देवता दिखाई नहीं देता (जो इस संकट से बचावे) । तदुपरान्त भोलेनाथ (शिव) ने दूसरे देवताओं से भेद (की बात) पूछी ।

सुर आखइ अरज करे ताइ समळ,
देव बडा पछाडइ दइत ।
मानइ हुकम जउ हुयइ उयै रउ
रहिया हुइ उनमइ री रइत ॥३६५॥

यह सुनकर देवों ने विनयपूर्वक कहा (कि उस) दैत्य ने बड़े बड़े देवताओं को पछाड़ दिया । जो (भी) उसका हुक्म मानता है (वही) होता है । (देव तो) उसकी प्रजा होकर रह गये हैं ।

सिव तिण वार पनाग साहियइ,
वंगाली दाखवइ वळ ।
उण वेळा सिव रइ मुह आगळ,
दूजा कुण नेठवइ वळ ॥३६६॥

उस समय शिव ने धनुष उठा कर जवर्दस्त वल प्रगट किया। उस समय दूसरा (ऐसा) कौन था जो शिव के सामने वल प्रगट करे (?)।

तरइ विसन कहइ आगळी विसभर,
व्रह्म तणउ छइ उया वर ।
तीने भुवण त्रिसीग ताडिया,
धणी ज कीया सयल धर ॥३६७॥

तव विष्णु ने शिव से कहा (कि) उसे (दैत्य को) व्रह्मा का वर प्राप्त है। जवर्दस्त पराक्रमी (दैत्य) ने तीनों भुवनों को प्रताडित करके देवताओं को (भी) गिरिवासी वना दिया (?)।

व्रह्म तरइ पूछिया विसभर.
दाखवि मरइ कियइ परि दइत ।
देव तणउ वाहरू दाखइ,
रहिया देव वडा हुइ रइत ॥३६८॥

तव शिव ने व्रह्मा से पूछा (कि वह) दैत्य किस तरह मरे सो उपाय वताओ। वड़े वड़े देवता (दैत्य की) प्रजा वन कर रह रहे हैं, उनका उद्धारक वताओ।

सेनापति कुंवर हुग्रो कातिगसुर
सुर हुविया ग्रनेरा साथ ।
तह ब्रहम कहइ ग्रागळि विसंभर,
जाई ग्रसुर सहो भाराथ ॥३६६॥

ब्रह्मा ने शिव से कहा कि कुमार कार्तिकेय सेनापति बने और दूसरे देवता साथ हों, तो युद्ध में असुर का नाश निश्चित ही हो।

ग्राइ्रपइ उकति पूछिया ईसर
मेल्हीय कुंवर सिमरण ताइ माज ।
एकरण देव ऊमरइ इतरा
ग्रासइ सती धनउ दिन ग्राज ॥३७०॥

शिव ने शीघ्रतापूर्वक पार्वती से उनकी इच्छा जानने के लिए पूछा। पार्वती ने कहा (कि) आज का दिन धन्य है (जो) एक (मेरे पुत्र) के लिए इतने देवता (आये) हैं।

वहिसउ दीन्हउ हुकम विसंभर,
मेछ पछाडरण ग्राप ग्रस ।
वजइ राग नीसांण वाजियइ
दइत सरणइ देसे दहल ॥३७१॥

फिर शिव ने म्लेच्छों को पछाड़ने के लिए अपने पराक्रमी पुत्र (?) को आज्ञा दी। दैत्यों को दहला देने वाले वाद्य युद्ध की राग में बज उठे।

प्रह पूठती समा जाइ पूगा,
घेरिया असुर रूधिया घाट ।
ऊतरिया उर थट्ट आवे नइ,
दीजइ दइत तणइ सिर दाट ॥३७२॥

प्रभात होते समय (ही देवता) जा पहुचे (और) असुरों को घेर कर (उनके) मार्ग रोक दिये। देवताओं के दल के दल आकर जमा हुए (और) दैत्यों को दबाने लगे।

तडकाइसुर दइत बाधियउ तरकस,
देखे दळ हीसीयउ दूठ ।
हलकारइ भड आप अपूठउ,
पूठी रखउ थापलइ पूठ ॥३७३॥

तारकासुर दैत्य ने तरकश बाधा (और वह) दुष्ट (देवताओं के) दल देखकर हसा। स्वय पीछे खड़ा (वह) योद्धाओं को प्रोत्साहित करने लगा (और उनकी) पीठ थपथपा कर कहने लगा–हिम्मत रखो '

मिलिया अणी अणी रसणे मिल,
सइधे मुहे घूमिया सार ।
झालरिया नाखे भड झिलिया,
धसकइ धरा वाजियइ धार ॥३७४॥

सेना के सामने सेना खड़ी होगई (व) घोड़े (?) एक दूसरे के सामने जा अड़े। कवच धारण कर योद्धा भिड़ पड़े (और) तलवारें बजने लगीं तथा पृथ्वी धसकने लगी।

आवइ नव नवा भड़ अणीए,
छोड कमांण मींछटइ बांण ।
देव करारा हाथ दाखवइ
असुरां थड़ भूकइ अवसांण ॥३७५॥

सेना से नये-नये योद्धा (निकलकर) आये (जिनकी) कमानों से बाण छूटने लगे। देवों के पराक्रमी प्रहारों से असुरों की सेना घबरा उठी।

बळ करतउ अणू झोकावतउ
जस भड़ आभ जिसा केसार ।
ठोसइ गयंद पहाड़ ठेलंतइ
आया असुर करे अहंकार ॥३७६॥

अत्यधिक बल (अगट) करते हुए, (योद्धाओं) को ललकारते हुए, आकाश के समान विशालकाय (?) लाखों असुर योद्धा हाथियों के धक्कों से पर्वतों को ठेलते हुए, अहंकार पूर्वक आये।

वाजिया आम्हो सांम्हा वागड,
घाट पुड़ंती त्रिविध धड़ ।
झटकइ कड़ी झड़की लागे
घ्यागे जागा घहड़ पड़ ॥३७७॥

सेना के दोनों प्रकार से भिड़ते ही परस्पर शस्त्र बज उठे। तलवार के प्रहार से टकरा कर (कवचों की) कड़ियाँ टूटने लगीं (और) जोश में भरे हुए (?) धड़ घूमने लगे।

दइत पहाड जिसा दाखीजइ,
भड चूरणा करता भाराथ ।
गात्र कुवार सादूळ तणी गति,
निज तो सरण अनाथा नाथ ॥३७८॥

युद्ध मे वीरों को चकनाचूर (?) करने में पहाड के समान दैत्यों (पर) अपने (भक्तों) को शरण देने वाले अनाथो के नाथ (शिव की कृपा से) कुमार कार्तिकेय का शरीर सिंह के समान था (?)

कुवरागुरु तरइ पुन्नाग ग्रह्यउ कर,
भड हलकारइ महाभड ।
एकरण बारण कवारण आवजइ,
ऊपाडे नाखिया उपड ॥३७९॥

तब कुमारश्रेष्ठ ने हाथ मे धनुष धारण किया (और उस) महान योद्धा ने योद्धाओं को प्रोत्साहित किया। कमान से छोडे गये एक ही बाण से (उसने) बडों-बडों को (?) उखाड़ डाला ।

मिटिया असुर मारिया माझी,
गोरू हुइ मुख घास ग्रहइ ।
कहरी जिके छुरी विच काढइ,
रहइ तिके पग छांह रहइ ॥३८०॥

असुर समाप्त होगये, (उनके) मुखिया मारे गये । (जो बचे उन्होंने) कायर बनकर मुंह में तिनका ले लिया। जो लड़ने वाले थे उन्हें शस्त्रों से मार डाला (और) जो बचे वे शरणागत बन कर रहे ।

जीतइ सणा विवाडे मांगे
हुई वधाई लगइ हरि ।
सुर असुरां अगा छोडाविया
सणा महोछव घरा घर ॥३८१॥

विजय के नगाड़े बजाये गये बधाई हुई (और) जय के नारे लगाये गये। देवताओं को असुरों से मुक्त करवा दिया (जिससे) घर घर में अनेक महोत्सव हुए।

अकल सकल अवगति अपरपर
रांमेसर मोटच राजांन ।
किसनउ कहइ कृपा हिव कीजइ
वड दातार वधारण वांन ॥३८२॥

सारी सृष्टि में जिसकी गति का कोई पार नहीं है (ऐसे) महान राजा शिव से (कवि) किसना कहता है कि समृद्धि देनेवाले हे बड़े दातार अब (तो) कृपा करो।

इति श्री महादेवजी पारवती महाचरित्र वेलि संपूर्ण समाप्त ॥

संवत् १७२० वर्षे माघ मासे शुक्ल पक्षे ५ पंचम्यां तिथौ शनिवारे। महाराजकुमार श्री ५ श्री अनोपसिंहजी चिरंजीवि।

महादेव पारवती री वेलि

शब्दार्थ और टिप्पणियाँ

(छंदक्रमानुसार)

१ दाखीजइ=कही जाय, घणइ=अधिक, (हरि के स्थान पर हर होना चाहिये)।

२ 'बावन अक्खर' से तात्पय माहेश्वर सूत्र से है जो निम्न प्रकार है—अ इ उ (ण्), ऋ लृ (क्), ए ओ (ङ्), ऐ औ (च्), ह य व र (ट्), ल (ण्), ञ म ङ ण न (म्), झ भ (ञ्), घ ढ ध (ष्), ज ब ग ड द (श्) ख फ छ ठ थ च ट त (व्), क प (य्), श ष र (र्, ह (ल्)।

३ तणउ=का, हूं=मैं।
(हरि के स्थान पर हर और पूखण के स्थान पर पूरवण पढ़ें)

४ मांडियउ = मंडित (सुशोभित), लग=पर्यंत।

५ पुडि=तल, जह रउ=जिसका, आवण जाण=आवागमन, नितकउ=नित्य, वउलिया=बीत गए।

६ खसतो=झगड़ते हुए, वाली=लघु, वेस=वयस, उम्र।

७ आखइ=कहते हैं, तो=तुम्हारे, पुणइ=कहते हैं, परि= भाँति, अनेरी=अन्य, रमाडियउ=रमाया, खिलाया, रामा=स्त्री, घवराडियउ=हुलराया।

८ लहइ=प्राप्त करे, जाने, आछइ=है, नीसरइ=निकलती हैं, सभ=सृष्टि।

९ खपइ=समाप्त होते हो, आइस=आयस, योगी, वावइ=वजाते हो।

१० छत्र=प्रताप, आसत=करामात, पुहडइ=झूठा होना, वे=दोनों, सामठा=सम्मिलित, साचादेव=सच्चे देवता।

११ ऊमल=अमल, आगमिया=(आंगलियां पाठ उपयुक्त प्रतीत होता है।) न को=कोई नहीं, चा=का।

३१. तामस=क्रोध, दल=समूह, बालिया =जला दिया, मतत=मत्याचारी, जेहि=जोड, समता।

३२ जगन=यज्ञ, फरार=दृढता, तीजी =तीसरी, रिखे=ऋषि ने।

३३. मेरवड=मेरु से भी बडा, महाभड =महान योद्धा।

३४ कितरा=कितने, कीधी=की, दीठउ= देखा, तरइ=तब, उभ्रन=दोनों।

३५ भणियउ=कहा, वायक=वचन, एह=इस, इसडउ=ऐसा, पुड=तल, पडती=गिरती हुई।

३६ ताइ=वह; साभलि=बताओ, असडउ=ऐसा, मछइ=है, बियइ= दूसरे, माराधनइ=माराधना कर, जिको=जिस, माणू=माह्वान करू, लाऊ, तइ=वह, मागिया=माज्ञा।

३७ मागा=ठेठ, लगइ=मे, जोवता= देखने पर, पखउ=बिना, साहइ= सहन करे।

३८ पहतउ=पहु चा, कन्हा=से, पिण= भी, ऊहिज=वही, सधारण=उद्धार करने वाला, जाग=यज्ञ।

३९ विण=बिना, भखियउ = भक्षण किया, गुमा=गुफा।

४० वछइ=चाहे, इतरउ=इतना, जहीं= जिस, नू =को, जे=जो।

४१ वहउ=धारण करते हो, माहरइ= मेरे।

४२ मांडिया=स्थिर कर लिया, उतवग =सिर, जियइ=जिसने, द्र =पवत, माथइ=पर, निमख=निमिष, पख=प्रवाह।

४३ पउढिया=सोगए, पान= वट) पत्र, कोली = शिशु, यतरउ = जितना, केते एके=कितने ही, जागविया= जगे।

४४ वार = समय, प्रगट कर = सृष्टि, वोलाई = बुलाकर।

४५ दहणइ=दाहिने, दीध = दिया, मागा = सामने, कीध = किया, माडियउ=बनाया।

४६ दिख=दक्ष, नू = को, रउ=का, जिम=जैसा, रामत=तमाशा।

४७ नयर = नगर, चा=के, नमइ = नमस्कार करते हैं, झुकते हैं, दह=दस।

४८ तइ=उस, परग्रह=साथ, कुटुम्ब, लहइ=पाय।

४९ मतरइ=बाद।

५० मावीत्र = माता-पिता, के = कई, बीजा=दूसरे, चीत=चित्त, मादिया सकत=माद्या शक्ति, मसडी=ऐसी, ऊगो=उगा, मादीत=मादित्य।

देखने पर, ऊगा=उदित हुए, किरि=मानो।

६९ दाण=समय, डसण=दांत, चोल=रंगे हुए, ग्रहर=अधर, कूकू=कुंकुम, व्रन=वर्ण, सारिखा=समान।

७० दहलइ=दहलजाते हैं, सकति=शकित होते हैं, सचउ=साचे, सुचग=सुन्दर।

७१ सूरातण=शौर्य, छवडइ=शावक।

७२ चाढी = चढाई, खैंची, तूजी = प्रत्यञ्चा, कुवरि वलोच=वलोच कन्या (वलोच जाति के लोग उत्तम धनुर्धर समझे जाते थे)।

७३ निलइ=ललाट, वाणाध=सूर्य।

७४ वासउ=पृष्ठ भाग, पिंड=शरीर, उदमाद=चाञ्चल्य, वृख=वृक्ष, विलागउ=लगा, व्रख=विष।

७५ परणाई=विवाह में दी, रायहर=राजकुमार, अवरा=दूसरो, जेठी=वडी, वडज्याग=वडे यज्ञ।

७६ सयल = सकल, 'दाखउ = कहो, वताओ, वाधारण=वृद्धि करने वाला।

७७ आलोच=सोच, वींद=पति।

७८ लोपइला = गिराये, मिटाये, गहिलउ=पागल, गिरमेर=हिमाचल, पखउ=रहित; नालेर=नारियल।

७९ माठइ=अनिच्छुक, मेल्हियउ=भेजा, आगा=पहले, परणीजसी=विवाहित होगी, पाटोधर=श्रेष्ठ, वरदल=उपयुक्त, हुस्यइ=होगा।

८० गाहड=गर्व, खडे=चल कर, इलगार=उमग, उत्साह।

८१ जोयन=योजन, असउड=ऐसा।

८२ सवलकता=कोमल, सिसहर=चद्रमा, पाखती=पार्श्व, गयणग=आकाश।

८३. वणराइ=वनराजि, पखी=पक्षी, सुर=स्वर।

८४ लुव=झुक, सारसी=क्रीडा।

८५ मयगल=हाथी, पाएले=पैदल।

८६ उडियण = नक्षत्र, लागा = लगे, तेथि=वहां, बास=बास वृक्ष।

८७ अढारइ भार=प्रचुर रूप में, आन्या=आज्ञा, आन, चावरियाल=चमरी गायें, ववाल=वव्वरसिंह।

८८ खाभिया=खभे।

८९ झवुका=वेगजन्य झाग, नाखती=उत्पन्न करती हुई, पइडउ=कदम, दइत=देते ही, रखते ही।

९० गहण=गहन, विचालइ=वीच में, चीतवणी=चिन्ता, विचार।

९१ कारिज=कार्य, भास्या=भाषा।

९२ पंखेरू=पक्षी, आगलि=सामने, विवरा=विस्तार, सुधउ=सहित;

११५ जानी=बाराती, नागिन्द्र=नागराज, सुपहि=राजा, वडावडि=वडी वडी वातें।

११६ थाट = समूह, हालण = चलने, पह=मार्ग, गरथ=द्रव्य, गह=आनन्द।

११७ माता=मस्त, अमता=उन्मत्त, वहइ=चलते हैं, घडइ=सम्मिलित।

११८ उदियारण=उदाहरण, तोट=टोटा, दीवाड=देने वाले, वहूली=वाहुल्य, दमामे=नगारे पर।

११९ आरास=सजावट, दलवाइल=वडे तवू, ताणिया=तान दिये, फारक=फुर्तीले, फरास=फर्राश।

१२० दीवाण=राजा, शिव, चोज=उत्साह, इतउ=इतना, अजा=वकरी, वे=दोनो।

१२१ कन्हा=अथवा, वादोवादि=वद-वद कर, अनइ=और, प्रसादि=कृपा।

१२२ आगलियार=आगे, वधाऊ=वधाई देने वाले।

१२३ पइसारइ=प्रवेश, मडाण=आकार, रूपसज्जा, जागीए=नगारे, धुरते=वजते, आपांण=अपना।

१२४ भेख=भेष, भव=शिव, वांदिवा=वदना करने, विसेख=विशिष्ट कार्य से।

१२५ ओलभा=उलहने, किताई=कितने ही, मेल्हइ=रखते हैं, सरीखउ=समान।

१२६ विह=विधि, कठा=कहा से, आणीयउ=लाये हैं, जोइ=ढूढ कर।

१२७ आडवर=ठाठ—वाठ, सालाहेली=सालों की स्त्रिया।

१२८ अलाधइ=नही पा सकती, वतकाव=चर्चा, साभली=सुनकर, कितरउ=कितना, अणदोह=दुख।

१२९ किसू=क्या, वापडा=वेचारे, वीसहथी=देवी रूपा सती।

१३० वले=फिर, नाखिया=डाले, जोई=देखकर, सिगलाही=सभी के, दलद्र=दारिद्र्य, नइ=तथा।

१३१ आणियउ=लाई, सुन्दर=स्त्री, पामिस्यइ=प्राप्त करेगी।

१३२ अउ=यह, खुडी=एडी, अणवर=अन्यवर।

१३३ धवल=मागलिक गीत, बाजोट=पाटा, वसत=वस्त्र, माजणउ=स्नान।

१३४ वदजइ=कहे जाय, वरी=वधू के लिए बनाया गया विशेष मूल्यवान वेप।

१३५ नाह=स्नान, तल=नीचे।

१३६ आगलियार=सेवा में नियुक्त।

१५६ कतराइ=कितनाही, ग्रर्थ = द्रव्य, एकरमउ = एक बार; घणघट = ग्रत्यंत ।

१५७ नीछटता=निकलते हुए, निमख= निमिष, पहिनकउ=पूर्व जन्म का ।

१५८ समुचइ=सुमुच्चय से, रस=ग्रानद ।

१५९ दरीखानइ=बैठक में, नाखिया= बिछाये, दुलीचा=कालीन ।

१६० वोल=('वोल ऊरर रहना' एक मुहावरा है जिसका ग्राशय श्रेष्ठतर होने से है) ।

१६१ रद=रद्द, ग्रनेरा=दूसरे ।

१६२. ग्रातरइ=विलम्ब, ग्रवगाहे = देर कर, खुटक=खटका, चिन्ता ।

१६३. महिराण=महाराणा ग्रथवा समुद्र, भाजण = तोड़ने वाला, मिटाने वाला, घडण=बनाने वाला, ग्रनमी =किसी के ग्रागे न झुकने वाला, वेद कुराण=वेद पुराण ।

१६४ ग्रहमेव=ग्रहंकार, ग्रहगली=डूबे हुए, कोडि=करोडों उपायों से भी ।

१६५ ग्रत पखउ=ग्रनत, दाइजउ=दहेज, जंवाई=दामाद, थयु हेक=थोड़ासा, खाटउ जीव=जी खट्टा ।

१६६ जणावइ=जताते, लाडउ=वर (शिव), सभ=शभु, वहइ = धारण की ।

१६७ ऊरण=उऋण, जागी=नगारे, किलाम=कैलाश ।

१६८ लाडो=वधू, वधाया=स्वागत किया, गूडी ऊछल =गुलाल उछली ग्रथवा पताका फहरी (गूडी उछलना एक कहावत रूप में प्रयुक्त होता है ।)

१६९ वउलिया=बीत गए, ग्रारभियउ= प्रारभ किया, स्रगलोक=स्वर्गलोक ।

१७०. जावै=देख रहे हैं, घडे=एकत्रित ।

१७१ विसन=विष्णु, प्रव=पव ।

१७२ तिवार=उस समय, सामि=स्वामी, किसउ=कैसा, कउतिग=कौतुक ।

१७३ ग्रवधार = मानो, स्व कार करो, मानइ=मुझे ।

१७४ जोगण = सती, योगी की स्त्री, राम=चैन, परायइ=पराये, वासइ घर पर ।

१७५ कवण=कौन ।

१७६ वरजइ=रोकने, मना करने, किसी कौनसी, मिस=बहाना, ईण=इस, मिलवा=मिलने के लिए, मावीता= मात-पिता से, चीत=चित्त ।

१७७ ठाव=स्थान, ग्रागइ=पहिले, जाई-जइ=जाया जाय, जाइगह = जगह, माम=प्रतिष्ठा ।

१७८. ग्रात = विचार, ग्राणी = लाई, हेक=एक, ऊमाहइ = उत्साह में, कथपिया=उल्लङ्घन किया ।

१९८ आगलि=सामने, आगे, भाजे नइ= भग कर, ऊवेलि = उबारो, पूठि= शरण, मुखी=प्रधान, मुख्य, दूठि दुष्टतापूर्वक।

१९९ महाहु ती=में से, वेढीमणा=युद्ध करने वाले, घाय=वार।

२०० सांभलियउ = सुना, तरइ = तब, सउणे=कानो से, दियउमूत=शरीर छोड दिया, वलियउ=लौट आया, अहमड=भयंकर, विशाल।

२०१ रउदाल = रौद्र, वियाग = अग्नि, अनइ=और, ब्रहमंड = ब्रह्माण्ड, जडाहुंती = जड से, काढियउ = निकाल फैंका।

२०२ थरकिया=कापने लगे, पखइ=बिना, परजलियउ=जला, विलागी = जा लगी, ब्रोम=व्योम, आकाश।

२०३ विढवा=लडने के लिए, भुव=शिव, जिवार=जब, अठहबड=कापने लगे, वासग=वासुकि, शेषनाग।

२०४ सूरातन = शौर्य, वाधिया = बढे, फूलने लगे, द्रोही=शत्रु, द्र ग=गाव।

२०५ वरियाम = श्रेष्ठ, ताहरा = तब, सुजसउ=सुयशस्वी।

२०६ बीजइ=दूसरे, बेऊ=दोनों, दुबारा; दिख=दक्ष।

२०७ तसलीम=नमस्कार, तिवारइ=तब, परठिया = पहुंचे, जमे, पयाल = पाताल; विलागउ=जालगा, उतवग =उत्तमाङ्ग, मस्तक, आल=छेड।

२०८ घणी=स्वामी, सिध=सिद्ध, वाहइ प्रहार करता, चलाता, आविधि= आयुध।

२०९ भयचक=भय से चकित, भाजगई= गायब होगई, केवा = बदला, प्रतिशोध, मांगण = लेने, करूर = क्रूर।

२१० नाठी=विलीन हुई, राव = राजा (दक्ष), नीसरियउ=निकल भागा, छडे = छोडकर, जावा=जाने, किसी=कौनसी, बाध=भुजायें।

२११ वरगा=अंगो के टुकडे, धीब=चोट; भृगिट=मस्तक, रमाडइ=खिलाता है, घड=सेना।

२१२ विभाग = टुकड़े, सतहर = शत्रु; विहड=नष्ट।

२१३ कचर=कुचल, कूट=पीट, नाखिया =डाला, कितरा=कितने, पसरा= पिचकारिया, छर=प्रहार, आवरत =युद्ध, घुल ता=भिडते हुए, थट= समूह, वाढालधर=तलवार धारण करने वाला।

२१४ तुछ=तुच्छ, अल्प, माछला= मछलिया, तिण विध=उस प्रकार, भडजर=अस्थिपञ्जर, भागा= टूट गये, घायल हो गये; एकण= एकही, हाथ=वार, कहर=वज्र।

२३२. मिना=मैना (हिमाचल की रानी), टूक = पर्वत शिखर, सिगलइ = समूचे, अंतेवर=अन्त पुर।

२३३ रइ=के, गाहड=गर्व, तिको=वह, पेखीयउ=देखा, सपेखे=देख कर, वार=पानी।

२३४ नइडउ=नजदीक, कामिरण= कामिनी।

२३५ अउछाडे=खींच कर, लीध=लिया, रिदइ = हृदय, आणियउ = लाये, नाल=समय, तियां=उनका।

२३६ खिरण = क्षण, ढुलइ=हिलते हैं, दिसे=ओर, दिशाओं में, सुचग= सुदर, एकीका=एक-एक, सइ= सब।

२३७ घवराडरण = लाडपूर्वक खिलाना, चित्रपुहर = चारों पहर, चाल = विनोद, माईतां=माता-पिता का, दुवाल=दुनिया के धन्धे।

२३८ मावीता = मात-पिता, वाधइ= बधती है, विप्र = वपु, शरीर, सायर=चतुर, समुद्र, वासुर=दिन।

२३९ जोवरण=यौवन, छव=छवि, काति, जुई=न्यारी, बारे दीहे = बारह दिनों में।

२४० वय=उम्र, कलाइर = कालीघटा, आसति=चमत्कार।

२४१. केहो=किसकी, कैसी, खमियउ= सहन किया जाय।

२४२ मीढता = तुलना करते समय, सिहलीक=सिंह, जिसी=जैसी।

२४३ जाणपणउ = ज्ञान, वाद लागा= होड की, महामह=समुद्र, अजाद= मर्यादा।

२४४ वसु=धन, माणरण=उपभोग करने के लिए, छावी=छवियुक्त, छवीली, छिलइ=छलकती हुई।

२४५ चिटी=कनीष्ठिका, चिट्ठी, उघाडी =खोलकर, खुली हुई।

२४६ नाट चिरत=आनद भ्रमण, रिख= ऋषि, गिरिंद=हिमालय, प्राहुणा =पाहुन, अतिथि, चलणे=पैरों में, सूधे=शुद्ध, सीधे।

२४७ साखइत = साख का, संबंध के योग्य, दही दियइ=दही लगाया जाय (वर के मस्तक पर दही लगाने सबधी वैवाहिक आचार)।

२४८. आ=यह, परणीजसी = विवाहित होंगे, काइ = क्या, राइहर= राजपुत्र।

२४९ दीजइ नालेर = नारियल दीजिए (टीके का नारियल देने की प्रथा), इयउ=यह, दाखवि=बताओ, परि =प्रकार, उपाय, भाति।

सधियां, प्रवत्र=पवित्र, जनोई= यज्ञोपवीत, गलइ=गले में, जाचण परीक्षा करने, जांचने, प्रापाण= शक्ति, सत।

२६८ माणस भल'=भलीमानुस; किम= क्यों, किसलिये, वामण=ब्राह्मण; भजाणजिम=भ्रजानकार की तरह।

२६९ घणइ=बहुत, वाछइ=चाहती है, ऊगइ=उसी, मेल=मिलन, विवाह।

२७० निघात=मर्म, जाणपणउ=ज्ञान, गहिला=पागलो, प्राखडी=प्रतिज्ञा, प्रण।

२७१ घोवा=अजलि, बिहिनि=दो तीन, चाळइ=रमाता है, ऊखधी=प्रौषधि, भग, वासउ = निवास, ता = उन, सरिस=मे, वाद=जिद्द।

२७२ लाजती=लजाती हुई, कहिस्यइ= कहेगा, भनेरीकाय = भ्रौर कुछ, माहरइ=मेरे, परउ=दूर, भ्रलग, रिसीसर=ऋषीश्वर।

२७३ चीतवियउ=सोचा, विचार किया, इसउ=ऐसा, ऊठिनइ=उठकर, हसि =हस कर, तरइ = तब,वनिता = स्त्री, पार्वती, निज=स्वय।

२७४ घरउ हुकम=प्राज्ञा दो, चरणधरां =प्राचरण करें, जियइ विघ= जिस प्रकार।

२७५. कहि दाखवीयउ = कह कर प्रगट किया, कीजइ = कीजिये, जान= बारात, बधाऊ=बधाई दार, मावीत=माता-पिता।

२७६ थल = निवास, स्थान, पुहती = पहुची, मेलवा = भेजने के लिए, पठावै=भेजते हैं।

२७७ मेल्हिया=भेजे, गहड=बडे, ब्राह्मण, जिके=जो, कु वर=कुमारी, पावती, पिण=भ्रौर, भी, प्रापणे=भ्रपने।

२७८ तणे=के, साम्हउ=सामने, जात्र =यात्रा।

२७९ माहीनइ=महीने, मेल्हियउ=भेजा, परठा=सजावट।

२८० भ्रघर=पृथ्वी पर पडने से पूर्वही, लाडउ=वर, किना=भ्रथवा।

२८१ घातिया=बैठाये गये, वानइ= वान मे (विवाह के दिन से कुछ दिन पूर्व की जाने वाली वैवाहिक प्रथा); वेई=दोनों, भमर=भ्रमर, भीना=लुब्ध, भ्रनुरक्त।

२८२ थट=समूह (यहा बारात ,घणजाण =बहुज्ञ, फुणद्र=फणीन्द्र, नागराज, वरणवजइ=वर्णन किया जाय, केहा=कैसे, क्या-क्या।

२८३ सुजसा = सुयशस्वी, गरट=समूह, भुण्ड, सचाला = उमग सहित, तणइजि=के ही, लाघइ=प्राप्त कर, खाइजस्यइ=खाये जायेंगे, मिटेंगे।

२९९. साझिवा=साधने के लिए, पइसारइ =नगर प्रवेश ।

३०० आगलनी=आगे, अगवानी में, तठइ = वहां, तिणवार = उस समय, जाणे=मानो ।

३०१ धरियउ = रखा, वाजउट=पाटा, सूं घा = सुगन्धित-पदार्थ, अगर = अगरु, कस = खस, छडेह्या = छडीदार, ऊभा=खडे हुए ।

३०२ लागउ करण=करने लगा, माजणउ = स्नान, घनउ = धन्य, जाडा = गहरे, मांडिया=बनाये ।

३०३ ऊगटणउ=उबटन, बागओ=बागा, मुगलकालीन पोशाक, चूंप=ध्यान, यत्न, चाव; खवास=अनुचर ।

३०४ वणनइ = बनते हुए; भल=सुंदर, भली प्रकार, भेव = भिगो कर, छिडक कर, असडो=ऐसो ।

३०५ अजायब=विचित्र, जाडइ = दृढ़, सझि=सजा कर, साढियो=बैल ।

३०६ घूघर माल = घुंघरुओं की माला (गले में पहिनी हुई), घमकइ= शब्द करती है, गउखउ = बैल पर डाली जाने वाली वस्त्र निर्मित भूल, जडाव=रत्न ।

३०७ महुरी=लगाम, मूं झइ = असूझते हैं, तरह=चाल ।

३०८ रतनारो=रत्न = निर्मित, पाखर= भूल, पूठि = पीठ पर, रुलती = लटकती, भिडज=घोडा, वधइ= बढता है, भाण=सूर्य, अबर राव= सूर्य, हतउ=का, ओझाडइ=मिटाता, झाडदेता, सहिनाण=निशान ।

३०९ सिणगार=शृङ्गार करके, आणि-यउ=लाये, जोजन=योजन ।

३१० चढावे = लेपन कर, छिलता = सुशोभित ।

३११ विरह = अनेक, वेहडा = कलश, आण=लाकर, वदावइ = वदना करती हैं, कामण=स्त्रियां, वादण =वदन करने के लिए ।

३१२ जालानल=अनन्त-ज्वाल आग की लपटों का समूह, काढो= निकाली, ज्याग = यज्ञ, कवल= कमल, गउखसर=गवाक्ष (झरोखा) रूपी तालाब ।

३१३ व्रनवजइ = वर्णन किया जाय; बालियउ = जलादिया, मयण = कामदेव, अउलझे=उलझ रहा है; मुअउ=मरा हुआ ।

३१४ आहचइ = शीघ्रता से, हुंता=थे, अलतइ=आलक्तक से, चीतरिया= चित्रित, चिहटा=चिपक गये, छपगये; राय आगणइ = सुंदर आगन में चित्राम=चित्र ।

लहइ=जानती है, तउ=तो; भेष=भेद।

३२६ वाजणीं=वजने वाली, आगली=आगे, गोडीरव=समुद्र, सद=आवाज

३३० दसण=दात, दशन, सघली=सिंहल द्वीप का; सायर = हाथी, समुद्ररइ=कोरे गये, पवन=हलका, चूडउ=चूडा, चीतवइ=सोचा जाता है, तुरग=हस, मानसर = मानसरोवर।

३३१ दिणियर=दिनकर, सूर्य, चउगिरद=चारों ओर, कनारइ = किनारो पर, कु दण=सोना, कागरा=कगूरे।

३३२ मू दडी=अगूठी, इसडी = ऐसी, जयइ=उसके, पइरोजइ = पिरोजे (रत्न विशेष) की, हीणनजर=अल्पदृष्टि अथवा अंधा।

३३३ राखीयउ=रखा, आम रस=अमृत रस (अथवा आम्र रूपी कुचो का रस), भीडीयउ=भिडाकर (सभालकर) रखा, काचू=कचुक, कसणा=बधन, कस=खेंचकर, बाध कर।

३३४ सिर = ऊपरी भाग पर, खासइ खास=बिल्कुल खास, हीर = हीरे, पोयिया=पिरोये, ऊजास=प्रकाश।

३३५ तिको=वह, गलइ=गले में, हठाली=हठीली, तियइ = उन, हेकाहेक=एक से एक।

३३६ गहि=मानद, उन्माद, जरइ=जब, चाढियउ=चढाया।

३३७ अणियाला = अनियारे, तीखे, आजिया=आजलिया, सुरेख=सु दर, मू ठ = बिजली, उल्का, अपूठी = वापिस, पलका = चिलका, विम्ब, नाखइ=डालती है।

३३८ सूरिज = सूर्य, ऊगा = उदित हुए, जवहर=जवाहरात, रत्न, पाखती=पासमें, अर्क=सूर्य।

३३९ सीह=सिंह, वले=फिर, कार से, पाखरियउ = पाखर (झूल) से शोभित, वणता = वनिता, स्त्री, भमरा=भू हारो, भामण=भामिनी, स्त्री, भवर तिलक=सु दर तिलक, भाण=सूर्य।

३४० रायजादी=राजकुमारी, सिणगार=शृङ्गार, सउणे=स्रवणे, कानों में, तिए = उसके, झू टणा=कुण्डल, पन्नडी = रत्न विशेष, नान्हइ = छोटे, परि=समान, प्रकार।

३४१ लु बीया = लूमआये, अहर=अधर, दसण=दशन, दात, रसण=रसना, जीभ, जुडीया=भीगे हुए, ओतप्रोत, तबोल=पान।

३४२ चुवतइ=टपकते हुए, उढी=ओढी, चू नडी=चूनर, कोरजु=बिना धुला ताजा वस्त्र (कोरपाण), भृगुटि=

३५५ रस=आनद, जग=विवाह मे किया जाने वाला स्वागत सत्कार रूपी जग (हर कार्य मे युद्ध के समान विजय-पराजय की भावना का सूचक), मेरहर=हिमाचल, दाइजउ=दहेज, किण=किस से ।

३५६ छांही=छहो, अना=वर्णो को, छेलिया=धपा दिया, तृप्त कर दिया, प्रिथी प्रमाणइ धरइपग= पृथ्वी के परिमाण से पैर धरते हुए, मानवोचित व्यवहार करते हुए, जगहथ वाधउ=श्रेष्ठ कीर्ति अर्जित की ।

३५७ परणीज=विवाह करके, मुखमले =मखमल से, सयल=सकल, पइसारइ=नगर प्रवेश के समय ।

३५८ अतुलीबल = अतुलबलशाली, अनडानडण=अविजितो को विजित करने वालों, सिगला=सभी को, दयण=देने वाला, हयवर=श्रेष्ठ घोडा, हसत=हाथी, वरीसण= दान देने वाला ।

३५९ दूहविया=दु खित किया, ऊथा नाखिया=उलटे डाल दिये, पराजित करदिये ।

३६० पच सवदउ=पाचो ध्वनियो में= (पञ्च व द्य-तत्री, झांझ आदि), पहूर=याद्य विशेष (?), झांखउ =खिन्न (?) ।

३६१ कातिगसुर=कार्तिकेय, दइत=दैत्य, डिगियउ=डिगा, हिला, धोम= बडा (?) ।

३६२ गाढ=घना, प्रेम, अन=अन्य, खडे=चल कर, अवगाढ=जबदस्त, पराक्रमी ।

३६३ कोडि=कोटि, तिन्न=तीन; काम =इच्छा, परि=समान; रूधा सताये हुए, रुधे ।

३६४. दीसइ=दिखाई देते, कन्हा=से, भेव=भेद ।

३६५. अरज=अर्ज, विनती, पछाडइ= धराशायी कर देता है, उयैरउ= उसका, रइत=रैयत, प्रजा ।

३६६ पनाग=पिनाक, धनुष, साहियइ= समालते हैं, वगाली=जबर्दस्त, दाखवइ=प्रगट करते हैं, नेठवइ= आजमाये, प्रगट करे (?) ।

३६७ छइ=है, त्रिसीग=बडा पराक्रमी (?) ताडिया=प्रताडित किया, धणी= स्वामी, सयलधर=गिरिवासी ।

३६८ दाखवि=कहो, किमइ परि=किस प्रकार, वाहरू=उद्धारक, आततायी से छुडाने वाला ।

३६९ हुविया=हुए, जाइ=समाप्त होगा, सही=निश्चित रूप से, भाराथ= युद्ध ।

३७० भेल्हीस=भेजोगी, एकण=अकेले, धनउ=धन्य ।

पद्यानुक्रमणिका

प्रथम पक्ति	पद्य सख्या	पृष्ठ सख्या
अ		
अउछाडे लीघ रिदइ रइ आगइ	२३५	७६
अकल अछद अजोनी अविचल	१८७	६३
अकल सकल अत्रगति अपरपर	३८२	१२८
अग्त देखइ इक चिटी उघाडी	२४५	८२
अणजाण करइ निंद्या ईसर री	१८६	६४
आणियाला नयण आजिया अजण	३३७	११३
अतरी ताइ आत न आणी अतरि	१७८	६०
अति सीग अजायब थभ धणइ थट	३०५	१०२
अति सु दर कवल माडिया ऊपर	६८	२३
अतुलीवल तपइ सिवपुरी ईसर	३५८	१२०
अतुलीवल थट्ट मेल्हिया आहचइ	२९६	१००
अधिकी छत्र अधिकी ताइ आसत	१०	४
अनत कोट ब्रह्मण्ड तणा इ द्र	२८५	९६
अमृत सहित ईख रस आखा	९४	३२
अवरा नइ दीजइ उदियारण	११८	४०
अवसर एक अनेक आहवइ	८८	३०
अहमेव गयउ दिखतालउ ऊतर	१८२	६१
आ		
आखइ ताइ अरज करे ईसर नू	२२५	७६
आखइ ताइ भती अरज करि आगलि	१७३	५८
आखइ नो पिना नही ईसर	७	३

आ

आहवइ सकनि पूछिया ईसर	३७०	१२४
आकुम मदन चा तन ऊपडिया	६३	२२
आगलिया तिया मू दडी इसडी	३३२	१११
आपण पान फर मेल्हिया ईसर	६६	३३

इ

इम मिलणइ करता आया	२६२	६८
इ द्र ढालइ चवर आगलि ऊभा	२४८	११७
इ द्र पू छिया तरइ ब्रह्मादिक	२५५	८६
इ द्र रयइ ज्याग तेडिया ईसर	३६२	१२१

उ

उछाह करइ मावीत्र अनोपम	५०	१७
उडियाणी कसी मेखली ऊपरि	१४	५
उतपति कूण लहइ तो ईसर	८	३
उदमाद घणइ लगि चढती वानी	१३६	४७
उदमाद हुई छिव देख अनोपम	१४३	४८

ऊ

ऊगटणउ करे सिंहासण आवे	३०३	१०२
ऊठिया विसन अनइ ब्रह्मादिक	१८१	६१
ऊठी ताइ करे माजणउ उमया	३२७	११०
ऊतरिया कोस ऊपरइ आए	१२२	४१
ऊतरिया परण वधाऊ आया	१५६	५३
ऊ चउ आवास अपछरा अरधग	१०४	३५

ए

एकीकइ रोम ऊपरइ ईसर	१२	५

ऐ

ऐकीकइ निमल तेज ततु अधिकउ	५३	१८

ख

खटमास लगइ तप कियउ अखडित	२६६	८६
खिण पालणइ गोद लीजइ खण	२३६	७६

ग

गिरवर रइ सिखर माडियउ गाहड	२३३	७८
गुणदाणा इसा अमोलक गाढा	१४१	४८
गगाजल ऊधर भीलियइ भिलतउ	२८०	६४
ग्रभवास नही दस मास तणइ ग्रभ	४६	१७

घ

घूवरमाल चिहू दिसि घमकइ	३०६	१०३

च

चटघट विकट खेलता चाचर	२१२	७१
चढता थट वले मेलिया चढतइ	२८२	६५
चढती वय उपमा चढती	२४०	८१
चढिया रथे जोवता चिहु दिसि	६७	३३
चित हरखत हूया हिमाचल	२६०	१००
चीतवियउ इसउ अूठि नइ चाली	२७३	६२
चुवतइ रग सीस उढी चू नडी	३४२	११५

छ

छन छन ताइ हुआ आभरण छूटा	३१६	१०६
छाया तिण गयण रयण ऊछलती	२६०	६७
छाही अना सुद्रव्य छेलिया	३५६	११६
छिलता भिलता घणू छछोहा	८५	२६
छिलता पहाड पहाड पाखती	८४	२६
छोडावे वाह आपणी छिलती	३१५	१०६

तपिया तप बारह बरस लग तिण	३६	१४
तरइ पखेरू आगलि परधाना	६२	३१
तरइ विसन कहइ आगली विसभर	३६७	१२३
तसलीम करे ऊठियो तिवारइ	२०७	७०
तामस कियउ सती तन त्यागण	१६०	६४
तामस रिख करे वाधियउ तरकस	३१	११
ताली छूटइ नही एक तिल	२५३	८५
तिको हार गलइ पहिरियउ हठाली	३३५	११२
तिण नाद थकत हुई रथ मयकर	१३७	४६
तिण पग पग चदण तणा सरोवर	८३	२८
तिण मात वदइ अन्य बीजा भूपति	२७	१०
तिण वनि गहण विचालइ पथी	६०	३१
तिण वेला तरइ फरास तेडिया	२८६	६७
तीजी पीढी हुयउ तियारइ	३३	१२
तीस कोडि तिन्न कोड देव तन्न	३६३	१२२
तुछ जल ज्याही माछला तडफइ	२१४	७२
तू उपजइ न खपइ नहु आइस	६	४
त्रिहु ओखे आगलि कु ड अन्द्रइ	६३	३२
त्रीकम सरस लगावउ ताली	२८	१०

थ

थरहरिया भुवण त्रिण्हे तिवियका भड	१६	७

द

दइत पहाड जिसा दाखीजइ	३७८	१२७
दस जोयण लगे जिये री देही	६६	३४
दस दस दिगपाल दीसइ दम	२८८	६७
दस दिहाडा जान राखी राजादिख	१६५	५६

न

नदी वहइ भावुका नाखती	८६	३०
नयणा तणा धारा ननीछटता	१५७	५३
नवखड रा भूपाल निरखता	८०	२७
नाट चिरत फिरता रिख नारिद	२४६	८३
नाठी अगन नइ राव नीसरियउ	२१०	७१
नाली ताइ कठ तणी निरखता	६७	२३
नाली ताइ नाभ निरखता	६२	२१
नालेर लियउ प्रभु वात परीछी	१०६	३७
निज गउखे चढि चढि वाट निदालइ	२६३	६८
निरमल जल गग सनान करइ नितु	१०२	३५
निलइ तणी महिमा निरखता	७३	२५
नदी गण चढी आठ गण आगल	१८३	६२

प

पइसारइ तणउ माडियउ प्रारभ	२५३	४२
पउढिया पान प्रियाग तणइ प्रभु	४३	१५
पख एकण विचइ हुई वरं प्रापत	५४	१६
पग ऊमल विचइ पदम विराजइ	११	४
पग पहरी सकत वाजणी पायल	३२६	११०
पधारिया ब्रह्मा ले परिग्रह	११४	३६
पनरह दिन लगइ नव नवा परठा	३५६	११६
परणाई अवर रायहर अवरा	७५	२६
परणेत हुया सिग चढ तीयइ अव	३५०	११७
परधान कहइ किम राजा परिछउ	१६३	५५
परधाने परधान पूछिया	१११	३८
परवीया री चली पारवती	२६३	८८
परमेसर सरसती परमगुरु	१	१

वइठा माया आगमली वेऊ	३८४	११५
वगतर सहित ऊथलइ वरगा	२११	७१
वल करतउ घणू बोलावतउ	३७६	१२६
वलिहारी तूझ तणइ वहुनामो	२१	८
वहु सवदइ लाजती न बोलइ	२७२	६१
वाघउ रिख तिया उपराठां वाहा	३०	११
वाघिया चिहू करे वाजूवध	१४०	४७
वीजइ वाजवट आइ नइ वइठी	३२८	११०
वीजइ पुड करण जिगन भड वेऊ	२०६	६६
वीजइ पुड किया जिगन भड वेऊ	२११	७१
वीजा सुर खपइ ऊपजइ वाझइ	१३	५
वीजै पुट किया जिगन भड वेऊ	२१६	७३
वीहतइ इद्र कपिल रइ अस वाघउ	२६	१०
वुहराके भसम जिग न री वाघी	२२८	७७
वूढउ नीद नइ वीदणी वालक	१२८	४३
वूझइ किसू वापडा मानव	१२६	४०

भ

भद्र तेडिया अपूठउ भारथ	२३१	७८
भमिया मृत्य लोक भुमरण पिण भमियउ	२५	६
भयचक हुओ अनेक महाभड	२०६	७०
भर जोवरण ज्यु ही नेत्र छव भरिया	२३६	८०
भरिया चा सूर भयकर भारथ	१६	६
भरिया रग सुरग भाद्रवइ	३४१	११४
भागीरथ कहइ अजोनी समवि	४१	१४
भागीरथ कहइ मात ताइ साभलि	३६	१०
भागीरथ गग प्रसन हुइ भाणियउ	३५	१२

मणारभ मथे काठियउ मांहव	१८	७
माजणउ करे जोत कला मुख जोवइ	३२६	१०६
माडिया उतवग जियइ द्र् मायइ	४२	१५
माडिया सरोज भयग चइ मायइ	५६	१६
माडी परि वेहा माडण की	३४५	११६
माणस भला रहउ वन माहे	२६८	६०
मानव ताइ किसू किसू ताइ मणधर	१५३	५२
मानव नको नको ताइ मणधर	५१	१८
माहीनइ पहिली लगन मेल्हियउ	२७६	६४
मु हडे भरि बोलियउ महीपति	१८०	६१
मू ठी भरि सती रेणु जल साम्ही	१०३	३५

र

रउदाल कियउ तिण वार रूप रुद्र	२०१	६८
रतनारी पाखर पूठि रुल ती	३०८	१०३
रथ ऊतर ऊभा रायम्रागण	३२४	१०६
रम रहियउ जग मेरहर जीनउ	३५५	११६
रहियउ ताइ जगन सगर राजा रउ	३२	११
राजा जग सगर नामना राखण	२४	६
राजान अनेक तीयइ सिंग रमतउ	२८६	६६
रायजादी ऊभी रायआगण	३४०	११४

ल

लड्ता जग लहरि तुरगे लागा	७१	२४
लागइ तेय करण माजणउ लाडउ	३००	१०१
लावी दाढी हाथ लाकडी	२६७	६०

व

वड्नागर पुणग पइरवा ऊपर	६६	२३

वासिग रउ काठलउ विराजइ	१७	६
विजया जया कहइ आगइ विप्र	२६६	६०
विजया जया लियावइ नइ ल्यइ	२६५	८६
विढता कु भ निकु भ वाकारइ	१६५	६६
विधि कीधी वले वादतइ तोरण	१३०	४४
विनिता मिलि विनोद विचक्षण	१०६	३६
विरदपगाल झालियउ वीडउ	२५०	८७
विरह वेहडा अनेक आण वदावइ	३११	१०४
वीद कन्हा कन्हा जानी वखाणा	१२१	४१
वीवाह करण तेथ वैठा ब्राह्मण	१५२	५१
वृखराव तिसा गिरराव विराजइ	८२	२८
वेणीडड छोड लियउ वाकारे	२१६	७३
वेणीडड जिसउ विराजइ वासउ	७४	२५
वेणीडड वालियउ वलाके साम्हउ	२२२	७५
वदायउ वर तोरण आव वडाले	३२१	१०८

स

समझावइ कवण गवर नइ समझइ	१७५	५६
सहु मिलिया आवे सखी सहेली	१३३	४५
सामण पायाल गयउ अस्व समहरि	२६	६
सात सात रै मेल्हिया ईसर	२७७	६३
साते ही ब्रह्म ड सकिया	१६१	६४
साडूलउ एक अनेक सिंहली	१६७	६६
सालउ दइ हाथ तपे तप शकर	३४६	११७
साभल्यिउ तरइ विसभर सउणे	२००	६७
साम्हउ जिण कलस आणियउ सुन्दर	१३१	४४
सावीणा जोडी सारीखी	३४३	११५

पार्वती - मंगल

[राजस्थानी लोक काव्य]

१ विनय

विखम वेल वाघम्वर सोहै,
हरे निरजन सिव भोला,
सदा निरजन मिव भोला ।
गणपत और गणेस मनाऊ,
गुर के लागू पाव भजनगुरु,
अशा पाऊ मैं सिव की ।
माथे चदन अगर सुअजन,
जै जुग-वन्दन वनवारी ।
मोर-मुकट वम धरे सीस पर,
वहे गग सिव के न्यारी ।
गगा के न्हाए सैं पाप कटे,
विजया नै घोट्यां रग वणें ।
रामचद्र भज रामचद्र भज,
क्रिस्न नाव दे वलिहारी ।
सिव सिव सिव सिव रटो पिरानी,
जो मुकती होय ज्या थारी ।

२. कथा-प्रारम्भ

कह हणमता सुण वलवता,
एकल-एकल काहे डोलै,
सेवा-भजन पैदा कर ले ।
अव तो है सतजुग का पहरा,
आगे कलजुग आवेगा,
कलजुग मे सेवा कूण करे ।
कूण चरावे पायक नादिया,
कूण भाग घोटे सिव की,
गुरवत नै चेला चहिए ।

३. शक्ति-जन्म

चन्नण-चोकी ढाल महादेव,
मल-मल न्हाया अन्तरजामी ।
अगदेव सैं मैल मुलाया,
मैल छोड कलबूत वणाया,
इब चेला पैदा करता ।
पुत्र वणावे पुत्री वणज्या,
सेवा-भजन सगनी ठाडी ।
अट्ठोतर वर भसम करी सिव,
अट्ठोतर वर खडी हुई ।
सीस तोड सिव धरया गलै में
नाम धर्या सिव रुंडमाला ।
दे पडदा वतला री गोरजा,
सुणो नाथ अतरजामी ।
मोय परणा ले भोग लगाले,
भोग लगा सजोग लगा,
मैं महादेव सा वर पाऊ,
जीत जाऊ हर का द्वारा ।
दासी कह वतलाओ नाथ मैं,

जहा कालका में गाजू ।
सन्तर, दैंत, देवता खा गई,
ब्रह्मा खाया अर ब्रमचारी ।
सेज चढती राणी भख गई,
बालक भख गई मडल का ।
नार-बकरी सब जगल खा गई,
मत कालका में गाजू ।
धरके ध्यान में ऐसा सरापू,
आसन छोड चलो वन में ।
आकास-लोक, पत्ताल-लोक,
और मभलोक जलज्या तेरा ।
जमी पलट हो ज्यावै नाथ में,
कहा नाव पूछू थारा ।
काहे को सरापै बावली गोरजा,
कूण भजन में चूक पडी ।
अन्नयोग तनै कदे ना व्याहू,
और वरण व्याहूगा सगती ।
सात समदर पार हिमाचल,
छँहू चक्कवै है राजा ।
असी बरस का राजा हिमाचल,
साठ वरस की है राणी ।
प्रजा वसै सुख चैन क्रिस्न का,
भजन करै सारी दुनिया ।
वा घर जाकर जलम धरो थे,
जद व्यावैगा अतरजामी ।
बम भोलानाथ बम विस्वनाथ,
नाथन का नाथ अतरजामी ।
जद बोली गोरा सकती,
अब तो है सतजुग का पहरा,
आगै कलजुग आवैगा ।
कलजुग जोगी फिरै घणेरा,
बडा बडा जट्टाधारी ।
कालबेलिया और कनफडा,
बडा बडा लट्टाधारी ।
मू ड मु डावै भसम लगावै,
डोलैगा वण ब्रमचारी ।
लछ्रण बतावो मनै बरण बतावो,
धूणी की ठोड बतावो सिवजी ।
कहा चरै थारो पायक नादियो,
कहा बैठे अतरजामी ।
वचन देवो तो जाऊगी महादेव,
बिना वचन नही जाणै की ।
बार बार बहकाई नाथ मैं,
अब बहकण की नाय सिवजी ।
सकर भोलानाथ हरी,
अब के पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारबती खडी ।

६. शिव लच्चण

कहे महादेव सुणो गोरजा,
तुम सुणल्यो गोरा सगती ।
मैं कैलास-वासी सदा-निवासी,
अटल जोत धूणी जागै ।
बारा कोस धरती सैं ऊचा,
बजर-मिल्या पर है डेरा ।
दस नाग रहै दाई बगल में,

बस नाग रहै बाँई बगल में ।
सेसनाग सिर पर साजै ।
बाँई जटा में रिध-सिध का बासा
चहुटी में गंगा गाजै ।
सिर ऊपर गंगा गाज रही
तन बाघंबर खरी साज रही
सारै तन पर महरी महरी
सिव कै भसम बिराज रही ।
एक मसरु तनैं मोर बताबू
सो बी सुणल्यो है सगती ।
जटा बीच सिव कै चन्द्र घुम रही
पलक झुम बरली सारै ।
मुख म बिजली साल समांकै
भैंवर बोल सवाई सारै ।
बड़ी माय म धूणो बण ल्याऊं
जगमग जगमग नाड़ हुवै ।
नाग मरै या काल मरै कहो
परन्तु तो मलबत मरै ।
मरै न भूतां रो सिव की बम
मरै न भूत रो सिवजी ।
एक घड़ी में बालक बण ज्याऊं
झिगर झिगर रोवण लागूं ।
एक घड़ी में बारा बरस का
मोर मुकुट सिर पर साजै
सर बहै गंग सिव कै प्यारी ।
संकर भोलानाथ हरी
बम भोलानाथ बम विस्वनाथ
बालक कै भाव अंतरजामी ।

मेरा मखण सब फूल्या गोरजा
तेरा मखण सब कइ ल्याएए ।
मैं अवधूत बाड्सा जोगी
एकला घुमर करूं बन में ।
रंग-महल रहणा का चाहिए,
तू राजा की है पुतरी ।
तनैं दूध-भात रसोई चाहिए
मैं कहां सें ल्याऊं बन में ।
तनैं साल सखी पुरखत भी चाहिए,
म कहां सें ल्याऊं बन में ।
तनैं पाट-पटम्बर पहरण चाहिए,
म कहां सें ल्याऊं बन में ।
तनैं कण्ठ-पछेली पहरणा चाहिए,
मैं कहां सें ल्याऊं बन में ।
संकर भोलानाथ हरी
सब के पलक उघाड़ो दीनानाथ
सेवा में गोरां पारबती खड़ी ।
कहै गोरजा सुणो महादेव
आप सुणो अंतरजामी ।
रंग-महल रहणे का त्याग दिया
धूणी का ध्यान लगाऊंगी ।
दूध-भात रसोई त्याग दई
सिव भांग-धतूरा बाटूंगी
संकर कै भोग लगाऊंगी
बम-बम मुख सें गाऊंगी ।
पाट-पटम्बर पहरण त्याग दिया
मैं बाघम्बर बिछाऊंगी ।
कंठ-पछेली पहरणा त्याग दिया

नल सेली-सिंगी ल्याऊगी ।
च्यार चीज श्रोर च्यार श्राभरण,
ये मागै क्वारी कन्या ।
सकर भोलानाथ हरी,
श्रव के पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

७. स्वप्न

उणी सिल्या पर पैदा कीनी,
बजर सिल्या पर भसम करी ।
वावो हाथ वजर को मेल्यो,
भसम होई गोरा ढेरी ।
उड्या हस काया कुमलाई,
हेमाचल घर सुरत धरी ।
श्राधी रात पहर को तडको,
राणी में सुपनो श्रायो ।
श्रसी वरस का राजा हेमाचल,
साठ वरस की है राणी ।
सुपनें में वतला री गोरजा,
श्राप सुणो माता म्हारी,
में थारे श्रब जलम धरूँ ।
मा नें त्यार पिता नें त्यारूँ,
सब नगरी वैकुण्ठ तिरे ।
सुपनें में बतला री गोरजा,
सातू कुल तिरज्या थारा ।
राणी चँदरावल जद लेई उबासी
गरभ वास में जा ठहरी ।
सकर भोलानाथ हरी,
बम भोलानाथ ! बम विस्वनाथ !

नायन के नाथ श्रन्तरजामी ।
श्रव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
मेवा में गोरा पारवती खडी ।
राणीं चँदरावल कह राजा नैं,
श्राप सुणो जी राजा ग्यानी ।
गई गई कूख वावडी राजा,
महादेव की महर भई ।
मेरे सुपनें में कन्या जलमी,
मैं भोत ही लाड लडाया राजा,
मैं तो गोदी लेय खिलाई राजा,
मैं श्रांचल देय चुँघाई राजा,
मैं पलणैं माय भुलाई राजा ।
श्रव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा, पारवती खडी ।
जद वोल्या राजा ग्यानी,
थे श्राज सुणो भोली राणी ।
श्रसी वरस का राजा हेमाचल,
साठ वरस की हो राणी ।
चनण-काठ मुसाणा में गेर्‌या,
श्रव काहे की परसूत भई ।
झूठी राणी झूठ'ज बोली,
कोई श्रब बालक नाही ।
पाडोस्या का देख्या खेलता,
जिण पर जिवडो ढैल गयो ।
भूल्या भरम गया राणी,
श्रव काहे की परसूत भई ।
श्रव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

८ पारवती-जन्म

राणी मन में सोच करै
संकोच करै मोमी राणी ।
कोरै घड़ै में गंगाजल ल्यावै
माय महादेव शिव रोज नुहावै
पान चढ़ावै पुष्प चढ़ावै
दे परकम्मा शिव पूजै ।
आप पूजै सखियां नै पुजावै
शिव का ध्यान धरै राणी ।
भरम्याथ मे बची मोरया
राणी हो राजी मन में ।
एक मास की भई गरभ में
राणी हो राजी मन में ।
दोय मास की भई गरभ में
राणी हो राजी मन में ।
तीन मास की भई गरभ में
दासी-बांदी सब सुख बोलया ।
अस्ती राजा के पुत्र होयगा
बड़ो धरम धारी राजा ।
च्यार मास की भई गरभ में
धरम-करम सोचण लागा ।
पांच मास की भई गरभ में
सारै नगर बाजी थाली ।
छै मास की होई गरभ में
राजा हो राजी मन में ।
सात मास और आठ मास
और नोवें मास भई गोरां ।
महलों सांवरा दिन तीज्या को
तीज्यां नै कन्या जनमी ।
गोरां के घर पुत्र बधाई
कन्या बधाई राजा बांटै है ।
बुरज-बुरज पर घरया नगारा
सब सहेली मंगल गावै ।
चांदी का दान करया राजा
कंचन का दान करया राजा
गजहस्ती दान करया राजा
मर मोतियन दान करया राजा
गऊअन का दान करया राजा
बसतर का दान करया राजा ।
सब पे पलक उघाड़ी भोलानाथ
सेवा में गोरां पारवती खड़ी ।

९ जन्मापर

राणी मंगरावती कहै राजा सें
आप सुणो राजा म्हारी ।
घर को बिरमा बेगो बुलावो
दिन मास नखतर देख बता
या कुण घड़ी कन्या आई ।
राजा हेमाचल मेल्या हलकारा
घर को बिरमा लियो बुलाय ।
काशीजी को पढ़्यो बिरामण
दैस भरी पोथी ल्यायो ।
राजा नें जद देई आसका
बड़ा में सिंघासण दियो ।
बोल्यो बिरमा पढ़ी वेद

म्हारे कूण घडी कन्या जाई ।
च्यार वेद की करी सोधना,
जद वोल्यो विरमा ग्यानी ।
तू जाणे या कन्या जलमी,
सील सती ने ओतार लियो ।
दक्ष घरा या कन्या जलमी,
जद नाम धर्‌यो इणको सत्ती ।
अब तेरे घर में आ जलमी,
राजा नाव कढावो पारवती ।
जा दिन गोर को व्याह करोगा,
वडा वडा रिसी आवेगा ।
राम-लिछमण की जोडी आवे,
भरत-सतरगण दोनू भैया ।
कोड तेतीसूं देई-देवता,
अडसठ तीरथ से आवे ।
बावन भैरूं चोसठ जोगनी,
चक्कर बाण चलता आवे ।
च्यार-कूट की च्यारू भवानी,
हिंगलाज देवी आवे ।
अजगैवी वाजा आवे ओर,
वेमाता मगल गावे ।
इन्दर को इन्द्रासण आवे,
कल्पव्रक्ष दोनूं ही आवे ।
कामधेन थारे आवे गवतरी,
मनपुरणा दुरगा आवे ।
जगन्नाथ भडारी आवे ।
नोव्रू कुली दुरगा चड आवे,
धोलागड की वे राणी ।
धरती का सा आवें गलीचा,
अम्बर सा तम्बू आवे ।
मेघमालिया करे छिडकारी,
गग-जमन पाणी ल्यावे ।
सिव जोगी तो व्यावण आवे,
सिव नादेसुर सागे ल्यावे ।
मोतियन का होदा दिया भरा,
ब्र ह्मण ने हस्ती दिया चढा ।
मैं मानवी वे जो देवता,
कूण गरज म्हारे आवे ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा मे गोरा पारवती खडी ।

१०. बाल्यकाल

एक वरस की भई गोरजा,
तात-पिता लागे प्यारी ।
दोय वरस की भई गोरजा,
चाद-सुरज मानण लागी ।
तीन भरस की भई गोरजा,
तीनू लोक विच खबर पडी ।
च्यार वरस की भई गोरजा,
पट्टी ले गरूद्वारे जा,
भर च्यारूं वेद पढ्या कन्या ।
पाँच वरस की भई गोरजा,
पाचू देव मानण लागी ।
छै तो वरस की भई गोरजा,
छक दरसण पूजण लागी ।
सात भरस की भई गोरजा,

बाळ रैत का महादेव करै ।
कोरे घड़े गंगाजळ न्हावै
धान महादेव नित रोज जुहावै
पाप घटावै पुन्न बधावै
दे परकम्मा शिव धूवै ।
चढ़ कै महल पर धूमर घाली
कर परण-फिरवा सब झोल्या ।
महर करो अंतरजामी ।
कर महर करो अंतरजामी
जय भोळानाथ जय विश्वनाथ
साधन के नाथ अंतरजामी ।
सब ने परूण रचाड़ो भोळानाथ
देवा मे गोरां पारवती बड़ी ।

११ विवाह चर्चा

राणी मंगरामती कहूं राजा नै
थान सुणो जी राजा म्हारी ।
सात बरस की या कन्या म्हारै
यां नै बीर ढूंढा चवै ।
गली-गली मा कर्म उलटै
गिन-गिन धार घड़े राजा
म्हारा नै कम क नहीं राजा
म्हारी नै चाव लगे राजा ।
सात बरस की कोई कन्या ब्यावै
तो बिन जिलरो फल हो राजा
आठ बरस की कोई कन्या ब्याहै,
तो हरिद्वार में पुन कर्यो
नौ बरस की कोई कन्या ब्याहै
तो तरबेणी मैं पुन कर्यो ।
दस बरस की कोई कन्या ब्याहै,
तो काशी जी मे पुन कर्यो ।
ग्यारा बरस की कन्या ब्याहै
तो पाप'र पुन बरोबर हो ।
बारा बरस की कन्या ब्याहै
ज्यू कूवा गेर दिया कुवी में ।
तेरा बरस की कन्या ब्याहै,
ज्यू सिस्या काळ दी हो घारै घँ ।
बेटी का मात पिता नै या
तो भोळै ज्यू पछ ज्या राजा ।
मन का स्वारथ कर देखो
ज्यां में बाता महीं पड़ै राजा ।
सात बरस की या गंग गोरल,/
गोरां को टीको लिखायो ।
सब ने परूण रचाड़ो कैलासनाथ
देवा में गोरा पारवती बड़ी ।

१२ टीको

राजा हेमाचल भेज्या हलकारा
घर का बिरमा लिया बुलाय ।
कासीजी का पण्डो बिराजस
मैन-मती पोथी ल्यावो ।
राजा नै बर देई मालम
ब्रह्मा नें विचार दियो ।
सात बरस की हे गंग गोरजा
म्हारी गोरा को टीको लिखायो ।
मात सती बड़ी भला महूरत

भनै वार टीको माडा ।
पाच पदारथ पाच सुपारी,
पाच हल्द की गाठ देवो ।
सोनै रूपै का देवो नारियल,
साचै चू टा देवो टुकडो ।
टीकै की सामग्री लेकर,
ब्रह्मा की झोली में घाल दई ।
म्हारे जलमी या गग गोरजा,
थारी झोली मैं घाल दई ।
मन चाहे जठे करो सगाई,
इण गोरा थारी वेटी की ।
लेकै टीको चल्यो विरामण,
राणी चदरावल कहण लगी ।
जैसा म्हारा राजा हिमाचल,
जोडे का समधी देखो ।
जैसी हू मैं राणी चंदरावल,
म्हारे जोडे की समधण देखो ।
जैसी है म्हारी गग गोरजा,
इसै कँवर कन्या देवो ।
अब थे पलक उठाडो दीनानाथ,
सेवा मैं गोरा पारवती खडी ।।

१३. वर-परीक्षा

लेकर टीको चल्यो विरामग,
भला भला सुगन मनाया ब्रह्मा ।
विना तिलक को ब्राह्मण मिलियो,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
विन ससतर को छत्री मिलियो,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
तेल वेचतो मिल्यो तेलियो,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
क्वारी कन्या छीक्यो स्यामने,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
लिया भायडा सोनी मिलियो,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
काले बलदा गाडी मिल गई,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
ल्याली जरख डूँढिया मिलिया,
सुगन विगड गया ब्रह्मा का ।
वावैं ऊपर वोल्या दाहणा,
वोल्या वणी का वै मोर्या ।
राजा हेमाचल को भेज्यो पाडिय
सुगन सामतर नै नीं मान्यो ।
जद पूरव देखो पच्छम देखी,
हाडोती गुजरात मालवो,
पटणा पर घर घर डोल्यो ।
तरातमोल सा देख्या गढ़पती,
गोरा समान बर नही पायो ।
बर पावै बो घर नही पावै,
घर पावै तो बर नही पावै,
छैं महना फिरतै नै होग्या,
तन का कपडा फाट गया ।
पगा की जूती टूट गई,
काया सैं दुबला होय गया ।
झाल भर्यो जद कहै विरामण
हाय गोरजा तू न मरी ।

तिलक ध्यान सिव के करियो ।
बूढो देख सरम मत करियो,
तिलक-ध्यान सिव का धरियो,
तनैं देख कर पलक लगाज्या तो,
सेवा में ठाडा रहियो,
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

१५. कलि-वर्णन

तेरे बाप के कोई पुत्र नहीं,
एक कन्या तूं जाई गोरा ।
कुंवार-कोटडा चिरणा गोरजा,
कुंवारी बावल घर खेलो ।
अब तो है सतजुग का पहरा,
आगे कलजुग आवेगा ।
गिगन हीन पाणी हो ज्यागा,
अन्न हीन हो ज्या पिरथी ।
सत्तहीन परजा हो ज्यागी,
विरण समान न हो खेती ।
महाघोर कलयुग आ ज्यागा,
जद ब्राह्मण अजा विसावेगा ।
घर धोबी के गऊ बँधैगी,
खट दरसरण का मान घटावेगा ।
नीच जात घर तुलसी को विडलो,
कोई ना पूजरण जावेगा ।
भारण-भाभ्रणजी भुल-भुल झाकै,
साली तूत जिमावैगा ।
साला नै देख कमल ज्यूं विगसै,
भाया सें वेर बिसावेगा ।
छत्री अपरणी तजै तेग नै,
नागा ससतर बावेगा ।
ब्राह्मण अपरणा वेद त्याग दे,
गुरडा साच बतावेगा ।
माय न पूछै बाप न बेटी,
आप देख्या वर आप बरै ।
उरण जुगा में कन्या रहै कुंवारी,
तो रहज्या गोरा सगती ।
अब थे पलक उखाडो भोलानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

१६. कैलास-यात्रा

हार गलै को दियो मूंदडो,
विदा कर्या जावो बिरमा ।
गोरा के समझाए बिरामरण,
कैलासा की धररण धरी ।
टकम-टकम परवत चीर्या,
बिखमा नदी लाघ गयो ।
कैलासा में पूंग गयो जद,
लहर करी अन्तर जामी ।
नार, बघेरा, चीता, गैंडा।
सिंघरण की रल्या डोलै ।
नार बघेरा देख्या बिरामरण,
सूक रह्यो बिरमा ग्यानी ।
हाय गोरजा तूं न मरी,
तनै सेड-सीतला ले ना गई ।
गुडगावा की देवी ले ना गई,

हर-हर करके बैठ गयो ।
जद बोल्या अंतरजामी,
अब भाग, भाग विरमा ग्यानी ।
धरती को धन दियो विरमा,
जा पिरथी को राज दियो विरमा ।
जद नाट गयो विरमा ग्यानी,
के तू ँ देगो के मनै चाहे,
म्हारी गग गोर को टीको ले ।
दुर भाई का तनै कोई बहका दियो,
तन्नै कोई भरमाय दियो ।
मैं जोगी हजार बरस को,
मेरै व्याध मैं कूण पड़ै,
कोई देसापति राजा देखो ।
ऊँचा ऊँचा हो म्हैल मालिया,
गज-हस्ती द्वारै घूमै,
अर माया का टोटा नाही ।
जद लहर करी अंतरजामी,
जद महर करी भोला सिवजी ।
बम भोलानाथ बम विस्वनाथ,
नाथन के नाथ अंतरजामी ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा मैं गोरा पारवती खडी ।

१७. स्नान-भोजन

छै महना की भूख लगा दी,
जद भूखा ही भूख पुकारै विरमा ।
जद बोल्या विरमा ग्यानी,
कछू क भोजन द्यो सिवजी ।
जद बोल्या अंतरजामी,
तुम ध्यान धरो विरमा ग्यानी ।
ना कोई कोठी ना कोई कूवा,
ना कोई अरठ चलै सिव कै ।
गावै भूत बजावै ताली,
अठै अन्न विवहार नही ।
आक-धतूरा खावै महादेव,
दूब चरै नँदियो चेलो ।
तू ँ भी बन्न सुरड कर खाले,
खा ले भाग विरमा ग्यानी ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा मैं गोरा पारवती खडी ।
मैं मझलोक का कहिए मानवी,
ना खाऊ सिव की बूटी ।
मनै लाडू देवो जलेबी द्यो शिव
गरम-गरम सीरो देवो ।
नरम-नरम पूरी देवो सिव,
बनासपती चावल देवो ।
तुम सुणो रे नदिया चेला,
अब मोहन भोग तयार करो ।
दस्स सेर जद भाग गेरी सिव,
दस्स सेर मिरची गेरी ।
गेर धतूरा घोट लेई जद,
घटर घटर घोटा बाज्या ।
छाण-छूण कर त्यार होई,
तीन तूमडा भर लीन्या ।
एक तुमो सिवजी के चढा दियो,
दूजो नादिए पी लीन्यो ।

तीजो तुम्बो भर्‌यो भाव को
ब्रामण कै हाजर कीन्यो ।
ल्यो पीवो भंग मन लावे रंग
थारी काया अमर करी बिरमा ।
काट पको बिरमा स्वामी
मैं ना पीवूं सिव की बूटी ।
भांग पिया कर करदे बावळो
मैं ना पीवूं सिव की बूटी ।
चोटी काट कर भेजो मूंडो
मैं ना पीवूं सिव की बूटी ।
भेजै को बुझियारो ओकरो
एकम हुकार करै मन में ।
जद बोल्या अन्तरजामी
तू पलक लगा बिरमा ज्ञानी ।
जद बिरमण न पलक लगाई
जद महर करी अंतरजामी ।
सात कोटड्यां करी सुरत की
ताळी बिरमा कै हाथ दई ।
इण कोटड़ियां मैं खोलो बिरमण
कथु क ओळख मिल ज्यासी ।
पहली कोटड़ी खोली बिरमण
सिवद की रचना होने ।
दूजी कोटड़ी खोली बिरमण
अलख नाम पूरब होवै ।
तीजी कोटड़ी खोली बिरमण
ब्रांवां का जिस मंत्र पढ़ या ।
चोथी कोटड़ी खोली बिरमण
बिखिया का बाजू टेप रया

पांचवीं कोटड़ी खोली बिरमण
मु जियां की माळा हाथ री ।
छठी कोटड़ी खोली बिरमण
जद चाल्या मन का मूं घ ।
जद हुक उठैया बिस्ट बणा
जद सिरक उठैया मिस्ट गया
जद मिस्ट गया मन का मूं घ
जद सोवा-पीसा सान बता
जद बोल्या बिरमा स्वामी
म्हारी आप सुणो अन्तरजामी ।
थारी बाबा तैरी मात-रसोई
मनै घर की चीज बता सिवजी ।
जद बोल्या अन्तरजामी
तुम सुणो भाव बिरमा ज्ञानी ।
ना परवत में भाजी साई,
वाळ-बीळ्या कृष्ण करै ।
ना परवत में मारू माणवी
नाग-नाग नाम कृष्ण करै ।
सातवी कोटड़ी खोली बिरमण
कथु क मौजम मिलज्यावा ।
तीन वचन सिवजी का मान कर,
नाम एक को बिरमा स्वामी ।
ना के तालो तावो खोल्यो
देखत मगन भयो बिरमा ।
नरम-नरम नाडू चाया भर,
नरम-नरम सीरी पायो ।
उन-सीचड़ी भगत पूरमो
मथुरे की तू भी पाई ।

सोच करै विरमा ग्यानी अब,
न्हाए विना कैसे जीमू ।
महादेव कै पास गयो मनै,
लोटो जल देवो वावा ।
ना कोई कूवो ना कोई कोठी,
ना कोई अरठ चलै सिव कै ।
गगा नही कोई नदी नही भई,
यहा जल को नीसारण नही ।
गग गोर मनै लछरण वताया,
एक वर जटा हलावो सिवजी ।
वाई मैं रिघ-सिध का वासा,
दहणी मैं गगा गाजै ।
महादेव जद जटा हलाई,
सहस्सर धारा वहरण लगी,
जद मलमल न्हायो विरमा ग्यानी ।
जद धरनी का द्वादस वाच्या,
अर सूरज का जन पाठ करया ।
एक लोटो जल को भर लीन्यो,
अर तिरकाली सध्या साधी ।
एक लोटो जल को भर लीन्यो,
अर जीमरण की त्यारी लागी ।
चन्नरण-चोकी घाल दई,
सुवरण थाल था सजाय दिया ।
दुरगा सेती आय गई भाय,
आप ही घालै आप ही खाय ।
मथ धाप्यो जद भयो विरामरण,
जद दिछरणा नै याद करी ।
भात रसोई भली देई सिव,
दिछरणा मैं अव के देरी ।
जद वोल्या अन्तरजामी,
रुच-रुच जीमो विरमा ग्यानी ।
जीम-जूठ कर उठयो विरामरण,
महादेव कै पास गयो,
जद वोल्या अतरजामी ।
आगै राख मेरै पाछै राख है,
राखन का भडार भर्‌या ।
एक डूडो तो खड्‌यो नादियो,
यो चाहे तो यो ले ले ।
विछिया का वाजू ले ले,
चाहे काला नाग-भुजग ले ले ।
एक तुम्मो ले दोय तुम्मा ले,
चाहे वाघम्वर म्रिगछाला ले ।
सोनो-चादी लेवै विरामरण,
राख दान कदे नाय लियो ।
गऊदान तो लेवै विरामरण,
वैलदान कदे नाय लियो ।
वस्तरदान तो लेवै विरामरण,
सरपदान कदे नाय लियो ।
वम भोलानाथ वम विस्वनाथ,
नाथन का नाथ अतरजामी ।
अव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा मैं गोरा पारवती खडी ।

१८. तिलक

चन्नरण चोकी झाड विछा दी,
सिवजी मैं ऊपर विठा दिया ।

पोडै सैं धापै कोनी ।
जद आवागा म्हे प्राणनगरी,
सवा पहर सोनो बरसै ।
तैं ले लिए तेरो राजा ले लियो,
राजा छोड सारी परजा लियो,
पन की खास डाट विरमा ।
सवा मण सुवरण लियो विरामण,
चाल पडयो विरमा ग्यानी ।
थोग सली सैं चल्यो विरालण,
प्राण नगरी में जा पू च्यो ।
सुवरण थो सो घर में धर दियो,
जद राजा कै पास गयो ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

२०. वर-परिचय

राजा नै जद देई आसका,
ब्रह्मा नें सिंघास दियो ।
घणा दिना सैं आया विरामण,
कूण देस कन्या दीनी ।
नगरी को नाम बतावो विरमा,
राजा को नाम बतावो विरमा,
लडकै को नाम बतावो विरमा ।
जद बोल्यो विरमा ग्यानी,
थे सार सुणो राजा ग्यानी ।
ना देखी भैं वस्ती बसती,
ना देल्या राजा राणी ।
अर ना देख्या लडको-लडकी,
एक सीधो नाम सुण्यो जोगी ।
राजा हिमाचल क्रोध कर्यो अर,
हाथ पकड लिया ब्रह्मा का ।
राणी चद्रावल कहण लगी,
थे सुणो मेरी ब्रह्मा ग्यानी ।
विरामण नें मार्या वस चल्यो जा,
जोगी मार्या जुग-जुग हत्या ।
पीपल-पान टूटता राजा,
धरम क्षीण हो ज्या नगरी ।
कागद-कलम, दुवात मँगावो,
लगन लिख देवा जोगी नै ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरां पारवती खडी ।
राम-लिछमण की जोडी आवै,
भरत-सत्रुघन भैया आवै,
हणूमान पायक आवै,
इन्दर का इन्द्रासण आवै
कामधेन म्हारै आवै गवतरी,
कल्पव्रक्ष दोनूं आवै ।
जगन्नाथ भडारी आवै,
मालखेत कोठ्यारी आवै,
मनपुरणा दुरगा आवै ।
च्यारू कूट की च्यार भवानी,
हिंगलाज देवी आवै ।
बावन भैंरू चौंसठ जोगनी,
निरत करै सिव कै आगै,

दाणो मोत दलायो राखे,
सीतल जल भरवायो राखें,
तम्बू खूब तणवाया राखे,
मेवा-मिठाई उतराई राखे ।
ग्रावागा म्हे चरावागा म्हे,
घणो मान मारा थारो ।
जी चाहे जठै करो सगाई,
नही गरज म्हानें गोरा की ।
मन चाहे जठै करो मगाई,
व्यावेगा ग्रन्तरजामी ।
ग्रव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।
जद वोल्यो नदियो चेलो,
थे ग्राज सुणो विरमा ग्यानी ।
कुण से दिन तेलवान म्हारे,
कुण से दिन मेल-खीचडी,
कुण से दिन का हो फेरा ।
ग्राज का थारें तेलवान हो,
तडके को हो मेल-खीचडी,
परस्यू का फेरा पक्का ।
सोनै कोटक्को दे बिरमा नें,
विदा कर्‌यो ग्रन्तरजामी ।
योगसली सें चल्यो बिरामण,
प्राण-नगरी में जा पूच्यो ।
सोनै को टक्को घरा धर्‌यो वो,
फेर राजा के पास गयो ।
राजा ने जद देई ग्रासका,
विरमा ने सिघास दियो ।

वैठ गयो विरमा ग्यानी,
जद कहण लग्या राजा ग्यानी ।
के कही है वुडलै जोगी ?
सो साची-साच वतावो विरमा ।
घासन की वागर दिवावो राजा,
ग्रोर मेवा-मिठाई उतरावो राजा,
थे तम्बू घणा तणावो राजा,
थे दाणो खूब दलवावो राजा,
ग्रर सीतल जल भरवावो राजा ।
ग्रावैगा वे चरावैगा वे,
घणो मान मारे थारो ।
मनै कह्यो ग्रन्तरजामी,
गोरा व्यावेगा ग्रन्तरजामी ।
सकर भोलानाथ हरी,
ग्रव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

२२. निमंत्रण

पीला चावल कर्‌या हलद में,
नदिए के गल में वाध्या,
जा नूता से फेर्‌या चेला ।
सगम डोर सरकाई नाथ जद,
छिन-मातर में जा पूच्या ।
सुरग-कचेडी में जा पूच्या,
जहाँ वैठ्या गोविंद हरी ।
नादेसुर सें चावल लेकर,
सब सब नें नूता वाट दिया ।

डमक-डमक डमरू बाजे ।
गोघू कुन्डी नागां की माळे
माथे बासिग मिरा धरके ।
धरणी को सो माथे पसीनो
अम्बर को तम्बू माथे ।
चांद सूरज दो माथे दिपावी
बू सेती ताए माथे ।
शिव बोली ब्यावण माथे
शिव नादेसुर साथै स्यावै ।
मैणमालिया करै छिड़काव
पंच-जमन पाणी ल्यावै ।
सत भारी महणा की ल्यावे
सत भारी मासं की ल्याव
सत भारी मिसरी ल्यावै ।
इतला होवै तो ब्यावण आए,
नहीं धूणी पर बैठ्यो रहिए ।
अब के पलक उघाड़ो भोळानाथ
सेवा में गौरा पारवती खड़ी ।

२१ लगन-पत्रिका

लिख कर लगन बिरमा न दीन्यो
जोशी पां बाचो बिरमा ।
देख्योड़ी बगत देख्योड़ी मारग
बाच पड़ग्यो बिरमा स्यामी ।
धीमतली तें चाल्यो बिरमण
कैलासां में जा पूग्यो ।

जहां बैठ्या अन्तरयामी
जब कहण लाग्यो नंदियो बैलो ।
काम खायो रोटी पीयो पाणी
मात हिस्यो-हिस्यो फेर आयो ।
तेरी बात बता पूछला जोशी
तेरो नाम बता पूछला जोशी ।
काम जा खयो रोटी पी बयो पाणी
फेर बात पूछण आयो ।
जब बोल्यो बिरमा स्यामी
मैं कागद में बांचो लिखवी ।
मैं पढ्यो ना पढ्यो नांदियो
म्हारै मा धूणी रमोड़ी है ।
सेकर लगन धूणी में पेर्‌यो
चटक चटक धूणी बाजै ।
अब के पलक उघाड़ो भोळानाथ
सेवा में गौरां पारवती खड़ी ।
तेरै राजा तो गरब लिख्यो है,
तुम सुणो म्हारी बिरमा स्यामी
मेंहदी को के गरब लिख्यो
मेरै मेंहदी का तो बाग बगीचा ।
मिसरी को के गरब लिख्यो
मेरै मिसरी का तो पहाड़ बड़या ।
गाना को के गरब लिख्यो
मेरै बैमाता कातणवाली ।
गहणें को के गरब लिख्यो
मेरै बाजू-बहरखा है साथ ।
तेरै राजा में तू ना कहिए,
बाजां की बाजर लागै ।

दाणो भोत दलायो राखै,
सीतल जल भरवायो राखैं,
तम्बू खूब तणवाया राखै,
मेवा-मिठाई उतराई राखै ।
आवागा म्हे चरावागा म्हे,
घणो मान मारा थारो ।
जी चाहे जठै करो सगाई,
नही गरज म्हानैं गोरा की ।
मन चाहे जठै करो सगाई,
व्यावैगा अन्तरजामी ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।
जद बोल्यो नदियो चेलो,
थे आज सुणो बिरमा ग्यानी ।
कुण से दिन तेलवान म्हारैं,
कुण भै दिन मेल-खीचडी,
कुण सै दिन का हो फेरा ।
आज का थारैं तेलवान हो,
तडकै की हो मेल-खीचडी,
परस्यू का फेरा पक्का ।
सोनै कोटक्को दे बिरमा नैं,
विदा कर्‌यो अन्तरजामी ।
योगसली सैं चल्यो बिरामण,
प्राण-नगरी में जा पूच्यो ।
सोनै को टक्को घरा धर्‌यो वो,
फेर राजा कै पास गयो ।
राजा ने जद देई आसका,
बिरमा ने सिंघास दियो ।

बैठ गयो बिरमा ग्यानी,
जद कहण लग्या राजा ग्यानी ।
के कही है बुडलै जोगी ?
सो साची-साच बतावो बिरमा ।
घासन की वागर दिवावो राजा,
और मेवा-मिठाई उतरावो राजा,
थे तम्बू घणा तणावो राजा,
थे दाणो खूब दलवावो राजा,
अर सीतल जल भरवावो राजा ।
आवैगा वे चरावैगा वे,
घणो मान मारै थारो ।
मनै कह्यो अन्तरजामी,
गोरा व्यावैगा अन्तरजामी ।
सकर भोलानाथ हरी,
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

२२. निमंत्रण

पीला चावल कर्‌या हलद में,
नदिए कै गल में बाध्या,
जा नूता सै फेर्‌या चेला ।
वगम डोर सरकाई नाथ जद,
छिन-मातर में जा पूच्या ।
सुरग-कचेडी में जा पूच्या,
जहाँ बैठ्या गोविंद हरी ।
नादेसुर सैं चावल लेकर,
सब सब नैं नूता बाट दिया ।

सिणगार कर्‌या अन्तरजामी ।
सत्तर-साप को वागा पहर लियो,
जहरी को लगोट कस्यो ।
विसहर नाग गलै लिपटाया,
सेसनाग सिर पर गाजै ।
वाई जटा मे रिध-सिध का वासा,
दहणी मैं गगा याजै ।
तन वाघवर छवी छाज रही,
सिर ऊपर गगा गाज रही,
सारे तन पर गहरी गहरी,
सिवजी कै भसम विराज रही ।
देवा की देवी आती है,
सब गीत मनोहर गाती है,
ढोलक विच थाप लगाती है,
सकर का वनडा गाती है,
बम भोलानाथ, बम विस्वनाथ,
नायन का नाथ अन्तरजामी ।
बारा मण लिया भाग धतूरा,
वारा मण लिया लू ग-सुपारी,
नदिए पर पाखर डारी ।
सत्तर साप की झूल घलादी,
बाल-बाल वीछू पोया ।
आज धतूरा का सज्या सेवरा,
विछियन की लूमा लागी ।
कर्‌या नगारा डका मार्‌या,
साठ लाख गण आय गया ।
बावन भैरू चोसठ जोगनी,
निरत करै सिव कै आग,
डमक डमक डमरू बाजै ।
महादेव की होई निकासी,
सिव परवत कै नीचै आया ।
जद कहण लाग्या अन्तरजामी,
मेरी जान सराह नदिया चेला ।
किसो'क तो तू मज्यो वराती,
किसो'क दुलहो मैं लागू ।
चलता पहली कुत्ता लागज्या,
सब बालक भाठा मारै ।
जा रै भोला-ढाला नानिया,
मेरे व्याह मैं मूण-कसूण कर ।
नदिए कै सोटो मार दियो,
जद झोली-झडा गेर दिया,
सब भाग-धतूरा बखेर दिया ।
धायो तेरी भात-रसोई मै तो,
जा कैलासाँ दूब चरू ।
सकर भोलानाथ हरी,
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा मैं गोरा पारवती खडी ।
जद बोल्या अन्तरजामी,
मेरी सुण तो सही नदिया चेला ।
तू ही तो मेरो कुटम-कवीलो,
तन्नै रूस्या नाय सरै,
मेरै व्याह मे मालक न् चेला ।
साठ लाख गण अलग कर्‌या अर,
एकला चल्या अन्तरजामी ।

महादेव कै पास गयो ।
एक नागो नू कहिए महादेव,
नागा कै ब्याहण आयो ।
धायो वावा तेरी भात-रसोई,
मैं कैलासा जा दूव चरूँ ।
जद बोल्या अंतरजामी,
तुम सुणो रे नंदिया चेला ।
छैल वराती कुटता आया,
ये कहिए छोटी साली,
तेरा लाड-चाव भाई कूण करै ?
इतणा बोल सुण्या सखिया जद,
भाणो बूढलियो सब सैं बदग्यो ।
सत्तर सहेली बावडी वै,
सिव जोगी कै पास गई,
तेरी घूणी उठा बुडला जोगी,
तेरो आसण उठा बुडला जोगी ।
महादेव जी महर करी जद,
बन का भूँरा छोड दिया,
जद हरण-ततैया छोड दिया,
जद माच गई तोवा-धैया ।
नो-नो ताल सहेली कूदै,
गावै गीत वजावै ताली,
महादेव तेरी वलिहारी ।
एक दासी थारी गग गोरजा,
ओर दासी चाला सारी,
पण इण सैं गैल छुटा म्हारी ।
जिण सखी तो मुक्को मार्‌यो,
वानैं टूटी कर डारी सिवजी ।
जिण सखी तो लात चलाई,
वानैं लँगडी कर डारी सिवजी ।
जिण सखी तो सीग हलाया,
वानैं गजी कर डारी सिवजी ।
जिण सखी तो कमर हलाई,
वानैं कुवडी कर डारी सिवजी ।
जिण सखी तो माथ थूक दियो,
जद की वाझ चलै कुल मैं ।
घरा सैं आई पतली पतली,
वै सूज सूज वोरा होगी ।
रूप बिगाड' ज करी सहेली,
'वै गग-गोर कै महल गई ।
वम भोलानाथ, वम विस्वनाथ ।
नाथन के नाथ अंतरजामी ।
अव थे पलक उघाडो दीनानाथ
सेवा मैं गोरा पारवती खडी ।

२६. पार्वती-विनय

सव सखी करै तकरार,
गोर तेरो यो वर कुण ढूँढ्यो ।
घूणी वैठ्यो ध्यान लगावै,
भरण-भरण माखी भरणावै,
ज्यानैं देख्या सुग्या आवै,
है काना सैं गूगो ।
कै डूव्या तेरा वावल माई,
कै वामण-नाई रिमपत खाई,

नोवू कुली नागा की आई,
आयो वासिग मिण घरके ।
धरती को सो आयो गलीचो,
अम्वर को तम्वू आयो ।
चांद-सूरज दो आया चिरागी,
धू सेती तारा आया ।
मेघमालिया करे छिडकारी,
गग-जमन पाणी प्यावे ।
सत गाडी गहणा की आई,
सत गाडी मेंहदी की आई,
सत गाडी मिसरी आई ।
बारा बरस का बण्या महादेव,
उड-उड नजर लगे सिवकें,
बम भोलानाथ, बम विस्वनाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।
महला में पूंची सगती अर,
सब की पीडा दूर करी अर,
सब नें दूणो रूप दियो ।

२८. कोरथ

राजा हेमाचल चाल्या मिलण नें,
कोरथ की त्यारी लागी ।
बाजा-बाजे अम्बर गाजें,
बाग नोलखे जा पूंच्या,
देखत मगन भया राजा,
जो मेरे जलमी गग-गोरजा,
महादेव दरसण दीन्या,
मेरे सकल रिसी द्वारे आया,
मेरे घर वेठ्या गगा आई ।
ननणपुर की रोली चढाई,
महादेव के तिलक कर्‌यो,
अर बनासपती चावल टेया ।
सौने-रूपे का दिया नारियल,
साचे वूटा दी टुकडो ।
बम भोलानाथ, बम विस्वनाथ,
नाथन के नाथ अतरजामी ।
अब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा मे गोरा पारवती खडी ।

२६. शुक्र-शनि

बैठ गया राजा ग्यानी जद,
महादेवजी महर करी ।
बाई पांसली के दिया सरडका,
दो बालक पैदा कीन्या,
दो सुकर, सनीसर बणा दिया,
दोनू झिलर झिलर रोवण लाग्य
जद बोल्या राजा ग्यानी,
ये बालक कैसें रोवै ।
कछु तो ये रस्ते का मल्योडा,
कछु यानें भूख सताय रही ।
नाई के नें तुरत बुलायो,
कांधै ऊपर चढा दिया ।

जद लेर गई गोरा सगती,
थे कहो पिता कैसें ग्राया ।
जो तू जलमी गग गोरंजा,
भाया में नीची ग्राई,
सब नगरी में नीची ग्राई,
सब देवा में नीची ग्राई ।
जद बोली गोरा सगती,
पिता गरब कर्‌या सो हार्‌या है ।
गरब कर्‌यो चकवै-चकवी तो,
रैन-बिछोवो कर डार्‌यो ।
गरब कर्‌यो रतनागर सागर,
जल खारो हरी कर डार्‌यो ।
गरब कर्‌यो डूगर की चिरमी,
मुख कालो प्रभु कर डार्‌यो ।
गरब कर्‌यो थे राजा हेमाचल,
मान मार दियो सिव सकर ।
सूत की ग्राटी पहरो पिता थे,
महादेव के पास जावो ।
वे भर्‌या रिता दिया रीता भर दे,
महर करै सिव फेर भरं,
ऐसा है ग्रतरजामी ।
सूत की ग्राटी घाल हेमाचल,
सिव सकर के पास गया ।
जद बोल्या ग्रतरजामी,
कहो राजा कैसें ग्राए ।
थोडी जान हो ग्रोर बुलाद्यू,
बोली हो पाछी खिनवाद्यू,
कहो राजा कैसें ग्राए ।
नही जान सिव की बोली-थोडी,
नही जान उजली-मैली ।
मै सेर दो-एक की करी घूमरी,
ये दोनू बालक जीम गया ।
लहर करी ग्रतरजामी,
जद महर करी भोले सिवजी ।
झोली मै सैं रिद्धी दीनी,
जगन्नाथ भडारी नैं भेज्यो,
मालखेत कोठ्यारी नैं भेज्यो,
ग्रन्नपूरणा दुरगा दी ।
नदिये की टानी दीनी ग्रर,
पूजा का चावल दीन्या ।
जावो कोठ्यारा मै धूप करो,
कोठ्यारा के पडदा ताणो ।
ग्रब दो-दो चावल छिडक दिया,
कोठ्यारा के पडदा ताण्या ।
भर्‌या रिता दिया रीता भर दिया,
महर करी सिव फेर भर्‌या ।
सकर भोलानाथ हरी,
ग्रब थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

३०. तोरण

राणी चदरावल कहे राजा सैं,
ग्राप सुणो जी राजा ग्यानी
ग्रब ही वेगा भेजो हलकारा,
तोरण की त्यारी लागै ।

जद लैर गई गोरा सगती,
ये कहो पिता कैसें ग्राया ।
जो तू जलमी गग गोरंजा,
माया में नीची ग्राई,
सब नगरी में नीची ग्राई,
सब देवा में नीची ग्राई ।
जद बोली गोरा सगती,
पिता गरब कर्‌या सो हार्‌या है ।
गरब कर्‌यो चकवे-चकवी तो,
रैन बिछोवो कर डार्‌यो ।
गरब कर्‌यो रतनागर सागर,
जल खारो हरी कर डार्‌यो ।
गरब कर्‌यो डू गर की चिरमी,
मुख कालो प्रभु कर डार्‌यो ।
गरब कर्‌यो थे राजा हेमाचल,
मान मार दियो सिव सकर ।
सूत की ग्राटी पहरो पिता थे,
महादेव के पास जावो ।
वे भर्‌या रिता दिया रीता भर दे,
महर करे सिव फेर भरं,
ऐसा है ग्रतरजामी ।
सूत की ग्राटी घाल हेमाचल,
सिव सकर के पास गया ।
जद बोल्या ग्रतरजामी,
कहो राजा कैसें ग्राए ।
थोडी जान हो ग्रोर बुलाय,
खोली हो पाछी सिनवाय,
कहो राजा कैसें ग्राए ।

नही जान सिव की वोली-थोटी,
नही जान उजली-मैली ।
मै सेर दो-एक की करी घूमरी,
ये दोनू बालक जीम गया ।
लहर करी ग्रतरजामी,
जद महर करी भोले सिवजी ।
भोली मै सें रिद्धी दीनी,
जगन्नाथ भडारी नें भेज्यो,
मालखेत कोठ्यारी नें भेज्यो,
ग्रन्नपूरणा दुरगा दी ।
नदिये की टानी दीनी ग्रर,
पूजा का चावल दीन्या ।
जावो कोठ्यारा मे धूप करो,
कोठ्यारा के पडदा ताणो ।
ग्रव दो-दो चावल छिडक दिया,
कोठ्यारा के पडदा ताण्या ।
भर्‌या रिता दिया रीता भर दिया ।
महर करी सिव फेर भर्‌या ।
सकर भोलानाथ हरी,
ग्रव थे पलक उघाडो दीनानाथ,
सेवा में गोरा पारवती खडी ।

३०. तोरण

राणी चदरावल कहे राजा सें,
ग्राप सुणो जी राजा ग्यानी ।
ग्रब ही वेगा भेजो हलकारा,
तोरण की त्यारी लागै ।

दरसण कर जगदम्बा का,
सुर मुनिजन सीस निवाया है ।
महादेव से जुड्यो हथलेवो,
जद फेरा होवण लाग्या ।
पहलो फेरो लियो गोरजा,
राजा हेमाचल की पुतरी,
कन्यादान दियो राजा ।
दूजो फेरो लियो गोरजा,
राजा हेमाचल की पुतरी,
गऊ को दान दियो राजा ।
तीजो फेरो लियो गोरजा,
राजा हेमाचल की पुतरी,
चादी दान दियो राजा ।
चोथे में सिवजी आगे,
गज-हस्ती को दान दियो राजा ।
पचवे में सिवजी आगे,
जमी को दान दियो राजा ।
छट्टे में सिवजी आगे,
बस्तर को दान दियो राजा ।
सतवें में सिवजी आगे,
सातू दान दिया राजा ।
महादेव जी व्याही गोरजा,
राजा हेमाचल के द्वारे ।
बावें अङ्ग जद लेवण लाग्या,
नाट गई गोरा सगनी ।
बाई जटा में रिध-सिध को वासो,
थे वा नें तार धरो सिवजी ।
दहणी जटा मे गङ्गा गाजै,
थे वा नें तार धरो सिवजी ।
गलं बीच धारे सेसनाग,
थे वा नें तार धरो सिवजी ।
गऊ-मुखी में गङ्गा घाल दी,
जुग को धाम वणाय दियो ।
रिद्धी तो साहूकारा नें दीनी,
सिद्धी तो सिव आप रखी ।
सोने की डाडी रुपे का पलडा,
थडो महादेव को बाजे ।
सेसनाग नें भेज्यो पताला,
सारी वस्तू बाट दई ।
बावें अङ्ग जद आई गोरजा,
राजा हेमाचल की पुतरी ।
जद बोल्या बिरमा ग्यानी,
अब हथलेवो छुटवावो राजा ।
सवा लाख गउवा का दान जद,
हथलेवै विच करा दिया ।
जद बोल्या अन्तरजामी,
अब भूर लेवो बिरमा ग्यानी,
जद नाट गया सारा बिरमा ।
जाघ चीर जोगी-जगम काड्यो,
जगम जोगी नै दिछणा दी ।
छत्र-मुकट तो सिवजी दीन्या,
काना का कुण्डल पारवती ।
महादेव जी व्याही गोरजा,
जीमण की त्यारी लागी ।
सकर भोलानाथ हरी,

बम भोला नाथ, बम विश्वनाथ
नाथन का नाथ अन्तरयामी ।

३२ जीमणवार

राजा हेमाचल भेज्यो हलकारो
जान बुलाई संकर की ।
नादेसुर पर चढ्या महादेव
देई-देवता आया है ।
सब सुन्दर पट मंगया राजा
पैरां कै तळे बिछाया है ।
चवरण चोकी आन धरी
सुवरण का थाळ धराया है ।
कोई झारी लेकर आवे है,
कोई कचोरी ले कै आवे है ।
सखियां मन्डी गाय रही
सब हंस-हंस जीमन पाय रहा ।
जगनाथ को भात पतीठ
गङ्गा-जमना पाणी प्यावै ।
सखियां गाळी गाय रही छ
अलख निरंजन आप ही आप ।
महादेव ठेरे माई न बाप
तनै कांई लाज ले गाळी दां ।
जान जीम रही जद संकर की
विचार भया अचरज भारी ।
सवा सहस मण का थाळ जमावै
स्याम ही स्याम पुकार रहा ।

राजा हेमाचल हाथ जोड़ कर,
महादेव के पास गया ।
एक संकड़ी सो थो मोटो विचार भयो
थो तो ध्यान बिगाड़ैयी ।
जद बोल्या अन्तरयामी
परब सुणले अचरजधारी
वा थाळ सै सवाई ले ठेरी ।
सवा पचीस मण को करै टेट तो
यो भी मजूर लगा बैठा ।
पांच पीसां की बांटै भीरणी
या भी मजूर भया बैठा ।
महावीर की बंधी सवाई
नाम भया अचरज भारी ।
जान जीम कर डेरे पधारी
पहरावणी की त्यारी लागी
संकर भोलानाथ हूवो
सब ने भमक जगाडो भोलानाथ
लेगा थे गोरा पारवती लारी ।

३३ पहरावनी

राजा हेमाचल भेज्यो हलकारो
जान बुलाई संकर की ।
महादेव की पगलो भेज्यो
रतनारी मेंहदी माई ।
सत चारी माथा की माई,
सत चारी कहणां की माई

३ चरित्र, ४ गुण,
५ यश, ६ पुण्य कृत्य
क्रमरा (१११) कर्मणा
क्रिपाळ (१४३) कृपालु
क्रिमन, क्रिसन्न (२६, ४७, २१८, २५६, २६०, ३१५ ३४३) कृष्ण
क्रीत (२, १०३) कीर्ति, गुण

ख

खभ (१०६) वाहु दंड
खग (१५४) सूर्य, चन्द्र ग्रादि ग्रह
खट-भाख (२४३) षट् शास्त्र
खत्री (३३) क्षत्रिय
खपत्त (२६४) नाश
खपै (४६, २३२) खपादिये, नाश किये
खय-मान (२३२) मान का क्षय
खरदूख(३८) खर ग्रौर दूषण नामक दोनो दैत्य
खळ (५५, ८०, १८४) दुष्ट
खांण (७, १८८) खानि, योनि
खाण (१६८) भोजन
खाणिय चार(१५२)चार जीव योनियाँ
खाण-पाण (१५६) खाना ग्रौर पीना
खिण (२५५) क्षण
खिमावत (१८१) दयालु, क्षमावंत
खीर (१६३) क्षीर
खुधा (२१०) क्षुधा
खेचर (१७४) नभचर
खेत (५५) रणक्षेत्र
खेम (३३) भगाकर
खेंगाळ (८०) नाश करने वाला
खोण (२१४, ३०४) क्षोणी, पृथ्वी

ग

गगेव (४६, ५०, ८१) गागेय, भीष्मपितामह
गध्रव (२४६) गंधर्व
गर्णं (३२५) समझकर
गत (१४, ३०३) गति
गत्त (२६०) गति
गम (१६१) ज्ञान
गरभ्भ-जगत्त (१७३) १ जगत का कारण २ जगत-गर्भ
गळ (३३७) गला
गळकासिला (११४) गडकी नदी की शिला, सालिग्राम
गळी गयो (२७७) मिट गया
गळै (२७५) कठ में, कठ से
गवरि (१६१) गौरी
गहीर (२८६) गभीर
गाम-गेठ (१६६) १ प्रवास, २गांव-गोष्ठी, ३ ठाम-ठिकाना

गाढ (१२०) १ सत्य २ मना ३ दृढ़
गायत्रिय (२४८) गायत्री
गावंत (१८६) गाते हैं
गाय हों (१२३) मैं गाऊँ
गावै (१४६)-गाते हैं
गिनान (८३ ६१ १०८, १०६, १७३) ज्ञान
गिनान-बिसम (६१) ज्ञान का आधार रूप ज्ञान विमर्श
गिर (४४) गोवर्धन पहाड़
गिर उद्धार (१०४) गिरिधारी
गिरमेर (१२३) सुमेरु पर्वत
गिरा (१२५) १ भाषा २ वचन वाणी
गुणाख्या (४६) गुणों के
गुज्झ (१६७) गुह्य
गुणग्ग (१२३) गुण
गुणी (१८७) कवि
गुणेहु-अतीत (७६) गुणातीत
गू पट (२६५) १ अज्ञानावरण पशु वट
गूम्म (१६८ २८०) गुह्य बात
गैवार (३१०) गँवार
गो-करण प्रहरण (११४) पृथ्वी को धारण करने वाला और नाश करने वाला
गोकुलवाय (१८१) गोकुलवासी
गोचरण (१०१) गोचारण, ठिकाना करने की एक सफ़ेद और पोली मिट्टी
गोठ (१६६) १ गोष्ठी २ श्रेष्ठ गीत
गो भरतार (७४) पृथ्वीपति
गोरक्ख (६१) गोरखनाथ
गोलाकृत-चाक (१२८) बीज गणित की चाक के समान गोलाकृति
ग्यान (६५, १६९, ८१५ २२९, २३८, २७४ १२८) ज्ञान
ग्यान-गहीर (२८४) ज्ञान-गंभीर
ग्यान स्वेत (२८६) ज्ञान स्वरूप
ग्रबै (९८०) गाजता है
ग्रभ (४६) गर्भ
ग्रभवास (११०) जन्म-मरण, गर्भ वास
ग्रभवास पास (१८४) गर्भ वास की फाँसी
ग्रम्भ (१८२) १ गर्भ २ गर्व
ग्रह (८०) घर
ग्रहावण (५८) ज्ञान कराने के लिये
ग्रहि ग्रही (१० १६) ग्रहण करके
ग्रहो (११८) पकड़िये

घ

घट (२०६) शरीर
घड़े (१७७) बनाये
घण-घणा (१८५, १८८) असख्य
घण दाता (२१६) औढर दानी
घणनामी (११, १०१) असख्य नामों वाला
घनवांन (६६) मेघ वर्ण
घाट (१८५, १८८) १ रूप २ शरीर

च

चगो (१६८) अच्छा
चउद (२६) चौदह
चक्ख (२५२) १ दृष्टि २ चक्षु
चख (४७) चक्षु
चढवै (१८६) चढाती है
चढावहि (२८०) चढ़ाते हैं
चढियो (२१६) सवार हो गया हूँ
चत्र (५३) चार
चत्रभुज (१०६, २०६, २१५) चतुर्भुज
चत्रवेद (१६१) चारो वेद
चम्मर (१६०) चँवर
चरचवि लेप (११०) लेपन करके
चरच्चत (२५१) अर्चा करते हैं
चरीत (१७) चरित्र
चवत (३६) १ बरसाता हुआ, झराता हुआ २ कहता हुआ
चवता (२६२) कथन करने से
चवां (१६३, १६४) वर्णन करूँ
चवियै (३४७) गाइये, कहिये
चवै (१६२) वर्णन करे
चा (११७) के (विभक्ति)
चाढण (३२६) चढाने वाला
चारिय-वाणिय (१५२) चारों वेद
चित्या (२२७) चिता
चिताविय (१७) सचेत किया
चियारै (३०४) चतुर्विध, चारो
चीत (२०६, २२७) याद, चित्त मे
चीतार (३२४) सुमिरण कर
चुरासिय लक्ख (१६) चोरासी लाख जीव योनि
चोपड़ियो (१६८) घी से चुपडा हुआ
चौ (१६६) का (विभक्ति)

छ

छडता (६) छोड़ते समय
छडी (३३६, ३३७) छोड़कर

छतो (२७३) प्रगट
छत्राक (१४१) छत्रधारी
छीजै (२१०) मिटती है
छुटिस (२६२) छूट जाऊ गा
छुटो थयो (२६५) भसम हुआ
छुटावण (४१) छुड़ाने के लिए
छुडावण-बंध (१६) बंधन छुड़ाने वाला
छुड़ावण मंत (१७८) छुड़ाने वाला
छुड़ाविय (४६) छुड़ाया
छेर (७७) छेदन कर

ज

जंप (३१) युद्ध
जंत (१५७ ३०४) जंतु, जीव
जंम (१७२) जम
जकै (४०) है
जको (१२५) जो
जग-जाड (१२४) जगत की जड़ता
जग-जीत (४७) विश्वविजयी
जगत-जीवण (२१२) जग-जीवन
जग ताज (८६) जगत का मुकुट
जग-प्रम्य (२१४) जगत के पदार्थ
जग-मूर (२६५) जगत का मूल
जग वंदण (७२) जगद्वन्द्य
जच्छ (१२१) यक्ष
जटाधर (२४) शंकर
जड़्यो (२७४, २११) मिला प्राप्त हुआ
जद (१२४) जब
जदि जदी (३६, ४०) जब
जदून (२४७) यादव
जनक्क (१५) जनक राजा
जनमारो (२०१) जन्म, जीवन
जनम्म (१५७) जन्म
जनि (२७५) मत
जनि जाय (२१८) नहीं होवे
जनेता (११) जननी
जन्नक (२४७) जनक
जपां (१) जपता हूं
जपीजै (११५) जपिये
जपै (१४८, १५०) जपते हैं
जमजीत (१४४) यम को जीतने वाला
जमराणी (२०७) यमराज
जमदग्न (१२) यमदग्नि
जमदाढ़ (२१०) यमदूतों है
जमन्न (२४६) जैमिनी ऋषि
जमराणपुर (११७) यमलोक
जम्म (२२५) यम यातना
जम्म-प्रहार (१२६) यम यातना

जरा (२६६) जरायुज, पिंडज
जरामय (२२६) बुढापा और रोग
जराम्रत (२६७) जरा और मृत्यु
जळ्ताय (४९) सतप्त, जलते हुए
जळाँथळ (२६६) जल और स्थल
जळा (४७) ज्वाला
जळाय (२४) जला डाला
जळावरण (६२) जलाने वाला
जळै (३५२) जलता है
जव-तिल (२१४) यव और तिल, सूक्ष्मातिसूक्ष्म
जस (१५१) यश
जसा (२४७, २४९) जैसे
जहडो-तहडो (१६८) जैसा तैसा
जाण (१६४, १६७) पहचान, प्रगट
जाण (३५३) समझना चाहिये
जाणत (१३६, १३७, १३८, १३९, १४०) जानते हैं
जाणव (६७, १२०, १२२) जाना जानता है, जान सकता है, जानता हूँ
जाणीता (२७४) ज्ञानी, जाननेवाला
जाणै (३२३) जानता है
जाँण्यो (२८८) पहचाना
जाँमण (१२६) जन्म
जाँमण-पास (१२६) जन्म पाश, जन्म बंधन
जाँमण-मरण (१२४, २१०) जन्म और मृत्यु
जाँमण-म्रत (१२१) जन्म मरण
जाँमदगन्न (६३, २४४) परशुराम
जा (३१८) उस
जाग (३४, ३५) यज्ञ
जाग (२६४) जगह
जागविया (३०३) उत्पन्न किये
जागै (३२४) जग जाय
जाड (३५२) जडता, अज्ञानता
जात (१६, १८) जाति, प्रकार
जातिय-पातिह (२६४) १ जाति और पंक्ति, जाति-पाँति
जातिय देस (२२) १ जाती हुई २ रसातल को जा रही
जाया (३०४) उत्पन्न किया
जायो (१३५) उत्पन्न किया
जाळनळ (२१४) ज्वालानल, अग्निकण
जाळिय (४७) जला डाला
जिम्र (१०, ११५, १७९, १८०, १८६, १९५, २०३, २६४, २६५, ३१८, ३३४, ३४०) जिस, जिसने, जिसके

जिम री (३३४) जिस दिन
जिकण रो (२०३) जिसका
जिकाँह (१८०) जिनके
जिकाँ (२२६) जिन्हें
जिके (२३१, २३२) जो
जिको (१२५, २२६) जो
जियाँ (२७१) जहाँ
जिपै (३३) जीते
जिम्या (१११) जीम
जिम (२, २८१ २६६) जिस प्रकार
जिम (१७६, १८०) जिसके
जिवाड़िय (५) जिला दिया
जिहां (३४७) जिह्वा से
जिहि (२८२) जो
जीत (८७) जीतने वाला
जीत्यो (४७) जीत लिया
जीवण-धार (७२) प्राणों के जीवन
जीह (२२६ ३१६) जीभ
जीहाँ (११५, ३२० ३४२) जिह्वा से जिह्वा द्वारा
जीहा (३२८) जीभ
जुगी (२८३) मगन
जुगोजुग (४८) युग-युग
जुधठ्ठल (२४६) युधिष्ठिर
जुड़ै (३४२) जोड़ते है
जुवा (२०३) जुदा, अलग
जुवो (२१८) अलग
जुहार (१७३) प्रणाम
जुहारत (२४६) प्रणाम करते है
जुहारयो (३४६) १ प्रणाम किया, २ दर्शन किया ३ तीर्थयात्रा की
जे (३०४) जिस
जेण (३ १७५) जिसकी, जिसकी
जेता (३३१) जितने
जेथ (२७५) जहाँ
जेना (१३१) जिनके
जेम (२८० ३५०) जैसे
जेह (३१६ ३६) जिससे जो
जोग-निवास (६०) ध्यानावस्थित
जोगाणंद (१८२) योगानन्द
जोगिय (८३) योगियों के लिए
जोगेस (१४४, १४८) योगेश्वर
जोड़िय पाँण (१२७) हाथ जोड़ कर
जोड़ै (१०७) जोड़कर
जोत अखड़ (६०) अखंड ज्योति वाला
जोतां (२००) देखते देखते हुए
जोती (११०) ज्योति
जोमी (१८६) जन्म योनि
जोय (११६) १ सरीका २ देख
जोयो (२७७) देखा

जोवन (१८२) १ युवा २ यौवन
ज्यां (२१३, २२९) १ जिन
२ जिनको
ज्यु (१२५) जैसे

झ

झल्लमहार (६) धारण करने वाली

ट

टळै (१८०, २२४, २२५, ३५२)
टलता है
टाळण (७१) मिटाने वाला,
टालने वाला
टाळिजै (१२६) टालिये
टेरत (१४७) रटते हैं

ठ

ठगारा (२७६) ठगने वाला
ठयो (२६५) १ होगया २ प्राप्त हुआ
ठाय (२६८) स्थान
ठाविय ठोड (२६५) निश्चित स्थान
ठावो (२६५) प्रगट, प्रसिद्ध
ठावो हों कीध (२६८) १ मैंने
पा लिया, २ मैंने पता
लगा लिया

ड

डरघा (३६) डर गये
डाळ (१७१) शाखा
डाळांय-साखा (२७४) शाखा प्रशाखा
डेडरी (३१०) मेंढकी

ढ

ढकियण (१८८) ढकने वाला
ढोल (३२२) विलम्ब

त

तंत (१७२, १९९) तत्त्व
ततर (१२५) तत्र
तत्र (१७२) जादू-टोना
तउ (५, २६४, २९०, २९१) तो,
तोभी
तक्ख (२४०) १ तक्षक नाग
२ शेषनाग
तज्यौ (३६) छोड दिया
तठै (१५९) वहाँ
तणा,तणा (४, १४, २१, ३२, ५३,
८०, ९६, ११२, १२०,
१२५, २२३) के, का
(विभक्ति)
तणी (५०, ६७, २११, २२८,
३२९, ३५७) १ ने
२ की (विभक्ति)
तणी-परि (२७८) के समान
तणै (३४, ३५, ३४५) के (विभक्ति)

तणो (५, ४६, १७६, २२१ ३० ३४६) संबंधकारक विभक्ति (का) का एक रूप
तण, तणां, तणा तणी, तणै—इसके बहुवचन और नारी-जाति आदि रूप हैं।
तत (११५) तत्त्व
ततसार (३५५) सार तत्त्व
ततह (२५८) तब
तद (३२४ ३३०) तब
तदी (३८) तब
तनां (७७ २८१ २८६) तुझे
तम (३ ७) तुमने
तम्म (२२५, २३६) तुम्हारा
तर (३३७) तरु वृक्ष
तरण-तन (२५८) तनि
तरै (१७६, २२०) तिर जाते हैं।
तळ (१८६ ३३८) १ तले तल में २ पाताल
तर्म्मसत (२३१) १ तरसती है २ छटपटी करती है
तवण (६) स्तवन करने के लिये, कहने के लिये
तविजै (१२) कहे जाते हैं गाये जाते हैं
तवै (२२५) कहता है
तांणां-बांणां (२६३) ताने बाने में
ताड़ीका (३५) ताड़का राक्षसी
तात-अनंग (६७) प्रद्युम्न के पिता श्रीकृष्ण
ताप (१४६) अग्नि तप
तापी (११७) त्रिताप
ताय (२२६) उसे
तारण तिरण (१८८ १९३ २३३) उद्धार करने वाला
तारण-सघ भव (१०४) संसार रूपी समुद्र से तारने वाला
तारिया (३३८) तार दिये
ताव (२२७) ताप पीड़ा
तास (२५७) उन
तासू (२२०) उससे
ताहरि, ताहरी (१८६, ३०५) तेरी
ताहरो (११६, २८३) तेरा
तिम (१० ३४५) उस
तिम दी (३४५) उस दिन
तिकां, तिकांह (१७६, १८० २२६, २२७) उनके

तित (३०५) १ तव, २ वहाँ, तहाँ
तिथ (२७१) वहाँ
तिरलोक (३६) तीन लोक
तिलो भर (२२६) तिल भर भी, किंचित भी
तिहा (२२४) १ जिनको २ उनको
तिहारो (२७३) तुम्हारा
तिहि (१६, ४१, २५६) १ उस, २ उसे ३ जिनकी
तु (१६) तेरे
तुचा (११०) त्वचा, चमडी
तुझ मझ (२८०) तेरे में
तुमर, तुम्मर (१२३, १८६, १६०) १ देवता २ गधर्व, तुम्बर
तुव (२७३) तुझे
तुव पाही (१२५) तेरे पास
तुहा थिय (२८०) तेरे से
तुहारा (११, १५) तेरे
तुहारिय (१२१) तुम्हारी
तुहारोय (२६५) तुम्हारा
तुहाळ, तुहाळा, तुहाळो (४, ११, २५७, २६८, २७५, २६१) तेरा, तुम्हारा
तूझ (१३२) तेरे
तूझ तणाह (२५५) आपका, तेरा
तूझ थी (३००) तेरे से
तूझ विसै (११६, २८२) तेरे में
तेज (१७३) अग्नि
तेज अनार (११६) तेज पुंज
तेम (२७६) वैसा ही, उसी प्रकार
तै (१२१) तूने
तो (८, ११७, १२२, १८७, १८६, ३०८, ३३४) १ तेरे, तुम्हारे २ तुझे ३ तुम्हारी
तो (६,) फिर, तव, उस दशा में (एक अव्यय)
तो कना (३०८) तेरे से, तेरे पास
तोर (५१, १७६, १८०, १६२, २२७, २८६) तेरी, तुम्हारी
तोरा (५, १८५, १६१, २८७) तेरा, तेरे
तोराय (१२६, १८३) १ तेरे सम्मुख, २ तेरा
तोरिय गत्त (१२०) तेरी गति
तो विण (१११) तेरे बिना
त्या (२२७, २२८, २३०, २३१, २३२) उसको, उनको, उनके
त्यार (३६) तय्यार
त्युं (१२५) तैसे
त्रणे गुण (१२७) तीनों गुण— सत्त्व, रज, तम

त्रपत (१११) तृप्ति
त्रय-रूप (५१) त्रिमूर्ति (ब्रह्मा विष्णु और शिव)
त्रासै (११५) डर कर भाग जाते हैं।
त्रिकाल (१४२) १ तीनों काल— भूत, वर्तमान और भविष्य २ तीनों समय— प्रातः मध्याह्न और साय
त्रिकाल-नरेस (१४२) तीनों कालों का स्वामी
त्रिषा (२१०, २ २) १. तृषा २. तृष्णा
त्रिजग (१८१) १ त्रिविध जगत २ त्रैलोक्य— स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल
त्रिसो (२७८) तृषा
त्रिभंगिय (२७८) १ ध्याता, ध्यान और ध्येय त्रिपुटी २ श्रीकृष्ण ३ त्रिभंगी मुद्रा में खड़े बंसी बजाते हुए श्रीकृष्ण
त्रिभुवन्न (५८) तीन लोक— स्वर्ग पृथ्वी और पाताल
त्रिभुवण-चंद (८७) त्रिभुवन चंद
त्रिविस्टप (३१) स्वर्ग त्रिविष्टप
त्रीकम (१ ७ २११) त्रिविक्रम वामन
त्रीगुण-ईस (२१६) त्रिगुणात्मक सृष्टि का ईश्वर

थ

थंभ (९१) स्तंभ
थंभावण (९१) स्थिर रखने वाला
थइ (२०१) होकर
थकी (५२) से
थप्पी (२८) स्थापित किया
थलेसर (१७४) थलचर
थांन (२८) स्थान
थांभा बिण थंभण (१२४) आधार के बिना ठहराने वाला
थापण (१६०) १ स्थापना २ स्थापना करके
थाय (२७५, २८२) हो सकता, हो जाय
थारा (६ १११) तेरे, तेरा तुम्हारा
थारी (३०१) तुम्हारी, तेरी
थावर (२२९) स्थावर
थावै (३५२) हो जाती है
था सूं (१२१) तेरे से आपसे
थियै (११८) हो जाता है
थोय (२७६) हुए
थीर (१६०) स्थिर
थूल (१७४ २२९) स्थूल

द

दडवत (११०) साष्टाग प्रणाम
दइता-दम (१०६) दैत्यो का दमन करने वाला
दइता-दव (११०) दैत्यों का दमन करने वाला
दईत (२४, २७) दैत्य
दईत (४२) रावण
दईता (२१) दैत्यो से
दईव (३०१) देव
दढा (२२) १. दातों से २ दृढ़ता से
दतदेव (८८) दत्तात्रेय
दतात्रय (५६) दत्तात्रेय
दतार (१४४) दानी
दघ (४१, ४३) उदधि, समुद्र
दघी (२८३) उदधि
दघी घरण (१५३) ससार रूपी महा समुद्र
दमै (१०६) दमन करके
दमोदर (१२,) दामोदर, श्रीकृष्ण
दम्म (१५७) १ प्राण २ नाश
दम्मं (१६१) दमन करते हैं
दरवेस (२५२) साधु
दळे (४३) मार दिये
दळ्या (२७) नाश किया
दसण (१०४) दात
दसै दिगपाळ (१३६) दशो दिक्पाल, दस दिशाओ के रक्षक दस देवता
दहै (२१४) जला देता है
दांण (३०, १६७) दान
दाणव (१८, २०,३०) दानव
दाख (२६४) दिखाओ
दाखव (१७, २७१, २७५, २८३) देखकर, दिखाकर, देखू, दिखाते हैं।
दाखवै (२०८)१कहता है,२ कह कर, ३ कहता हुआ
दाखें (१२६, २००) कहता है
दाखो (३४२) कहा
दागियो (३३८) दाग दिया
दाब्यो (३०) दबाया
दारु (२६६) काष्ठ
दाळद्र (२२२) दारिद्रय
दिगमूढ (१७) दिङ्मूढ, जिसे दिग्भ्रम हो गया हो
दिखाड़िय (२६०) दिखा सकते हैं
दिखावउ (१२७) दिखाइये
दिठो (२६४, २८३) देख लिया
दिघा (१७६) दिया
दिघो (४२, २५४) दी

दिनेस (३७) सूर्य दिनेश
दिपम्म (३४) प्रकाशमय
दियण (२) देने वाली
दियौ (८) देकर
दियै (२५१) करते हैं देते हैं
दिल-कूटल (३४१) दिल के कुटिल
दिवाड़ (१०६) नमवा कर
दिस्ट (६२) दृष्टि
दी (१ , ३०४ ३२४ ३४५) दिन
दीठउ (२६८, २७७) देखा
दीठौ (२७१) देखा
दीठोय (१६२) दर्शन किये
दीध (२६ ११ ३ ५) दिया
दीधउ (२७) दिया
दीधउ (२५४) दिया
दीधा (३०१) दिया
दीधौ (२७ ३४५) दिया
दीरघ (८१) दीर्घ
दीह (११६) दिन
दुधाम्ब (१८५) जगद्धाम
दुई (१७५ ३ २) दो
दु करोड़ (४) दो करोड़
दुख भंजण (१४ १ ५) दुःखों का नाश करने वाला
दुज (१६, १६१) द्विज
दुज पंख (७६) पक्ष
दुजराम (८१) परशुराम
दुजराम (१३) परशुराम
दुर्दिव (२५१) दिनेश सूर्य
दुमाथ (२३४) रावण
दुसटां-दल (६४) दुष्टों का दलन करने वाला
दुस्ट-दोगाल (१८१) दुष्टों का नाश करने वाला
दूजा (३११) दूसरे
दूजौ (८) दूसरा
दूणागिर (२२१) द्रोणागिरि
देयण-मोख (८८) मोक्ष देने वाला
देयण देस (८५) नाश करने वाला
देवत (२६५) देवताओं में
देव (४३ ५४ १६८) देव
दोख (८८) १ दोष २ मिलाप
दौ (२) दीजिये
द्रवीड़ (५२) द्रवीड़
द्रजोण (४६) दुर्योधन
द्रह (१४६) ह्रद
द्रवै (२३०) द्रवता है

ध

धंख (१४२) ईर्ष्या
धखती (२१८) जलती हुई
धजब (७९) ध्यान
धणी (१३०,१३१) प्रभु

धनतर (१२, ५७) धन्वन्तरि
धनूस (३५) धनुष्य
धनेस (३७) कुबेर
धमळ (१८६) १ धवल, उज्वल
२ धवल रागिनी
धर (५,६,१५६,१८८,१८६)१ पृथ्वी
२ ससार
धरणीधर (६३, १०१, ३४२)
धरणीधर भगवान्
धरत (१८६) धरते हैं
धरिया (१४) धारण किया
धरी (४१) बनाई
धरेस (१४६) धरते हैं
धरै (३४, ४४, ४८, १४६, १६०,
१७६, २३५) धारण करते हैं
धरचा (३२७) धारण करने का
धरयो (३६) धारण किया
धात (१८५) धातु
धायै (३७) आये
धार (४१) रखकर
धारण-धीर (६२) धीरज धारण
करने वाला
धारै (१०१) धारण करके
धारै तो (१३०) यदि चाहे तो,
यदि धार ले तो
धियावत (१५१,२३५)ध्यान धरते हैं
धीणूं (२१३) धेनु
धीस (१४२) अधीश्वर
धुताइय (२७१) धूर्त्तता
धुप्प (१६६) धूप
धुर (३०७) आदि में
धुरू (२२१) ध्रुव
धूत (२७१) धूर्त्त
ध्यावै (१८५) ध्यान धरते हैं
ध्रम (५८, ३२५) धर्म
ध्रम्म (१७१, २३५) १ धर्म
२ धर्मराज

न

नकळक (२२१) निष्कलक
न को (३०६) नही, न तो
न कोय (१३१) कोई नही
नछत्री (६३) क्षत्रियो से रहित
नजीक (२८१) निकट
न पातरो (३४२) भूल मत
न पार पडोय (१३६) पार न पा
सके
न पीडै (३३०) कष्ट नहीं पहुँचाये,
नाश नही करे
न बूझव (२६०) समझ में नहीं
आता

न मूसब (२११) मत भुलाइये
नमां (१) नमन करता हूँ
न मेसु ह (२४७) नहीं छोड़
नमै (१०६) नमस्कार करके
नयणां (११२) नैनों से
नर (६६) अर्जुन
नर तन (२५०) मनुष्य शरीर
नर-नारण (६०) नर-नारायण
नर लोय (१५६) १ नर लोक
२ स्त्री-पुरुष
नर-संवरण-श्रीकृष्णहार(६६) श्रीकृष्ण
नरसिंघ (८२) नृसिंह अवतार
न लाधै (११२) नहीं मिल सकता
नव (२२० २८८) नहीं
नव मुक्ये (१४६) मत छोड़िये
नवै (११९) नौ ही
नवी निध (२११) नौ निधि
न व्यापै (११६) नहीं होता
नसंक (१४१) भय रहित
न संभरै (११४) स्मरण न कर सके
नह (१२०, ११७) नहीं
नह पाईयो (१४६) नहीं पाया
नह बंधयै (११०) नहीं बंधे
नहीं को तोसी (११८) कोई तुलना
करने वाला नहीं है
नहीं सहवाय (२०५) सहा नहीं जाता
नां (१८६, २०८) का, की (कर्म
और सम्प्रदान की विभक्ति)
नांख परो (२७६) दूर कर दीजिये
नांमै (२०८) नाम से, नाम का जप
करने से
नांय (११९) नहीं
नांमां (२११) नामों में
नाची (१०६) नाच करके
नृत्य करके
नाथ अनाथांह(२१६)अनाथों के नाथ
नाथ (८१२) नाथ सहि
नामै (१८४) नमन करते हैं
नारसिंघ (११) नृसिंह
नारीयण (१८८) नारायण
नास (१६६) नासिका
नासही (२०६) १ नाश हो जाता है,
२ नाश हो जायगा
नासारंभ (१ २) नासा छिद्र
नासै (२०६) नाश हो जाता है
नाह (११०) १ पुरुष २ नाथ
निकंद (१४) नाश करके
निकंदन (६४) संहार करने वाला
निकलंक (८३, २३१) १ कल्कि
अवतार २ निष्कलंक
निकलंकिय (६६) कल्कि अवतार
निकाम (१४२) काम रहित

निकूल (२४६) नकुल
निखात (८४, ८६) खान, खानि
निगम (६, ७, १३५, १६१, २११) १ वेद, २. परमात्मा
निगम्म (५५, ६५, ७८, ८६, १३६, २८६) वेद
निगेम (७४) स्रोत, निर्गम
निद्ध (२०१) निधि
निपाप (१००, १०१, १०२, ११०) निष्पाप
निपाय (२५५) उत्पन्न करते हैं
निपाविय (१५६, १७५) उत्पन्न किया
निमूळ (१४५) मूल रहित
निमेख (३४२) निमिष
नियारो (२३०) अलग
निरकार (६४) निराकार
निरखा (२७१) देखू
निरगात (२४२) निराकार
निरग्गुण (६४) निर्गुण
निरणाह (२०३) खाये पिये विना, निरान्न
निरधार (६१, ६४, ३४६) निश्चय, अन्य आधार से रहित, निराधार
निरभ्भय (८०) निर्भय
निरमै (१२५) निर्माण कर
निरम्मळ (७४) निर्मल
निरळग (६७) कारण रहित
निरलेप (१८४) निस्पृह
निरसक (८५) नि शक
निराळ (१४२) निराले
निरोहर (२०) समुद्र
निवाण-जग (१२५) ससार समुद्र
निवारण (५७) निवारण करनेवाला
निसक (३५) निर्भय
निस-प्रहर (१८६) अहर्निश
निस-अहो (१६०) अहर्निश
निसाख (१४५) शाखा रहित
निसाळगै (३५०) नहीं जला सकती
नीगमण (१२४) निगम, वेद
नीभावण (१२४) नाश करने वाला
नीरावण (१२४) उत्पन्न करने वाला
नीर (३२६) प्रतिष्ठा
नील (१४०) श्याम
नूर (८५, २६५) प्रकाश, तेज, अस्तित्व
नेत (७) नेति, अत नही
नेस (२७५) स्थान
नैडो (२३०) समीप
नकासुर (५०) नरकासुर
नग्ग (२५७) नरक
न्हायो (३४६) स्नान किया

प

पंच प्रन्न (७) पांच रंग
पंचाळिय (५१) द्रौपदी की
पखाळ (३८) धो करके
पखाळत (२३६) प्रक्षालन करते है
परवाळां (१२३) प्रक्षालन कर
परवाळ (१६ , प्रक्षालन करती है।
परवे (२६६) बिना
पग (२३७ २३८, २३६, २४०
 २४१, २४२ २४३, २४४
 २४१ २४७, २४६, २५०
 २५१ २५२ २५३ २५६)
 पांव, चरण
पगरस्स (२३६) चरणामृत
पगरेण (२४६) चरण रज
पग-वास (२५७) चरण-शरण
पगां (५८ २३४ २४८) १ पैरों से
 २ चरण-युगल
पग्म (२३१ २५७) पांव
पटंतर (३०७) १ रहस्य २ भेद
पटोळ (३११) रेशमी वस्त्र में
पड़वो (२६८, २७१) पर्दा
पड़दोय (२७१) पर्दा
पड्यो (४१, ४४) पड़ा
पढ़ै (१४८) पढ़ता है
पतंग (२६६) सूर्य
पत-मत (३३६) १ पति में बुद्धि
 २ पति भक्ति
पताक (२३४) ध्वजा पताका
पतीत उधारण (८२) पतितोद्धारक
पत्त (५०) १ प्रतिष्ठा २ प्रतिज्ञा
पद्मम्न (४१ ७०, २३४) १ गणित में सोलहवें स्थान की संख्या १०० नील, २ पद्म नामक चिह्न जो भाग्यशाली के पांव में होता है, ३ पद्म कमल
पनंगह (२५८) पन्नग, सर्प
पन्न (२७४) पत्र
पमाड़ (११६) प्राप्त कराइये
पमै (३६) १ प्राप्त किया २ प्राप्त करवाया
पयपत (१२५, १२०) कहते हैं पाते है
पयर्पे (२८२) कहता है
पयाळ (२२) पाताल
परट्टिया (३००) बनाया, रचना कर
परपंच (३ ५) १ प्रपंच, २ विस्तार
परब्म (२६३) प्रभु
परब्म (२७२) प्रभु
परम्म (१६, ७ ८२, ८६) परम
परम्म-निवास(२ २३) मोक्ष स्वरूप

परम्म-प्रवीत (२४८) परम पवित्र

परहर (३३७, ३३८,३३९) छोडकर

परा (४) निकटस्थ निश्चय-सूचक 'अरो' अथवा 'उरो' अव्ययो के विरुद्ध प्रयोग में आने वाला दूरस्थ निश्चय-सूचक 'परो' अव्यय। 'परी' इसका स्त्रीलिंग और 'परा' इसका बहुवचन, रूप है। उदा०— उरो आ =आजा। परो जा=चला जा।

परि (२२२) समान

परिधान (५१) वस्त्र

परीखत (४९) परीक्षित

पवन्न (२७२) पवन

पसाय (३) प्रसाद, कृपा

पह (६५) प्रभु

पहिलोय (१५५) १ पहला २ आदि में

पाण (१२७, २४३, २६६) हाथ

पाण (१५४) १ भी, भाँति-भाँति

पाणिय (२७२) पानी

पाणिया (२१०) पानी से

पामत (१२२, १३८) पाता है

पामीजै (२०१) प्राप्त होती है, प्राप्त की जा सकती है

पामै (१३५, ३६१) पाता है, पा सकता है

पाईयो (३४९) पाया, प्राप्त किया।

पाखै (३४७) विना, रहित

पाज (४१, ७९) १ पुल २ किनारा

पाटली (५) पाटी, तख्ती

पाथर (२२०) पत्थर

पाथर चे (३०७) पत्थर के

पाप करतो (११७) पाप करने वाला

पाय (३, ४१) पैर

पार (१२२)अंत, पार

पारिजात (१२३) कल्पवृक्ष

पाळ (१७१) पाल, वृक्षों आदि की रक्षा का साधन

पालै (२१४) रोकता है

पाळ्या (२८) पालन किया

पावत (१३६) पाते हैं

पाहि (२७४) पास

पाही (१९२) पाते हैं

पिंड (३०, १६४, ३४०) देह, शरीर

पियारो (३५१) प्यारा

पियाळ (१५०, २४१, २७२)पाताल

पियाळ-पुरेस (१५०) पाताल निवासी

पीठ-धरण (५) धरणी की पीठ, पृथ्वी तल

पोइवा (३०२) पुष्प देने के लिए
पीवां (३४७) पीने से
पीय (५७६) प्रीतम
पुआवत (८७६) पूजा करता रहा है
पुछे (२३५) पूछती है
पुर्वेमां (७७२) पूरें
पुणत (१२५) कहते हुए
पुण (१६०) कथन कर
पुर्णा (२) कहें वर्णन कर
पुणै (३२, ४८, ११०) कहता है
पुन (६१) और, पुनि
पुम (१६५) पुष्प
पुरंदर (८१, १३८) इन्द्र
पुरख (१७०) पुरुष
पुरख पुराण (२६२) पुराण पुरुष
पुरख रतन (७३) पुरुष-रत्न
पुरे (५१) पूर्ति की
पुहप (१ ३ १८६, २६६) पुष्प
पूगे (१४६) पहुँचेगी
पूगो (३०६) पहुँचा वपस्थ हुआ
पूछां (३१०) पूछता है
पूर (६१) पूर्ण करने वाला
पूरख प्रीरा (२८४) प्राण पुरुष
पूरवै ३१६) पूर्ण करता है
पख (१ २) देखकर
पेखण (११६) देखने के लिये

पेखां (२७४ २७८) देखूं
पेस (३१ ३३७) १ देखी २ सर्वस्व
पैठ (८२) प्रवेश करके
पैठो (१५६) प्रवेश किया
पो (३६१) प्रभात
पोकार (२१२) पुकार
पोम (१०७) पिरोवे
पोहकर नम (१०६) पुष्कर नभ
प्रकर्त (२६४) प्रकृति, माया
प्रकर्त रावान (२६७) मायापति
प्रकासण (२६३) प्रकाश करने वाला
प्रकासत (१६१) कहते है
प्रकासे (१०३) वाकर.
प्रकाशित कर
प्रगट्टत (२६४) प्रगट हो जाता है
प्रगट्टिम (२८४) प्रगट होगया
प्रजाळ्ह (१७८) मिटाइये जलाये
प्रत (२८) हरेक
प्रतख (८६ २७६ २६५) प्रत्यक्ष
प्रतखेत (७) १ क्षेत्र के प्रति
२ प्रति क्षेत्र
प्रतपाल (६४ ६५) प्रतिपालन
करने वाला
प्रथमिय (३३, २६४)पृथ्वी
प्रथी (१७३) पृथ्वी
प्रथु, मिथू (१२, ८६) पृथु, विष्णु

प्रद्मन (८४) प्रद्युम्न
प्रद्मन-तात (८४) श्रीकृष्ण
प्रपोटाय (२७८) बुदबुदे
प्रभ (२६४) प्रभु
प्रम्भ (१८२, २६३, २६४) प्रभु
प्रम (६४, ७४) परम
प्रमेस (१९६) परमेश्वर
प्रमेसर (१६) परमेश्वर
प्रमोदघण (२३३) आनन्दघन
प्रम्म (५६, २२४, २३५, २७८
२८७) परम
प्रलोक (१५६) परलोक
प्रवीत (३८) पवित्र
प्रसण (३३०) शत्रु
प्रसनीग्रभ (१२) पृश्निगर्भ, श्रीकृष्ण
प्रसन्नियग्रम्भ (८३) पृश्निगर्भ
प्राणियां (३६०) प्राणी
प्राक्रत (१९२) साधारण
प्राक्रम (१८४) पराक्रम
प्राग (१६१, ३४६) प्रयाग
प्राण-पुरक्ख (१७३) प्राण-पुरुष
प्रित्थु (६१) पृथु राजा

फ

फर मती (३१७) भटक मत
फरसूधर (२३३) परशुराम
फरस्सउ (३२) परशु
फेरा (४४) वार, मतवा

ब

बग (६८) १ ढग २ रहस्य
बध (४३) बधन
बधाड (४०) बाधा
बंध्यो (४३) बाधा
बगस (१२८) क्षमा कीजिये
बभीखण (६३, २००) विभीषण
बळता (३२२) जलते हुए
बळवट (३६) शक्तिशाली
बळवुद्ध (२०) महाबली
बळि (३३) बलवान
बळि उद्धार (११२) बलि का उद्धार करने वाला
बळि-बंधण (१४) १ बलि को बांधने वाला २ बल बंधाने वाला
बळोभद्र (७७) बलभद्र, बलराम
बहुनामिय (७१) बहु नाम वाला
बहो (६६, १६०) बहुत
बहोडिय (४२) वापस ले आये, लौटा लाये
बहोनामी (१३४) बहुनामी
बाधण (५८) बांधने के लिये
बाध्यो (३०) बांधा

बाम (२०) बाहुपाश
बाधा (११२) बीड़ दिया बाँध दिया
बापजी (१२८) पिताजी
बाळ (१६४) बालक
बाळापण (२०५) बचपन
बाळा (२) १ बालस्वरूप
२ प्रधान स्वरूप ३ देवी
बावम (४८) बामनावतार
बाहुल-जुद्ध (२०) बाहु युद्ध
बिड़द (१८४) बिरद
बियौ, बिया (२१७, ११८) दूसरा, अतिरिक्त
बिहुंसू (२०) दोनों से
बिहुं (२) दोनों
बिहुं-राह (२४८) १ निवृत्ति और प्रवृत्तिमार्ग २ भक्ति और ज्ञान ३ मार्ग और अमार्ग ४ हिंदु और मुसलमान
बीजमंत्र (२) १ माकमी २ निवृत्ति
बुंद (२१२) बिन्दु सृष्टि
बुझन्न (१३४) १ बतलाइये, २ पूछता है
बुझौ (२११) पूछता है
बुझै (१८) जान सकते समझ सकते
बुध (३२६) बुद्धि
बुध-बाहरा (२०४) बुद्धि हीन
बुधी (२४०) १ बुद्धि,२ सरस्वती
बूझत (१३८) जानते हैं
बूडला (२०४) डूबेंगे
बे (१०७, ११४, ३३८) १ दो
२ दोनों
बेहु (२४०) दोनों
बैसीय (२८०) बैठकर
बोध (६५) बुद्धावतार
बोहु (१८, ३२८) १ फिर भी,तो भी
२ अनेक, बहुत
बोहु बार (४४) बहुत बार
ब्रवै (३६) कहते हैं
ब्रहमंड (१० २८८) ब्रह्माण्ड
ब्रहम्म (१२ ४३ २६१) ब्रह्मा
ब्रहमाणी (२) १ सरस्वती, ब्रह्माणी
२ दुर्गा
ब्रहम्मगिनान (२१२) ब्रह्मज्ञान
ब्रहम्मसपूत (२११) ब्रह्मा के पुत्र, सनकादिक
ब्रहम्माय (११, १५, १७०, १८३) ब्रह्मा

भ

भंग्यो (३५) तोड़ा
भंजन-भीर (१२) दुखों का नाश करने वाला

भजै (२५५) नाश करके
भक्त-परायण (१०२) भक्तों को आश्रय देने वाला, विष्णु भगवान
भक्ख (२७) भक्ष्य
भगताकज (१८४) भक्तो के लिए
भगता वस (७४) भक्ताधीन
भगत्त (१७८, २६१) भक्त
भगै (२२३) भग जाते हैं
भजणा (३२४) भजने मे, भजतेहुए
भजे (१८) भाग गये
भणंता (२०१, २३०) बोलने से, जपने से
भणीं (१२०) गाकर, कहकर
भणाय (३१८) उच्चारण करवाकर, बोलने को प्रेरित कर
भणि (२४१) निमित्त, लिये, की
भणी (३४४) को, प्रति (विभक्ति)
भणे (१०४, १२४, १७६, २६६) १ वर्णन करके, २ कहता है. कथन करता है
भणे भण (२१८, ३१६) बारबार बोल कर, बारम्बार उच्चारण कर
भमतो (२५८) भटकते हुए
भयो (३१) हुआ

भर बाथा (३२२) बाहुपाश में आये जितना, बाथ भर करके
भरम्म (२८६) भ्रम
भल (१६७) भला
भळावे (३०५) सुपुर्द करता है
भव (६५) ससार
भव-तारण (६२) ससार रूपी समुद्र से पार लगाने वाला
भसम्म (८७) १ भस्म, २ नाश
भाग्योह (२५४) तोडा
भाज घडे (१८३) नाश करके पुन बनाने वाला
भाजण (८१, ८४, १७८, २५५) मिटाने वाला, काटने वाला, तोडने वाला २ नाश करने के लिये
भाजण-घडण (१८५) नाश और रचना करने वाला
भाज परा (४) १ मिटाकर २ दूर कर दीजिये
भाण (१६२, २५३) भानु, सूर्य
भाख (२६४) कहा
भाजै (३००) भागता है, दूर होता है
भार-अड्ढार (१८६) अठारह भार वनस्पति

मारकुमाव (२४४) भावदाव मुनि
भास (१६५) १ दृश्य २ प्रत्यक्ष
भिखंग (८१, २६६) भिखारी
भिखारा
भिदै (४८) नाश किया
भिस (११५) १ भयम २ महस्म
भीय (८१) भय
भुआल (२६६) भूपति
भुगोल (३१) पृथ्वी संसार
भुआल-विसाल (१४३) विशाल
भुजाओं वाला
भुवेस (३५) महादेव भुवेश
भुलोक (१५६) भू लोक, भूलोक
भुवण (१५६) भुवन चौदह भुवन
भुवण-चउद्द (२५३) चौदह भुवन
भुवण तये (१८३) तीनों भुवन
भू वा ही (११८) पृथ्वी के लिए भी
बल मनुष्यों के लिये भी
भेस (३१) रूप
भेव (११८, २४५) भेद, रूप
भोमवण (१९४) भोगने वाला
भोम (२७२) पृथ्वी
भौ भंजण (१२०) भय भंजन
भमें (१ ५) १ भ्रम कर
२ भ्रमण कर

भसै नहि (२ ८) डरता नहीं
भागता नहीं
भमाय (५७) भ्रमण करवा कर
भम्म (४, २२१, २२५, २७७) भ्रम

म

मँझार (४६) में
मंडाण (५४) रचना
मँडियो (११६) रचना की
मंदर (३२२) घर
मँदराचल (५७) मेरु पर्वत
म (१५४, २५६ २७१ २७३
३११, ३१३ ३२३ ३४०)
अभाव अस्वीकृति या निषेध
सूचित करने वाला एक शब्द।
नहीं, मत
मकराकृत कुंडल (६१) मकर की
आकृति वाला कुंडल
मगन (२४४) मग्न
मच्छ (११) मत्स्यावतार
म छंडै (३१३) मत छोड़ना
मछ (८९, मत्स्यावतार
मज्झ (२२) मध्य में
मझ (१७६) में
म ठेम-म ठेम (२५५) दूर मत कर
मणी (३५८) मणी मंद

मथ्थो (२५, २६) मथन किया
मदन्न (६८) कामदेव
मद्द (७२, ७३) मद, नशा
मध (२८६) मध्य
मधु (२६८) मधुर
मधु कीट (२०) मधु और कैटभ
मधु कीटभ (८७) मधु कैटभ
मधु-मारण (१०३) मधु दैत्य को मारने वाला
मनछा (११५) वासना, इच्छा
मनसा (६१) इच्छा, वासना
मनाविय (४३) मनाया
मनिछा (१७४) मन की इच्छा
मन्न (१८०) मन
मन्न (२१०) मान ले, समझ ले
मम्मत (२२४) ममता
मयक (८५) चन्द्र
मरजाद (७८) मर्यादा
मरद्द (२७०) पौरुष
मरद्दण (७३) मदन करने वाला
मरद्द-महेळिय (२७०) नर नारियो मे
म राख (२७१) मत रखिये
म राच (३११) मत कर, प्रवत्त न हो
मळी (२८८) मिली

म सनाय (२७३) मत छिपिये
महणमथ (११३) समुद्र का मथन करने वाला
महत (३३) बडेरा, प्रधान
महमहण (१८६, २६६, ३१६, ३४७, १ महार्णव २. महामहनीय, परब्रह्म
महम्नग्ग (१३) १ महार्णव, महा समुद्र २ परब्रह्म
महम्माया (३८) महामाया, सीता
महराण (२५ २६) महार्णव, समुद्र
महा गिड (७२) महा वाराह
महा जळ (२१, २२) अथाह समुद्र
महा जोध (३६) बडा योद्धा
महा तत (८४, १४०) महातत्त्व
महा दत (१६०) महा दान
महा नग (४१) बडा पर्वत
महारउ (२७६) मेरा
महारिख (३५) महाऋषि, महर्षि
महारिय (१८०) मेरी
मही (१६५) मे
मही-साह (५४) पृथ्वी को धारण करने वाला
महोरत (१३०) मुहूर्त्त
मा (२७७) मे

मांगां (१२१) मांगता हूँ
मांग्यो (१६२) मांगा
मांझ (४४, २२५, २६५) म, मध्य
मांझम (११६) में
मांड (११३ ११४) प्रतिष्ठित करके
स्थापित करके
मांण (१९७) मान
मांणशां (५) मनुष्यों का
मांणस्सां (६१) मनुष्यों में
मांम (३३०) माना जाता है
मांहुळा (२१७) मेरा
माधा (११२) माधव
माम (४१) माता देवकी
मार चपावै (११) नष्ट करके
उत्पन्न करके
मार जिवाड़ (१२५) मारने और
जिलाने वाला
मारण (५६, ६३) मारने वाला
२ मारने को
माव (२१) बहुत
माह (२८०) महान
माहुर (१३२) मेरा
माहरा (११) मेरा
माहरै (११५) मेरे
माहरो (२७१) मेरा
माहव (२६५) माधव

मिटइ (१५६) मिटने पर
मिळाविय (५८)मिला दिया
मिळै (३८) मिल गये
मिळै (२३१) मिलती है
मुकम (२१७) मुकुन्द
मुखन (३२) मुख से
मुखां (१४७) मुख से
मुखामुख (२७८) प्रत्यक्ष
मुगट्ट (६१) मुकुट
मुगत (३६१) मुक्ति
मुगत्त (६) मुक्ति
मुगत्ति (२६१) मुक्ति
मुणा (१ ० २६५) वर्णन करता हूँ
कहता हूँ
मुणाळ (२९६) कहा
मुताहळ माळ (२४१) मोतियों की
माला मुक्ता माल
मुनेस (१४३) मुनियों के ईश
मुरत (२१३) मूर्ति
मुर लोक (१५५) तीनों लोक
मुस्कै (१ ३) मुस्कान करके मंद
मुस्कान द्वारा
मूक परी (२७१) छोड़ दे
मूझ तणा (४) मेरे
मेट (६१) मिटाने वाला
मेटण (६६) मिटाने वाला

मेटण-व्याध (८७) व्याधियों को मिटाने वाला
मेटवा (५, ११,) मिटाने के लिये
मेर (३११) मेरु पर्वत
मेलहु (२२३) छोड़ूंगा
मल्हा (१२३) धरू
मेल्है (२४१) रखते हैं
मा (४, ११७, २६६, ३०६) १ मुझे २ मेरा
मोचही (३५७) नाश हो जाता है
मोरो (१०७) मेरा
म्रगकासव (५६) हिरण्यकशिपु
म्रगला (११५) मृग समूह
म्रम्म (५६, २३६, २८३) मर्म
म्रिणाल (१४३) पद्मनाभ
म्हारा (१२८) मेरे
म्होटा (१६४) बड़े

य

यसा (२०, २४१) . जैसे, ऐसे, २ समान

र

रग (३३) इज्जत, प्रतिष्ठा
रच (१४६) किंचित्
र (२७) और
रक्ख (२४०) ऋषि
रखावण (३३) रखने के लिये
रखाविस (१११, ११३) १ रखूंगा, २ रखवाऊंगा
रखी (४६) रक्षा की
रखे (२१६, २८२) १ कहीं २ कहीं ऐसा न हो
रच्यो (४६) स्थापित किया
रजा (१२५) आज्ञा
रज्जियो (१६६) स्वामी
रटता २२१) रटते-रटते
रटता थका (२००) रटते हुए
रत (१८८) लीन
रतन्न (२६) रत्न
रता (२२६) रत, अनुरक्त
रथी-अरण (२५७) सूर्य
रमाड म (२७०) मत भुलाइये
रम्मणहार (१७६) रमने वाला
रम्यो (१५३) रमता रहा
रव्वियो (११६) इधर उधर भटका
रव (३६) शब्द
रसण (२२१, ३१३) १ रसना २ रसना द्वारा
रसणा (३३२) जीभ से
रसणाह (१२२) जीभ से
रस्स (६३) रस

रहंसिय (४०) मार डाला
रहमांण (२२६) ईश्वर, रहमान
रहस (१६२) रहस्य
रहस्स (५१) रहस्य
रहत (२६६) रहता है
रहै (३५४) रह जाय
रांमण (६३) रावण
रांमेस (३८६) रामेश्वर
रा (१२५ २ ४ २०५,२०६ २०७ २०८, २४३) का, के (विभक्ति)
राउर (२५३) आपके
राख (११६) रक्षा कर
राखस (८० २२२) राक्षस
राखिय (५०) रख लिया
राखिस (१११) रखूंगा
राख्यो (२६) रक्षा की
राम-बिकुंठ (१२) वैकुण्ठपति विष्णु
रावण रिप (२१६) राम
राहु (२५८) राहु
रिखभ (१२) ऋषभावतार
रिखम (६२) ऋषभावतार
रिख (३४ ३६, ६२ ६३ १५१ २३७) ऋषि
रिखभ्भ (८३) ऋषभावतार
रिझवे (१८६) रिझावे प्रसन्न करे
रिणायर (२१ ७७) रत्नाकर, समुद्र

रिदा (८८१, ३८२ ३०३) हृदय
रिदै (११३) हृदय में
रिदो (१ ८ हृदय
रिय (२३५) की (विभक्ति)
रिव (८० १४६ १५३) रवि
रीझ (२२८) प्रेम
रीझवां (१८३) प्रसन्न करू
रीय (२४) ('री विभक्ति) की
रीस (१४६) क्रोध
रुचै (२११) रुचता है रुचि रखता है
रुवत (३५०) रोता हुआ
रुवाह (११५) हृदय
रुद्र (५२,५३) महादेव
रूप-अतीत (६) रूप से रहित
रेण (२३५) रेणु धूलि
रेर (३२६) ध्वनि
रेस (८५,)१ नाश, २ हानि
रेस (२२) १ रसातल २ नाश होती हुई, ३ हुई को ४ रही को
रै (३४९) के (विभक्ति)
रो (१६६ १६८ २०३ १४, ९२ १३८ १५६) का (विभक्ति)
रोर (१२६) रौरव
रोळ'र (२६) नष्ट कर
रोळण (७६) नाश करने वाला

ल

लई (२६) लेकर
लग (६८) लिंग, चिन्ह
लखन्न-अग्रज्ज (७६) श्रीराम
लखमीवर (१३४) लक्ष्मीपति
लखम्मण-वीर (८२०) लक्ष्मण के भाई श्रीराम
लखम्मिय (१३६, २४०) लक्ष्मी
लखम्मिय-कत (४७) लक्ष्मीपति
लखम्मिय-नाह (८२) लक्ष्मीपति
लख्यो (२७६, २६०) पहिचान लिया, लख लिया
लगाड (२७५) लगाइये
लगाडिय (२७७) लगाकर
लगाय (४१) लगा लिया
लद्धोहि (२६३) प्राप्त हुए हैं
लवो (२६८) पाया
लब्भै, लम्भै (५) मिलता है
लळै (३) झुक कर
लवलेस (१५२) किंचित्
लहत (२५२) १. पाते हैं २ करते है
लहा (१२०, २६०) पाऊँ
लहि (१५) प्राप्त कर
लहै (५३, ६७, १३८ १५२) पाते हैं
लाखाग्रह (४५) लाक्षागृह
लागा (१, ३) लगता हूँ
लागै (१२३) स्पर्श करती है, लगती हैं
लाधो (२८१, ३१४, ३१५) मिला, प्राप्त हुआ
लार (३०२) पीछे
लावण (६८) लावण्य
लिगार (१७६) किंचित, थोडा
लिघा (२६, ४३) लिया
लिघो (४१) लिया
लियत (१६७) लेते रहते हैं
लियता (२११) लेने से
लिरोजै (२१६) लिया जाय
लिवरावो (२१६) लेने दें, लेने की शक्ति दें
लिवै (२३६) लेते हैं
लीध (१७७, २००) लिया, धारण किया
लीधा (३०२) लिये, लगा दिये
लीधो (३०, २०३) लिया
लील-विलास (६८) लीला विलास करने वाला
लेख (१३६) लेश, किञ्चित
लेखा नही (१३४) दिखाई नही देता, देखता नही
लोकालोक महा-ब्रहमड (१५४) छोटे बडे अनन्त ब्रह्माड, लोकालोक और महा ब्रह्माण्ड

लावण्ण (१२८) सोभन
लोपत (१२१) १ उल्लंघन करता है
२ विनाश करता है
लोह अट्टाव (३१८) ताना तपता है

व

वँचणा (२६२) पढ़ने में आता है
वंछे (११७) चाहते हैं
वंद (१०) नमस्कार करके
वंस (४४) बाँसुरी वंशी
वइराड (१७३) विराट
वखाण (६५, १५६ २४३)
व्याख्यान, कीर्ति, स्तुति
वगोविय (३) नाश किया
वघोविय (३- ५१) मार डाले
वजाविह (४४) बजाया
व (१३१) वडा
वड पान (१८) वट वृक्ष के पत्र पर
वटपत्र
वडप्पन (१३६) बड़े
वड वात (८१) गुण कीर्ति
महान यश
वडाक (२७ १४१) बड़े
वडाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर

वणाविय (१६ १७७ २६७)
बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसळ भगतां (१०७) भक्तवत्सल
वदन्न (६१) मुख
वदे (८६, १४६ १५१ १५२,
१६१ २१० २४३, २६८)
कहते हैं गाते हैं वर्णन करते
हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७५) बढ़ाने के लिये
वन (३८) १ वर्ण [illegible] २ वरना
वन (१६५) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६० २६५) शरीर
वपू (६६) शरीर
वप्प (१६३) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (२ ७) वचन वाणी
वयणा (१८८) विनती पुकार
वयणां (३३१) वचनों से
वरखा (७५) वर्षा
वरतावय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-लाछ (८६, ६५) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियाम (८ ४१) भट
वलमीक (२५४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२९९) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (७३) १ वसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२९९) वसा हुआ
वसोकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७९) बसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१९८) मुँह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १९, २५, २६, २७, २८
२९, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ९) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विधै (९) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमो वार (२१२) विषम वेला
विखम्मिय (५१) विषम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (६१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (९) विछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटबतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (६१,१२३,१८५,२१०,२९६,
३०८, ३५३) विना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २ गाय बैल
आदि पशु
विथार (२९५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियों से
प्राप्त होने वाला
विधूसण (१९, ७३, ८०) १ विध्वंस
करने वाला, नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

साधण (३२८) शोभन
सोपत (२२६) १ उल्लंघन करता है
२ बिगाड़ करता है
सोह बड़ाय (३१८) तारा समवा के

व

वँचाणा (२६३) पढ़ने में आता है
वछे (२१७) चाहते हैं
वंदे (१ ०) नमस्कार करके
वस (४४) चातुरी बसी
वड़राट (१७७) विराट
वखाण (६५, १२६ २४३)
बखान, कीर्ति, स्तुति
वयोविय (३) नाश किया
वछोड़िय (२~ ३१) मार डाले
वजाड़ि (४४) बजाया
व (१३१) बड़ा
वड़-पाम (१८) वट वृक्ष के पत्र पर
वटपत्र
वडम्म (१ ६) बड़े
वड मात (८६) पुण्य कीर्ति
महान यश
वडाऊ (२७ १४१) बड़े
वडाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर
वणाविय (१६ १७७ २६७)
बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसल्ल मगतां (३०७) भक्तवत्सल
वदन (६१) मुख
वदे (८६, १४१ १५१ १५२
१६१ २३ २४३, २६८)
कहते हैं गाते हैं, वर्णन करते
हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७५) बढ़ाने के लिये
वन्न (२८) १ वर्ण स्वरूप २ वरण
वन्न (१६४) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६०, २१५) शरीर
वपू (६१) शरीर
वप्प (१६३) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (२ ७) वचन वाणी
वयण (१८८) विनती पुकार
वयणां (३३२) वचनों से
वरखा (७५) वर्षा
वरताविय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-लाछ (८६, ६५) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियाम (८ ४१) महा
वलमीक (२४४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२९९) रहती है
वसत्र (६९) वस्त्र
वसाविय (२३) १ बसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२९९) बसा हुआ
वसोकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७९) बसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१९८) मुंह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १९, २५, २६, २७, २८
२९, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ९) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विंधै (९) बींध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१०) विषम वेला
विखम्मिय (५१) विषम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) मक्कूट
विगनान (९१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (९) बिछुडे हुए
विछुटो (२१०) छूट गया
विटवतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (९१,१३३,१८५,२१०,२९६,
३०८, ३५३) बिना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २. गाय बैल
आदि पशु
विथार (२९५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियो से
प्राप्त होने वाला
विधूसण (५९, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला, नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

सावण (३२८) सावन
सोषइ (२२१) १ प्रस्थान करता है
२ बिगाड़ करता है
माइ महाप (३१८) धारा समता है

व

वंचाणआ (६३) पढ़ने में आता है
वच्छं (२२७) चाहते हैं
वंदि (१००) नमस्कार करके
वंस (४२) बांसुरी वंशी
वडराड (१७२) विराट
वक्खाण (६५, १२६ २८३)
व्याख्यान, कीर्ति, स्तुति
वगोविय (३०) नाश किया
वछोडिय (१८ ५०) मार डाला
वढाड़ि (४४) बढ़ाया
व (२११) बड़ा
वड़-पात (१८) वट वृक्ष के पत्र पर
शयन
वड्डम्म (१३६) बड़े
वड़ माण (८६) गुण कीर्ति
महान यश
वड्डाल (२७ १४१) बड़े
वड्डाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर
वणाविय (१६ १७७ २६७)
बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसल भगतां (१०७) भक्तवत्सल
वदन्न (६६) मुख
वदे (८६, १४६ १५१ १५२,
१६१ २६० २४३, २६८)
कहते हैं गाते हैं, वर्णन करते
हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७४) बढ़ाने के लिये
वन्न (२८) १ वर्ण स्वरूप २ वरण
वन्न (१६५) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६०, ६५) शरीर
वपू (६६) शरीर
वप्प (१६३) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (२ ७) वचन वाणी
वयण (१८८) विनती पुकार
वयणां (३३२) वचनों से
वरखा (७४) वर्षा
वरताविय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-नाह (८६, ६२) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियाम (८ ४१) श्रेष्ठ
वलमीक (२४४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२९९) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (२३) १ बसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२९९) वसा हुआ
वसोकर (२७४) वश में करने वाला
वसै (७, ११५, १७९) बसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१९८) मुँह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १९, २५, २६, २७, २८
२९, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ९) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विंधै (९) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१२) विपम वेला
विखम्मिय (५१) विपम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (९१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (९) विछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटबतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (९१, १३३, १८५, २१०, २९६,
३०८, ३५३) विना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २. गाय बैल
आदि पशु
विथार (२९५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियो मे
प्राप्त होने वाला
विधूसण (५९, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला, नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

सोभण (३२८) सोभन
सोपत (२२६) १ उत्थापन करता है
२ विदाई करता है
साइ बड़ाव (३१८) वारा करना व

व

वैंचाणा (२६३) पढ़ने में आता है
वंछे (२२७) चाहते हैं
वंदे (१००) नमस्कार करके
वंस (४४) बांसुरी वंशी
वइराट (१७३) विराट
वखांण (६४, १२६ २४३)
व्याख्यान, कीर्ति, स्तुति
वखाणिय (८) बखान किया
वखोड़िय (३- ५२) मार डाले
वधाड़ि (४४) बढाया
व (१३१) बड़ा
वड़-पान (१८) वट वृक्ष के पत्र पर
वटपत्र
वडम्म (१३६) बड़े
वड माल (८१) बड़ी कीर्ति
महान यश
वडाछ (२७ १४१) बड़े
वडाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर

वणाविय (१६ १७७ २६७)
बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसल भगतां (३०७) भक्तवत्सल
वदन (६६) मुख
वदे (८६, १४६ १५१ १५२,
१६१ २३० २४३, २५८)
कहते हैं मानते हैं, आरंभ करते
हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७५) बढ़ाने के लिये
वन (३८) १ वर्ण स्वरूप २ वर्ण
वन (१६५) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६०, २६५) शरीर
वपू (६६) शरीर
वप्प (१६०) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (७) वचन वाणी
वयण (१८८) विनती पुकार
वयणां (१३२) वचनों से
वरखा (७५) वर्षा
वरताविय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-मास (८६, ६५) लक्ष्मीपति
वर-सीस (८७) सीतापति
वरियाम (८ ८४१) महा
वलमीक (२८४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२९९) रहती है
वसत्र (६९) वस्त्र
वसाविय (२३) १ वसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२९९) वसा हुआ
वसोकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७९) वसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारवार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१९८) मुंह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १९, २५, २६, २७, २८
२९, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ९) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विधै (९) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१७) विषम वेला
विखम्मिय (५१) विषम

विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (९१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (९) विछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटवतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (९१,१३३,१८५,२१०,२९६,
३०८, ३५३) विना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २ गाय बैल
आदि पशु
विथार (२९५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियों से
प्राप्त होने वाला
विधूसण (५९, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला,,नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

विनांण (२६१) चरित्र
विबुद्ध (२५०) देवता
विभासिय (२७७) विचार किया
विमेक (२५१) विवेक
विमोहिय (८४) मोहित किया
विम्मास (२१६) विमास
वियापक (२३४ १७) व्यापक
विरच (१६१) ब्रह्मा
विरचिय (१३८) ब्रह्मा
विरक्ख (८६) वृक्ष
विराजत (२६६) रहता है बैठता है
विसू भो (३६५) श्रीम
विलसै (३११) भोगता है
विऊधी (१३६) मालूम होगई
विसूधो (३८) १ मोहित २ विशुद्ध
विसरजित (२६३) विसर्जित
विसंम (३१) १ विषम २ ह विश्वास २ आधार
विसभर (१ ३८ ८२) विश्व भर
विसतरण (१४) विस्तार करने वाला
विसतर (१६०) विस्तार करने है
विसतारण (१८७) विस्तार करने वाला
विसन (१८५) विष्णु
विसनूव (२४७) वैष्णव
विसन (१६, ७४ ८७ १०३, २३ २६१ २४७) विष्णु
विसरांम (३) विश्राम
विसय्म (१६) विषय
विसख्य-विरक्ख (२६५) विषवृक्ष
विसारद (३३५) मूल कर
विसामित (२४) विश्वामित्र ऋषि
विसारत न (३३६) भूल कर
विसारी (३३४) भूल कर
विसे (३ ५, २८८) से में
विस्वामित (२४५) विश्वामित्र
विहड कंस (१ ४) कंस का नाश करने वाला
विहंडण (८५) नाश करने वाला
विहद (२४४) १ वैद्य २ विषाद
वींजण (१८६) पंखा
वीस (८१) चरण
वीज (२२८) विद्युत वज्र
वीर (५३) भाई
वीरंभर (१ १) विश्वंभर
वीसरजे नहीं (३२१) भूल मत जाना
विसारिस (११२) भूला हुआ

वुग्रो (३७) हुग्रा
वुछाव (३७) उत्सव
वेणि (१००) शिखा, चोटी
वेर-ग्रवेर (३२९) समय-कुसमय
वेळा (२६६) तरग, लहर
वेस (२७५) वेष, रूप
वेह (३२७) वेष, मानव-शरीर
वैद (२११) वैद्य
वैस (१६१, १६८) वैश्य
व्यापत (२२५) व्याप्त होता है
व्रक्ख (१७५) वृक्ष
व्रख (१८३) वृक्ष
व्रखभ (१२) १ वृषभ २ ऋषभ
व्रखा (१३२) वर्षा
व्रखे (५३) वर्षे की
व्रज्ज (७५) व्रज
व्रथा (३५३) वृथा
व्रद्ध (१६४, १८२) वृद्ध
व्रिदावन (७४) वृदावन
व्हाण (१७०) वाहन रथ, गाडी आदि
व्हार (२४) १ रक्षार्थ धावन २ पीछा करते हुए चोर आदि को पकडने की दौड-धूप अनुधावन ३ रक्षा, सम्हाल, वाहर
व्है (१०८) हो जाता है

स

सक (४३, २२०, २२१, २३३, ३५०) धाक, भय, डर
सकट-मेटणहार (८८) सकट को मिटाने वाला
सकटा (३५०) सकट
सगराम (२३) सग्राम
सगाथ (३४५) साथ
सघार (२४, ३२, ३५, १८८) सहार, नाश
सघारिय (४२, ४३) नाश करके
सच (१०८) सचय करके
सतत (१८७) निरन्तर
सदण-हाकणहार (६६) रथ हाँकने वाला श्रीकृष्ण
सभरै (२३३) सुमिरण करले
सभार (३२४, ३३७, ३४४) सुमिरण कर, याद कर
सभारता (२०१) सुमिरण करने से
सभारिस (११, ६६, ११२) याद करूँगा
ससार-दवन्न (१८०) ससार रूपी दावाग्नि
स (२६३, २७५) १ सो, २ वह
स (२५) पदापूरक अव्यय

सक्त (१८,१४६) शक्ति मायी
सकति (२५८) शक्ति
सकां (६) सकता हूँ
सक्क (२४२ २५५) इन्द्र
सक्र (८७) इन्द्र
सकाज (८६) सहेतुक
सकाय (४०) काम के लिये
सकाय (५७) १ दीर्घकाय
२ दृढ़ शरीर
सकै न वियाप (२३२) व्याप नहीं सकता।
सगळी (१२६) सब मुख, सब
सग्र (६२) सगर राजा
सजीवरण-मंत्र (३३१) संजीवन मंत्र
सज्ज (११) तैयार
सत (७६) सत
सत (२३७) सौ
सतरूपरा (७८) शतरूपा
सत्त प्रणव-सचेत (२८६) अभिमानी
सतूपा (१६२) शतरूपा
सथापण (२६३) स्थापन
सथीरण (२८६) स्थिर
सदगत (१५ ३५६) सद्गति
सदबुध (१) सद्बुद्धि
सदामद (४२) निरन्तर
सम्मक (२५७) समक्ष
सपत पियाळ (१४५) सातों पाताल
सात अधोलोक
सपन्नो (सुपन्नो)(१८५) उत्पन्न हुआ
सबद (२११) शब्द
सबद (१३७ २७० २८०) शब्द
सबै (६६ १४७ २८०) सभी, सब
समद (८५) समुद्र
समंदो (३१०) समुद्र
समंध (१७२) संबन्ध
समराथ (६ ६४) समर्थ
समवड़ (१३४) सरीखा
समांणउ (२८० २८४ २८६) १ समा गया २ मिल गया
समांणोय (२७६) समा गया
समाय-समंद (१८) प्रलय की समाप्ति
प्रलय काल की समग्र समाप्ति
समापण (४५ १६०) समर्पण
समाय (१२६) १ समा देते हैं
२ समा जाता है
समी (३५४) सरीखी
समोवड़ (२०६) समान
समाथ (१४५, २४५) समर्थ
समम्भुव (१६२) स्वायम्भुव मनु, स्वयंभुव
समांण (२४८) समाना जानी

सरगुण (६४) सगुण
सरजण (१४५, २५५) बनाने के लिये
सरज्जिय (१७६) बनाया
सरज्या (८) रचना की
सरण-असरण (१८८) अशरण शरण
सरब (३५४) सर्व
सरब्ब-निवास (२६१) सर्व भूतों में निवास करने वाला
सरब्बस (२६७) सारे, सर्वस्व
सरसति (१) सरस्वती
सराप-उतारण (८७) शाप को मिटाने वाला
सरीख (५२) सदृश
सरोज (१५७) ब्रह्मा
सलभ्भो (१६६) सुलभ
सल्ल (७३) शल्य
सवळो (३४८) अनुकूल
सस (६५, १६०, १६२) शशि
ससिहर (१८६) १ चन्द्र, २ महादेव
सह (४, ६, ८, ५४, १७७, १६१, २८४, ३०१, ३१२, ३२६, ३५४, ३५७) समस्त
सह कोय (८, १३३) सभी कोई
सह ठाम (३१३) सर्वत्र
सहण (२६६) क्षमा
सहस्सरबाहुव (३२) सहस्रबाहु
सहाय (३५१) सहायक
सहियो (३५०) सहन किया
सहेत (५५) सहित
साई (१२६, १३१) प्रभु, स्वामी
सापरत (३३५) १ साप्रति २ प्रत्यक्ष ३ निश्चय ही
साभळ (१६, ५१, १२४, १८८) १ सुनिये, २ सुनकर
साभळिये (३५२) सुनिये
सामिय-जग्ग (२३४) जगत का स्वामी
सामी (११) स्वामी, प्रभु
सामुहा (३०६) सम्मुख
सावट (१८) समेट कर
सासो (२२६) सशय
सायुज्य (२६०) सायुज्य, मुक्ति का एक भेद
साख (१७२) साक्षी
साचा (३५१) सच्चे को
साचे (२१०) सत्य
सातु-रिख (२४१) सप्त ऋषि
साद (२८, २१३) १ शब्द २ पुकार
सादविया (२१३) पुकारा
साध (७१, ८५) सत
साधव (१८१) सज्जन

सामवा (३४१) साधुओं से
सामीप (२६) सामीप्य
मुक्ति का एक भेद
सारंग (७०) धनुष
सार (११८) सुधि
सारखा (२३६) सरीखे
सारए (४६) सिद्ध करने के लिये
सालोक (२६०) सालोक्य मुक्ति का
एक प्रकार
सावित्रिय (८७) सावित्री
सावेब (२४६) सारूप्य, मुक्ति का
एक भेद
सास (१४२) स्वास
सास उसास (३१२) स्वास प्रति
स्वास २ स्वासोच्छ्वास
सासत्र (१३३ १ ८) शास्त्र
सासोसास (११ २५४) स्वासोच्छ्वास
साहब-बक्षिमद्र (३३) श्रीकृष्ण
सिगाळ (१२ १४३) मेढ
सिंघासए (१८१) सिंहासन
सिंधुल (२४१) समुद्र
सिता (२८८) मिसरी
सितासित (७) श्वेत और कृष्ण
रंग सित और असित
सिदज्ज (२६६) स्वेदज, पसीने से
उत्पन्न होने वाले जीव
सिद्ध (४५) पूर्ण
सिद्ध (२३१) सिद्धि
सिध (४५) पूरा सिद्धि
सिध जोगिय (७४) सिद्ध योगी
सिधि (२४०) सिद्धि
सियेव (३७) मये
सिर ऊपरै (१२५) शिरोधार्य
सिरि (८४, १ ४) १ श्री, २माप
सिरि रंग (२२८) श्री रंग
सिरीबो (१२६) श्रीजी लक्ष्मीजी
सिसपाळ (८५) शिशुपाल
सीत (४२, २४८) १ सीता २ लक्ष्मी
सीव (६८) शिव
सु (२२७) से
सु म (२५६) से
सुक्ख (१७२) सुख
सुक्रियथ (११३) सुकार्य
सुच्छम (१७४) सूक्ष्म
सुखम (२२२) सूक्ष्म
सुणि (३३१) उनकी
सुणावए (२६) सुनने के लिये
सुणि (२४७) सुन कर
सुणी (१०१) सुनकर

सुगो (१८) सो गया
सुत्रा (२६३) धागे
सुध (३५६) पवित्र, शुद्ध
सुधारण (६०) सुधारने के लिए
सुन्न (१६६ १७३) शून्य, शून्याकाश
सुणेखाय (३८) सूर्पणखा
सुपायण (१४) १ निमित्त, २ प्राप्त कराने वाला
सुपीत (६६) पीला
सुभग (३४६) सुंदर
सुमिरणं (३४६) सुमिरण करने से
सुरभ (२३६) सुगंधि
सुरभत (२५०) सुरभित
सुरग (३४५) स्वर्ग
सुरत्त (७०) रक्तवर्ण
सुरसत्ता (१६०) सरस्वती
सुरा (२६) देवताओं को
सुरीस (६३) देवताओं के ईश
सुवै (३३५) सो जाता है
सुहि (२८१) वही
सुहै (२४१) शोभा पा रहे हैं
सू (२०४, ३४०, ३४१, ३५८) से (अपादान और करण कारक)
सूझै (३५५) दिखाई देता है
सूता (३२५) सोने हुए
सूर (१४५) देवता
सूळ (८४) १ त्रिशूल २ पाशुपत्य अस्त्र
सेवक्क (२४६) सेवक
सेवग्ग (२८२) सेवक
सेवता (१८६) सेवा करने से
सेविस (११४) सेवा करूंगा
सेस (६७, १४६, ३११) शेष भगवान शेषनाग
सेस-अधार (८६) शेष के आधार
सोज (१५५) वही
सोण (३५०) शोणित
सोध (३५५) शोधन करके
सोळ-कळा (१६०) चन्द्रमा की सोलह कलाएं
सोळ भात (६६) पूजन के षोडशोपचार
सोहै (७६६) शोभा पाता है
सोहो (२६७, २६४, २६६) सब
स्नेहे (१) स्नेहपूर्वक
स्याम (५३) श्याम
स्रग (५४) सींग
स्रप (३५१) सर्प
स्रब (१८, ५७, ६३, २२५, २५७, २६८, २६६, २८६, ३५८) सर्व

स्रव-कारण (७२, ११६) सृष्टि का कारण सर्व कारण
सर्वे (०६८) सर्व
स्रब (२६, ६२) सर्व
स्रब विआप (२६७) सर्व व्यापक
स्रवण (७, १ १) कान
स्रवणां (२११) कानो में
स्रवणेह (३५१) कानों में
स्रवे (१८६) स्रवता है, बरसाता है
स्रम्ब (११४ २१४ २७५) सर्व
स्राप (५२) शाप
स्रुति (१८४) वेद

ह

हंस (५६) हंसावतार
हणमउ (२३८) हनुमान
हणू (२२१) हनुमान
हण्या (९७) नाश किया
हण्या (२६) नाश किया
हत (१८४) नाश करके
हत्थ (५४) हाथ
हत्यो (५४) मारा
हद (२६७) मर्याद
हमस्स (५) सेना
हयानन (५५) १ हयग्रीव नाम का एक दैत्य २ हयग्रीवावतार
हर (४८) महादेव
हर उत (५) महेश
हरख कर (३१४) हर्षित हो
हर-सर (३१७) परब्रह्म रूपी सरोवर
हर हार (२८०) शेष नाग सर्प
हरी (३६) हरण कर लिया
हरीत (७०) हरित वर्ण
हलकार (३२) आक्रमण
हलाविय (२५) चला दिया
हव (१२४) हव्य
हव-कव्य (१६४) देवताओं और पितरों को दी जाने वाली आहुतिए
हांणी (२०७) हानि
हाजरा-हजूर (३४१) प्रत्यक्ष
हाम (६६) वेद
हिआह (३३६) हृदय से
हिक (२०८) एक
हिया (३१२ ३४०) हृदय
हिरणक्ख (२७) हिरण्याक्ष
हिरणांह (२०३) हरिण की भांति
हिरणाक्ष (२३ ५४) हिरण्याक्ष
हिरदै (३४२) हृदय में
हिम (२६८ २७० २७१,२७४, २७६-२८२, २८५, २९१) मन
हिवै (२११ २५६ २७३) मन

हुंत (७५) से (अपादान कारक की विभक्ति)

हुआ (१८) हो गये

हुओ (१७, ३६) हो गया

हुतोज (१५४, १५५, १५६, १५७, १५८, १५६, १६०, १६१ १६२) था, था ही

हुलासत (६६) प्रफुल्लित

हुवै (३४८, ३५२) हो जाय

हुवो (२८५) हो गया

हुवो (३४८) होजाओ, होने पर भी

हूत (४५, ४६, ६०) से (अपादान कारक की विभक्ति)

हू-तूं (२५६) मैं-तू, मेरे और तेरे की भावना

हूता (३०२, ३०५) थे

हूसी (३४५) होगा

हेक (१८५, २४५, २७८, २८३, २८५, २६२, २६५, ३५३) एक

हेकट (२७६) अभिन्न, इकट्ठा

हेकरा (२०, २५, १३०) एक ही

हेकरा मल्ल (२५) अनेको से इकल्ल युद्ध करने वाला

हो (१, ३, ६, ११, १०६, १०६ ११२, १२०, १२१, १६३, १६४, २१६, २६२, २६६, २७७, ३०८, ३१०) १ मैं, २ मैंने

होय (३५४) हो जाता है ।

हरिरस की कतिपय प्रतियो के विशिष्ट पाठांतर
और कुछ प्रक्षिप्त-पाठ

परिशिष्ट ३

परिशिष्ट-परिचय

जो काव्य अधिक जन-प्रिय हो जाता है, उस पर लोक का अपना अधिकार हो जाता है। उसमे सहज ही लोक-मनोवृत्ति के अनुसार परिवर्त्तन होने लग जाता है। मीरां, चन्द्रसखी, संतसखी और दयासखी आदि भक्तजनो के काव्यो मे भी ऐसा होता रहा है। प्रतिलिपिको की असावधानी और अज्ञानता भी इस परिवर्त्तन का प्रवर्तक-कारण कहा जा सकता हैं। हरिरस मे भी ऐसा ही हुआ है। उत्तर-गुजरात, सौराष्ट्र, घाट (थरपारकर-सिंध) और राजस्थान के मारवाड और बीकानेर इत्यादि प्रदेशो मे इसकी शताधिक हस्त-लिखित प्रतियो को देखने का सुअवसर मिला। उन सभी प्रतियो में छंद-संख्या, छंद-क्रम और छंद-रूप एक समान नहीं। मुद्रित प्रतियों के सस्करणों का भी यही हाल। उल्लिखित तीनों बातें मुद्रित प्रतियों में भी हस्तलिखित प्रतियो के समान ही पाई जाती हैं। पाठ साम्य पाठ-क्रम और छदों की संख्या किसी मे भी एक समान नही। मुद्रित प्रतियो का यह अनेक प्रकार अतर यही प्रगट करता है कि शुद्ध प्रतियो की खोज कर मूल पाठ के निकट आने का किसी ने प्रयत्न नही किया। कवि की जन्म-भूमि मारवाड का मालानी प्रान्त और प्रवास-भूमि सौराष्ट्र प्रान्त एव उत्तर-गुजरात से प्राप्त प्रतियो से पाठ-चयन करके हम यह विषय-विभाजित अद्वितीय सस्करण पाठकों को भेंट कर रहे हैं। तथापि अनेक प्रतियो मे प्राप्त कुछ आवश्यक पाठान्तर (१) और प्रक्षिप्त छद (२) पाठकों और भक्तजनो की सेवा

में इस परिशिष्ट में प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे काव्य में निरंतर होते रहने वाले विविध परिवर्तन-परिवर्द्धनों के कारण उसकी लोक प्रियता और उसके महत्व का समुचित अनुमान लगाया जा सके।

पाठान्तरों के छंदों के आगे लिखी गई संख्यायें प्रस्तुत हरिरस के छंदों की हैं।

प्रक्षिप्त छंद अनेक प्रतियों के हैं। उनका क्रम भी तितर बितर और विषय वार नहीं होने से विषय पुष्ट नहीं किये जा सके हैं और इसीलिये उनके आगे छंदों की क्रम-संख्या नहीं दी जा सकी है।

पाठान्तर और प्रक्षिप्त-पाठ में मूल प्रतियों के अनुसार 'ख' के स्थान सर्वत्र 'ष' ही लिखा गया है।

—सम्पादक

परिशिष्ट ३

१ पाठान्तर

लागा हू पहलो लळी, पीतावर गुरु पाद
वेद पदारथ भागवत, पायो जेण प्रसाद (३)
लागू हू पहली लुळै, (३)
लागू म्हू पहला लळै (३)

पूठि धरणि सिर सावतो हरि तू चितवणि हार
तुझ ही तुज्झ करतडा, परम न लाभै पार (५)
पीठ धरणि धर पट्टडी, हरितिय चित्रण हार
तोइ तोरा चरिता तणो, परम न लाभै पार (५)
पीठ धरण कर पोटडी, हर थिय लेपणहार
तोई तारा चिरता तणो, परम न लाभौ पार (५)

तोरा हू पूरा तवै, सकू केम ससमाथ
चत्रभुज सहु थारा चरित्त, निगम न जाणू नाथ (६)

पइठा माण तुहाळी पूठ, उवार विसन कहै सुर ऊठ (१७)
पईठा मावि तुहारी पूठि, उवारि वृसन्न कहै सुर ऊठि (१७)

जटाघर मघ दइत्त जळाय, विमोहै रूप मनूप वणाय (२४)

एकलमल्ल । एकणमल (२५)
महणारभ । महराणव (२५)

मुणी म्है नार असारै मति, गोविंद नहइ कुण तोरी गति (१२०)

आवै इम ईसर प्रह्म अपार, अरी भव तारण नाहृ पियार (१२६)

कारणीगर एडा करै, करता विलम न काय (१३०)

फेम हुओ ईसर कहै, के जाये फिरतार

ब्रहमा रुद्र विचार भ्रम, नह जाणै निरकार (१३५)

अनेसर तोरा पार अनोय (१३६)

'विरचिय' के स्थान 'विचिओ' (१३८)

वडा तत तोर लहै न विचार (१३८)

द्रगपाळ । दिगपाळ (१३९)

अलीलो लीलं करत आदेस (१४०)

अलाहृ अगाहृ अवाहृ अजीत (१४१)

कपाळ विमाळ सिघोळ किसन्न, वडाळ भुजाळ उजाळ विसन्न

मुणाळ भुजाळ छयाळ महेस, आदेस आदेस आदेस आदेस (१४३)

रहै रत ध्यांन इक्यासी रिष, लहै नही पार विरची ज लिप (१५१)

नही तो श्रम नही तो सास, नही तो भ्रम्म नहीं तो भास (१६५-१६६)

प्रवट आये आतमा, चत्रभुज आवै चीत (२०६)

छुवा न भाजै पीर सूं, त्रिषा न भाजइ अग्नि
मुगति न लाभइ राम विण, मानो साचो मग्नि (२१०)

न दै साद काइ नारीयण, साद दिया ज्या सत (२१३)

पेलै पाप प्रचड (२१४)

जीहा तो रेहा लागा ज्याह त्रिलोइ नही भी लोका ल्याह (२२६)

सोह हस भूत वियापत सम्भ, दुवादस आगुळ गांठ दुलम्भ
जादव दुलम्भ दु प्रामी जग्ग, पदम्म पताक अलक्खित पग्ग (२३४)

पगा विदिया सह जोडै पाण, वळै पग तो पट भाष वपाण (२४३)

. . .

नवै पग दिस गोतम नारद्द, अदै पग कपिल करग्ग विहद्द (२४३)

'सन्नक' के स्थान 'छन्नक' (२४७)

जादव, जादव्व, जादम, जादुव (२४७)

भावै पग छाह अनेक अनाज, लियै पग छांह तणा फळ लाज
ओळग्गै पग्ग परम्म अलष्ष, रहै पग छांह रमै गोरष्ष (२५१-२५२)

अधिक प्रदे नप कोट अरक्क, समत्थ सिरज्जण एक सरक्क (२५५)
अधक पाये नष कोटि अरक्क, समाथ सिरजण भाजण सक्क (२५५)
एकै षिण माह भाजै घर आम, निपावै अधिका केवळ नाम (२५५)

दातार मुगत दुन्हे जैदेव (२६०)

राज विलोचन जुद्ध ना धरे रग, श्रीरग अनत कुसेन की सेव
भगत्ति दयाळ दईता सेव, सथापण सर्ग प्रकासण स्रव्व (२९३)

मुनेम महेम कोइल्या मज्झ
प्रसिद्ध महा बळ तेज प्रयज्झ (२९६)
मनेम महेस कौमतळ मझि
प्रसिद्धि महा वळ तेज पयझि (२९६)

तिलह तेल पुहप हि फुनेल ऊझळत सायर
अगनि काठ जोवन्न घट भगवट्ट त कायर
ईष रस पोसति कस अरथ सासत्रि उर ठाहै
पान चग माजीठ रग उछरग विमाहै
पग नीर धीर घर अतरै, मद सरीर कुंजर मयण
मन वसै जेम तन मझली त्यौ मो मन वसियो महमहण (२९९)

आद तूझ थी ऊपना, जगजीवण सहु जीव
ऊच नीच घर अवतरण, दाँ के दोस दईव (३०१)
आदु तुझ धी ऊपन्या, जग जीवन स्रब जीव
ऊच नीच घर अवतरण, दै तूं वस दईव (३०१)

आपोपै हूता अनत, आप्यो तैं अवतार
पाप धरम चा पाहरू, लाया जीवा लार (३०२)

दीह घणा माझल दुनी, रुळियो देखै रूप
माघव हमैं प्रकास मुहि, सिव ताहरो सरूप (३०३)

रहस निरालव अेकलो, तज काया मझ वास
साथी तिरण दिन सखधर, सुरग तणँ पथ सास (३४५)

आतम पिया अजांण ही (३४७)

उण रस मे सब रस कियो, हरिरस समो न कोय
रति इक तन मे सचरै, सब तन हरि मय होय (३५४)
सरब रसायण मे रसी, हरिरस समी न काय
टुक इक घट मे सचरै, सोह घट कचन थाय (३५४)

इण अवसर मत आळसँ, ईसर आखँ अेम
प्राणी हरिरस प्रामियां, जनम सफळ थिय जेम (३६०)

कवि ईसर हरिरस कियो, दिहा तीन सो साठ
महा दुस्ट पामै मुगत, जो कीजै नित पाठ (३६१)
उठ नित करिया पाठ (३६१)
नित उठ कीजै पाठ (३६१)
नित प्रत करिजै पाठ (३६१)
पहला कीधा पाठ (३६१)

२ प्रक्षिप्त-पाठ

केसवा कलेस नासाय दुख नासायते माधवा
हरहरे पाप नासाय गोविंदो मुख दायका ।
केसवा कलेस नासाय दुख नासायते माधवा
श्रीहरी पाप नासाय मोक्ष दाता जनार्दन ।
उचरेत राम नामेन राम नाम उचरेत जीह्वा
बथा पापं बनेथ श्रीराम नाम जुगे जुगे ।
राम नाम सदा वाणी राम नाम सदा कथा
राम नाम सदा सबद है सबदा सुखसारथा ।
राम नाम बिना वाणी राम नाम बिना कथा
राम नाम बिना सबद है सबदा अकसारथा ।
जो कोड़ बारं गहस्ते तू कासी
अकरे प्रभावे निज कलपवासी
सुमेर तुल्य दे हेम दानं
नहि तुल्य नहि तुल्य गोबिंद नामं ।
राम न रटी रे मती पर रटी दुरमति
तेनी निपती नहि तू फिरति भमति भमति ।
राम भरोसे ऊजळे दायम ईसरदास
ऊजळती मैं धीरवें बहा रय विसवास ।
बापधी फेरयो नाव पर, फिरा सु रातें सुख
सोह बतावें पंथ सिर तेह पुजावें सूप ।

नारायण न निदरै, निंदै तो दुरमत्ति
जे नारायण सिर हणै, तोइ नारायण गत्ति ।

नारायण नैटो वसै, देव म जाणै दूरि
जिण दिन आ जग छडिजे, आवै परवत चूरि ।

चदा सो चलणा गया, सूरिज मडळ सोय
जीव ! हरीरस वाच रे, हरि सूं नातो होय ।

याय चलण लागै करण, सूरिज ससि प लग्ग
ईम जिता सूं वाहरो, जनि को जाणै मग्ग ।

राम नर्ण पालवणं, मन पव्वी [पवी] तन रष्व
कालै कामण न गजियो, को अजरामर अष्व ।

नारायण भजियो नहीं, भजिया अवर भजन्न
ज्या तजिया मानव जनम, आया तन अन-अन्न ।

नारायण भजियो नही, भजिया अवर भजन्न
ज्यां तजिया मानव जनम, सभ्भिया तन्न असन्न ।

दीवांण तू दईवाण तू सभाण तूं सुरताण
सुभियाण थारो नाम सम्रथ, सोइ विध सप्रमाण ।
रहमांण तु वापाण राजै, गयण तु फुरमाण गाजै
प्रांण पुरुप पुराण, प्रिथिवी जाण तू परमाण ।

विस्व थारो थू विसभर, घणी थूं थारी सहो घर
पुड परठण थू हि पेलै, कळ न सकियो कोय
कई जिवाडै केई मारै, केई वोडै केई तारै
ठालवै भरिया भरै ठाला, थू करै स्यु होय ।

भणता सुणता लील विलास
पामै नर मोक्ष तणा आवास ।

अकळ सकळ जळि थळि अनंत, सब रूप ज मगळि
वदन कमळ सुप समळ, पवित्र जळ गंग पखाळि
अवळ उधारण अचळ, वसै रोम रोम ब्रह्मंडळ
तारण गिर जळ अघळि नांम धारी जन मगळि
चित हूंत चपळि जुगलि करि, नर नारायण तूझ निरमळ
आदिम विसन अवगत अलप, वहै जुग जायै अेक पळ ।

धसै तैं केता काफर थान, जिको जगनाथ रचायो ज्यांन
जिता तैं आलम साह अलाह, वन थळ मांहि किया वीमाह ।

नमो जप जाप पिता जोगिंद, राजा श्रीराम नमो राजिंद
नमो सब व्यापक अंग अनंग, नमो निसिवासर रेण निहंग ।

नमो परब्रह्म नमो पर पत्ति, नमो पर देव नमो परकत्ति
नमो परमेस नमो परग्यान, नमो परजोति नमो परध्यान ।

नमो निरनांम नमो वहो नाम, नमो अवधूत नमो श्रीरांम
नमो जग-लोप नमो जग-थाप, नमो जग बंध नमो जग बाप ।

नमो निरचेत नमो निरकाम, नमो निरजीत नमो निरियांम
नमो निरभूप नमो निरभेष, नमो निररूप नमो निररेष ।

नमो निरअत्त नमो निरदेह, नमो निरदत्त नमो निरनेह
नमो अणरेह अनेह अनंत, नमो अणदेही व्यापक अंत ।

नमो निरनाम नमो निरदेह, नमो निरगाम नमो निरगेह
नमो निरपख्ख नमो निरम्रेह नमो निरदख्ख नमो निरदेह ।

नमो निरभम्म नमो निरबार नमो निरकम्म नमो निरकार
नमो परब्रह्म नमो परभत्त नमो परकम्म नमो परकत्त ।

नमो प्रम पम्म नमो प्रम पान नमो प्रम प्रंक नमो प्रम धाम
नमो प्रम प्रम्म नमो प्रम बाम नमो प्रम क्रम्म नमो प्रम काम

नमो सब बाधर धंम सुरंन नमो मिघ बा नर रैन निहुंप
नमो बंम सम बिसम बिसुद्ध निहुंस निजोग निलोक निविद्ध

नमो नर-नार निपावरा नाथ नमो सत्र साजन देव समान
ब्रह्म्मा बेद कतेब बिचार पर्ड गुण सेस लहै मह पार
मुनीसर ध्यान धरंत महत पर्यो गुन हेको हि नाम पनंत ।

कई सनकादिक ध्याक कीत पई नित नारद धारे प्रीत
रहे नित देव रमाय सुरेस मारेस मारेस मारेस मारेस ।

मपारस मछेद मचास मलोप मथाह मपम्म मजेप मखोप
वैराम न राग न रूप्प न वैस मारेस मारेस मारेस मारेस [1] ।

ममीत मदीत मरीत मराह मसीत मभीत मपीत मथाह
ममीत मदीत मजीत मवेस मारेस मारेस मारेस मारेस ।

मरांम मकाम मनाम मपम्म मठाम मनाम मधाम मतम्म
ममाम मकाम मवास मवेस मारेस मारेस मारेस मारेस ।

ममंग मपंप मसंप मसंत मरंप मबंम मबंग मनंत
मनंभ मसंम मजांम मवेस मारेस मारेस मारेस मारेस

---

१ मभम्म मछेद मवास मलोप मपड़ मपारंम मकम्म मलोग
वैराम न राग न पवन न भेव मारेस मारेस मारेस मारेस ।

अवाळ अप्रद्द अकाळ अक्रम्म, अपाळ अलद्द अभाळ अभ्रम्म
अचाळ अरद्द अनाळ अनेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अमात अतात अजात अजेव, अदीह अगात अअत्त अभेव
अगात अमाम अवात अवेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अलेह अदेह अनेह अनाम, अरेह अछेह अग्रेह अगाम
अक्रेह अग्रेह अपेह अपेस, आदेस आदेस आदेस आदेस[२] ।

अगम्म अथाह अनत अनूप, सदन्न मदन्न वदन्न सरूप
निमाळ निकाळ निताळ निवेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अनग अथाह अप्रेय अरूप, छद्मोह वदन्न मदन्न सरूप
मुपां नह मेल्है मेस महेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

सुजळ गिनान मजन तन मारिस
ध्रम क्रम जप तप नेम वधारिस ।

राज तणी इछा रघुराया
अखिल चराचर जीव उपाया
राज अग्न्या म्हारै सिर राखिस
भूधर तूझ तणा गुण भाखिस ।

दस्यो तै साहि विना कथ देख
वधाडिय देवां आदू वेष ।

दुनी चा काळ भुजाळ दईत
जिके दळ साझ रमै द्रह जीत ।

२- अक्रेत अप्रेत अनेत अवेश, आदेश आदेश आदेश आदेश

भागी धम राज पळाणक भवद
गरज्ज बगां रव म्होटा गिढ ।
धगां मिल पूगै गोढव धच
हेमै धम मझ रेसे सुम संघ ।
वगां तुम्ह पूग करै प्रहकार
नमै धम छोह मचा भर माद
हमा धम तेज तणा पंवार
सिकै पग सेवै ईसर तार ।

छोटा हरिरस

परिशिष्ट ४

परिचय

सत श्लोकी भागवत और गीता की भाँति भक्तवर ईसरदासजी ने भी भक्तजनों के हितार्थ इस सतपदी हरिरस को बनाया है इसे 'छोटा हरिरस' कहते हैं। इस छोटे हरिरस के नित्य-पाठ और श्रवण-मनन का महात्म्य भी बड़े हरिरस के समान ही माना जाता है।

हमें इसके कई पाठ देखने को मिले हैं, उनमें से दो यहाँ दे रहे हैं।

—सम्पादक

॥ ॐ शिव ॥

अथ छोटा हरिरस

(१)

हरि गुण गाय हरि गुण गाय
हरि गुण गाय वहो गुण थाय
प्रगट हुई गगा हरि पाय
ध्रुवजी अटळ हुग्रा हरि ध्याय

(२)

ध्रुव हरि मेरु तणै सिर धरिया
हरि पांडव पांचूं ऊधरिया
वीसारै हरि ते वीसरिया
हरि रै नाम घणा नर तरिया

(३)

पांच क्रोड हूता प्रह्ळाद
सात क्रोड हरचंद परसाद
नव जुजिठळ बारह बळिराज
ग्रमरापुरा तेडीजै ग्राज

एक अन्य प्रति मे छोटे हरिरस का इस प्रकार पाठ-भेद पाया गया है। इसमे केवल ६ छद है-

(१)

हरि गुण गाय घणो गुण थाय
प्रीत कर गग तणो जळ पाय
हरि सुमिरै तो वैकुंठ जाय
घूजी अटळ हुमो हरि ध्याय

(२)

प्रभु सुमरयो जन पांडव पाँच
वा भव-सिंधु न लागी आँच
तरयो प्रह्ळाद कोटि पंच ताज
तरयो हरिचद कोटि सत काज

(३)

तरया नव कोटि जूजीठळ राय
बारह कोटि तरया वळिराय
हरि जन तार लियो गजराज
अमरापुर राखीजै आज

(४)

हरि अविनास कियो अमरीख
रह्यो चकमांबर जे अंत रीख
भीष्म प्रतिग्या कीधी न भंग
हरि महेस्या दीधो अंग

(५)

सरीर कुबज्या कीध सुधंग
सदा अजीवस राख्यो संग
हरि धुव संत करो सतसंग
हिरदै धार विवेक उमंग

(६)

करो न कदी हिरदै मद भेस
करो नह मानव देह कलेस
ममता अणी री कीजिम भास
वदै कवि ईसर एक विभास

———

हरिरस

कथा-कोश

[अंतर्कथाएं और परिभाषाएं]

परिशिष्ट ५

॥ ॐशिव ॥

परिशिष्ट-परिचय

हरिरस में जिन अनेक भक्तों और तीर्थों आदि के नाम तथा राजस्थान और राजस्थानी-भाषा के विशिष्ट प्रयोगात्मक व पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है उनके सम्बन्ध में यथा-स्थल और प्रसंगानुसार संक्षिप्त वर्णन इस परिशिष्ट में दिया गया है जिससे भक्तजनों और पाठकों को हरिरस का पाठ करते समय उनके सम्बन्ध में यथावश्यक कुछ जानकारी मिल सके।

नामों के आगे की संख्याएं प्रस्तुत हरिरस के छन्दों की संख्याएं हैं और कोष्ठकों में अंकित उनके शास्त्रीय नाम हैं।

विशिष्ट महापुरुषों के जन्म-काल भी यथा-संभव यथा-प्रसंग देने का प्रयत्न किया गया है।

—सम्पादक

अकरूर [अक्रूर] २४७

अक्रूर श्रीकृष्ण के चचा और वसुदेव के भाई थे। कस की राज सभा मे अपमानित होकर रहने वालो में ये भी एक थे। कस ने श्रीकृष्ण और बलराम को मारने के लिए एक यज्ञ करने का ढोंग रचकर अक्रूर को इन्हे बुलाने के लिए भेजा था। अक्रूर कस के अत्याचारो से दुखी था अत उसने इस षडयन्त्र की सूचना श्रीकृष्ण को करदी। श्रीकृष्ण और बलराम इनके साथ मथुरा आए और वहाँ उन्होने कस और उसके कई साथी-वीरो को मार दिया। स्यमतक मणि भी अक्रूर के पास थी, जिसके प्रभाव से द्वारिका में अनावृष्टि और प्रजा में धनाभाव नही होने पाता था। ये श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे।

भक्त-वाणी

ममाद्यामङ्गल नष्ट फलवांश्चैव मे भव।
यन्नमस्ये भगवतो योगिध्येयाङ्घ्रि पङ्कजम्॥

(भक्त अक्रूर। श्रीमद्भागवत)

आज मेरे समस्त अमगल नष्ट होगये। मेरा जन्म आज सफल हुआ। आज मैं भगवान् श्रीकृष्ण के उन चरण-कमलो में प्रत्यक्ष नमस्कार करूंगा, जो बडे-बडे योगियों के लिये भी मात्र ध्यान करने की ही वस्तु है।

अजामेळ [अजामिल] २१२

अजामिल एक सदाचारी ब्राह्मण था। उसने अपने माता-पिता और स्त्री को त्याग कर एक शूद्रा से प्रेम कर लिया था जिससे उसको दस पुत्र हुए थे। इनमें से एक का नाम नारायण था जिसके ऊपर इसका सबसे अधिक प्रेम था। बार बार नारायण कहते-कहते अजामिल की वृत्तियों में अंतर पड़ने लगा और उसे ज्ञान होने लगा। उसने सोचा, अन्य अभिप्राय से उसका नाम लेने का यह फल है तो भक्ति पूर्वक नारायण की सेवा करने का कितना फल होगा। यह सोच कर वह हरिद्वार चला गया और वहां गंगा के किनारे बैठ कर अनन्य चित्त से भगवद्भजन में अपनी शेष आयु को बिताया जिससे अजामिल को वैकुण्ठ की प्राप्ति हुई।

अठासी हजार रिषि [अठासी हजार ऋषि] १५१

अठासी सहस्र ऋषियों का समूह जो नैमिषारण्य तीर्थ में निवास करता था। सूत मुनि ने यहीं इन ऋषियों को महाभारत की कथा सुनाई थी। ऋग्वेद प्रातिशाख्य के रचयिता शौनक ऋषि इस पुण्याश्रम के कुलपति थे।

अठार पुराण [अठारह पुराण] ६५

वेदव्यास प्रणीत अठारह पुराण ये हैं– (१) विष्णु (२) पद्म (३) ब्रह्म (४) शिव (५) भागवत (६) नारद, (७) मार्कण्डेय, (८) अग्नि (९) ब्रह्मवैवर्त (१) लिंग (११) वराह (१२) स्कन्द (१३) वामन (१४) कूर्म (१५) मत्स्य (१६) गरुड़ (१७) ब्रह्माण्ड और (१८) भविष्य।

अत्रि २४४

अत्रि महर्षि ब्रह्मा के मानस पुत्रों और सप्तर्षियों में से एक हैं। कर्दम प्रजापति की कन्या अनसूया इनकी पत्नी थी। महर्षि दुर्वासा और चन्द्रमा इनके पुत्र थे। दत्तात्रेय भी इन्हीं के पुत्र थे। ये अनेक वैदिक ऋचाओं के कर्त्ता और धर्मशास्त्र प्रवर्तक हैं। इनका बनाया हुआ धर्मशास्त्र ग्रंथ 'अत्रि संहिता' के नाम से प्रसिद्ध है।

आर्ष-वाणी

> आनृशंस्यं क्षमा सत्यमहिंसा दानमार्जवम्।
> प्रीतिः प्रसादो माधुर्यं मार्दवं च यमा दश॥
> शौचमिज्या तपो दानं स्वाध्यायोपस्थनिग्रहः।
> व्रतमौनोपवासं च स्नानं च नियमा दश॥

(अत्रिस्मृति ४८, ४९)

दया, क्षमा, सत्य, अहिंसा, दान, नम्रता, प्रीति, कृपा, मधुर वाणी, और कोमलता— ये दश यम कहलाते हैं।

पवित्रता, यज्ञ, तप, दान, स्वाध्याय, जननेन्द्रिय का निग्रह, व्रत, मौन, उपवास और स्नान— ये दश नियम कहलाते हैं।

अमरीस [अम्बरीष] ५२

वंश के प्रवर्तक महाराज नभीरथ के प्रपौत्र अंबरीष बड़े पराक्रमी और उच्च कोटि के विष्णु भक्त थे। राज्य का सारा भार अपने सेवकों को सौंपकर वे अपना अधिकांश समय हरि भजन में ही व्यतीत करते थे।

व्रत का पारण द्वादशी समाप्त होने के पूर्व कर लेने के कारण विशेष धार्मिक कृत्य में लगे हुए आमंत्रित महर्षि दुर्वासा ने क्रोधित होकर अंबरीष को मारने के लिये अपनी जटा में से कृत्या नाम की राक्षसी को उत्पन्न किया। अंबरीष को मार देने के पूर्व ही भगवान के सुदर्शनचक्र ने राक्षसी को मार दिया। अकारण अपने भक्त को सताने के कारण वह चक्र महर्षि के पीछे पड़ा। महर्षि भाग कर भगवान् विष्णु की शरण में गये। महर्षि का उग्र क्रोध सदैव के लिये शांत कर देने की इच्छा से भगवान् ने इन्हें अंबरीष से ही क्षमा याचना करके इस आपत्ति से निवृत्ति पाने का एक मात्र उपाय बतलाया। भयभीत ऋषि तब अंबरीष की शरण आये। भक्तराज ने भगवान् और चक्र से निवेदन करके महर्षि को संकट-मुक्त किया।

भक्त-वाणी

विप्रस्य चास्मत्कुलदैवहेतवे ।
विधेहि भद्रं तदनुग्रहो हि नः ॥

(अम्बरीष श्रीमद्भागवत)

प्रभो ! हमारे कुल के हित के लिये ही आप महर्षि दुर्वासाजी का कल्याण करने की कृपा कर दीजिये। हमारे ऊपर आपका यह महान् अनुग्रह होगा।

भक्त-महिमा

अहो अनन्त दासानं महत्त्वं दृष्टमद्य मे ।
कृतागसोऽपि यद्राजन् मङ्गलानि समीहते ।।
(महर्षि दुर्वासा : श्री मद्भागवत ।)

महर्षि दुर्वासा भक्त अम्बरीष के प्रति कह रहे हैं—

आज मैं धन्य हूं । भगवान् के प्रेमी भक्तों के महत्त्व को आज मैंने देखा । राजन् ! मैंने आपका अपराध किया, फिर भी आप मेरे लिये मंगल-कामना ही कर रहे हैं । राजन् ! तुम धन्य हो ।

अरज्जुण [अर्जुन] २४६ दे० पांडव

धर्म-वीर की वाणी

यज्जीवितं चाचिरांशुसमानं क्षणभंगुरम् ।
तच्चेद्धर्मकृते याति यातु दोषोऽस्ति को ननु ।।
जीवितं च धनं दारा पुत्राः क्षेत्र गृहाणि च ।
याति येषां धर्मकृते त एव भुवि मानवाः ।।

अर्जुन कहते हैं—

जीवन बिजली के प्रकाश के समान क्षण भंगुर है । वह यदि धर्म-पालन के लिये नष्ट हो जाता है, तो हो जाय, इसमे क्या दोष है ? जिनके जीवन, धन, स्त्री, पुत्र, यश और घर धर्म के काम में चले जाते हैं, वे ही इस पृथ्वी पर मनुष्य कहलाने के अधिकारी है ।

अवतार ८६,८७

जिसका शरीर अपने अदृष्ट से बंधा हुआ नहीं होता है और न वह पंच भूतों से ही बना हुआ होता है तथापि वह साधुजनों के लिये सुख का हेतु और असाधुजनों के लिये दुःख का हेतु होता है इस प्रकार का शरीर धारण करना अवतार कहा जाता है।

स्वादृष्टानधीनत्वे सत्य भौतिक शरीरत्वे
सति साध्वसाधु सुख दुःख हेतुत्वम्।

अष्टावक्र [अष्टावक्र] २४५

महर्षि उद्दालक ने अपने शिष्य कहोड़ को अपनी कन्या सुजाता ब्याही थी। सुजाता जब गर्भवती थी तो गर्भस्थ बालक ने समस्त वेद और शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। एक दिन पिता जब वेद-पाठ कर रहा था तब गर्भस्थ बालक ने कहा कि मैंने आपकी कृपा से गर्भ में ही चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है और प्राप्त ज्ञान के आधार से मैं देखता हूं कि आप वेद-पाठ अशुद्ध कर रहे हैं। महर्षि कहोड़ को अपने शिष्यों के सामने इस प्रकार अपमानित होने की बात सुनकर क्रोध आगया और गर्भस्थ शिशु को शाप दे दिया कि तुमने मेरा अपमान किया है इसलिये तुम्हारा शरीर टेढ़ा-मेढ़ा हो जायेगा। बालक का जब जन्म हुआ तो वह आठ जगह से टेढ़ा था। अतः उसका नाम अष्टावक्र रखा गया।

अष्टावक्र बहुत तीक्ष्ण-बुद्धि ज्ञानी और पण्डित थे। बाल्यावस्था में ही इन्होंने जनक की सभा के राजपंडित को शास्त्रार्थ में

हराकर अपने पिता का जीवनोद्धार किया था, जो उक्त पद्धति से शास्त्रार्थ में पराजित होजाने के कारण जल में डुबा दिये गये थे। अपार सम्पत्ति के साथ जब अष्टावक्र अपने पिता को लेकर घर आरहे थे तो मार्ग में उन्होंने अपने पिता की आज्ञा से समगा नदी में ज्यों ही स्नान किया तो उनके शरीर की वक्रता मिट गई।

'अष्टावक्र संहिता' में इसी शास्त्रार्थ के प्रश्नोत्तर संगृहीत हैं।

आर्ष-वाणी

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यजे।
क्षमार्जवदयाशौच सत्य पीयूषवत् पिबे.॥

(अष्टावक्र गीता)

मनुष्य! यदि तुझे मुक्ति की इच्छा है तो विषयों को विष के समान त्याग दे और क्षमा, सरलता, दया, पवित्रता और सत्य को अमृत के समान ग्रहण कर।

अहल्या २५४

अहल्या ब्रह्मा की मानस पुत्री और गौतम ऋषि की पत्नी थी। पंच महासतियों में ये सर्वोच्च महासती मानी जाती है। ब्रह्मा ने अहल्या की सृष्टि त्रिलोक की सुन्दरतम वस्तुओं का सार लेकर की थी। देवराज इन्द्र ने इस पर आसक्त होकर चन्द्रमा की सहायता से गौतम के कपट वेश से इनके साथ संभोग किया। महर्षि गौतम को जब यह भेद मालूम हुआ तो उन्होंने दोनों को शाप दिया, जिससे इन्द्र का शरीर [illegible]

पाषाणमयी होगई। इसीलिये इनका एक नाम पाषाणी भी प्रसिद्ध है। देवताओं के अनुनय से इन्द्र के शाप का निराकरण हुआ जिससे इन्द्र की सहस्र योनियां सहस्र नेत्रों में परिवर्तित होगई और मेष का पुंसत्व प्राप्त हुआ। तभी से इन्द्र को सहस्राक्ष और मेषवृषण भी कहा जाता है। अहल्या के बहुत पश्चाताप करने पर ऋषि ने यह निराकरण किया कि त्रेता में भगवान राम के चरणों का स्पर्श होने पर इसका उद्धार होगा। समय आने पर जब राम विश्वामित्र के साथ जनकपुर जा रहे थे उन्होंने अपनी चरणरज के स्पर्श से अहल्या का उद्धार किया। अहल्या अपना पूर्व रूप पाकर पतिलोक को चली गई।

पश्चाताप-वाणी

मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा
परम अनुग्रह मैं माना।
देखेउँ भरि लोचन हरि भव मोचन
इहइ लाभ संकर जाना॥

(रामचरित मानस)

अहि-वारण १०३

गरुड़ के भय से रमणद्वीप से आकर यमुना के एक ह्रद में रहने वाला भयंकर विषधर। इसके विष से आसपास का वातावरण और यमुना का जल विषमय होगया था जिसके कारण कोई प्राणी उधर जा नहीं सकता था। एक बार एक ग्वाला और उसकी गायें भूल से उधर चली गई और वहां पानी पीलिया जिससे वे तत्काल ही

मर गई। भगवान् श्रीकृष्ण उस समय अपने ग्वाल-सखाओ के साथ गेंद खेल रहे थे। गेंद जमुना में पड़ गई। गायो के प्राण रक्षाथ गेंद के मिस से भगवान् श्रीकृष्ण उस विषमय जल में कूद पड़े और उस द्रह मे इतने गहरे नीचे उतर गये जहा कालिय-नाग छिप रहा था। अपनी अद्भुत शक्ति से उसको पकड़ कर उसे चारों ओर घुमाकर खूब हैरान किया। तव इसकी स्त्रियो ने आकर नाग के जीवनदान की प्रार्थना की। भगवान् ने दया करके इस शर्त पर उसे जीवित रखना स्वीकार किया कि (१) मृत गायो और ग्वालो को अपना विष हरण करके जीवित करदे, (२) यमुना का जल शुद्ध करदे और (३) यहां से पुन रमण द्वीप को चला जाय। कालिय के यह सब मान लेने पर श्रीकृष्ण ने उसे अपने स्थान जीवित जाने दिया।

राजस्थानी साहित्य मे भी 'नाग-दमण' बहुत उच्च कोटि की रचना साया भूला द्वारा निर्मित है।[1]

अहीस [अहीश] १३७

कश्यप ऋषि की स्त्री कद्रू के पेट से उत्पन्न शेषनाग। शेषनाग के सहस्र फण हैं और निरतर पाताल मे रहकर अपने फणो पर पृथ्वी को थामे हुए हैं। ये ज्ञान के अधिष्ठाता हैं और गर्ग ऋषि को ज्योतिष विद्या की शिक्षा दी थी। इनकी एक कला और एक रूप क्षीर-सागर मे स्थित है। जिस पर विष्णु भगवान एक कला रूप अवतार से सदा शयन किये रहते हैं।

लक्ष्मण और बलराम दोनों शेष के अवतार हैं।

---

१ इस ग्रथ का सम्पादन भी मेरे सम्पादनाधीन है और शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

आतमराम, आतम, आतमा [आत्माराम, आत्मा] २७९, २८१, ३२४, ३२५

यह जो नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव और ब्रह्म का रूप है। सत्य है चेतन है और आनन्द स्वरूप है एवं अहं (मैं) से सर्वविद ज्ञान का विषय है।

सर्व देहेषु पूर्ण आत्मा।
अहं प्रत्यय विषय आत्मा।

आलम, अलम्म [आलम] १३२, १५४, २८३

'आलम शब्द का अर्थ साधारणतया 'संसार' या 'जनसमूह' होता है। पर हरिरस में यह शब्द 'ईश्वर' और 'संसार' दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। ईश्वर का 'आलम' पर्याय राजस्थानी (डिंगल) जन-साहित्य की एक विशेष बात है और इस अर्थ में प्रायः रूढ़ होगया है। ईसरदासजी के अतिरिक्त राजस्थान के अनेक भक्त-कवियों ने अपने ग्रंथों में इस शब्द को ईश्वर अर्थ में प्रयुक्त किया है। पीरदान लालस द्वारा रचित परमेश्वर-पुराण गुण आलम-आराध, गुण ग्यान चरित्र और गुण पारिख-पहार आदि अनेक डिंगल ग्रंथ साहित्य के भक्ति-परक ग्रंथों में इस शब्द का 'ईश्वर' के अर्थ में जम-कर व्यवहार हुआ है[1]।

---

१ डिंगल-साहित्य में आलम शब्द का अर्थ— बादशाह या नवाब भी होता है। वचनिका-चौपाई आदि कई राजस्थानी ग्रंथों में इस अर्थ में भी इसका प्रयोग हुआ है।

'आलम' वा 'आलमजी' मारवाड के मालानी प्रान्त के एक प्रसिद्ध लोक-देवता हैं। इनके सबंध में कई प्रकार की दन्त-कथाएं प्रचलित हैं। मालानी प्रान्त के धोरीमना[२] गांव के पास 'आलमजी रो भाखर' गुडा (गुढा = राडधरा) गांव के पास 'आलमजी रो धोरो', नामक टीवा और 'आलमपुरा' गाव आलमजी के नाम पर इस प्रान्त मे प्रसिद्ध हैं। इन स्थानो पर आलमजी के मदिर, मढ़ी (मठ) और थान बने हुए हैं। आलमजी जैतमालोत राठोड राजपूत कहे जाते हैं। ये अलक्ष परब्रह्म की निर्गुण उपासना करने वाले बडे शूर-वीर और भक्त राजपूत थे। प्रति भादो शु० २ और माघ शु० २ को उक्त स्थानो पर इनके नाम से बडे मेले लगते हैं। आलमजी के बाद भी इन स्थानो पर कई सिद्ध-महात्मा होगये हैं। आलमजी के समय मे यहा दूर-दूर के भक्त और साधुजन इनके दर्शनार्थ आया करते थे। कहा जाता है कि रावळ मल्लीनाथजी और उनकी रानी रूपादेजी भी यहां आया करते थे[३]। रूपादेजी के दांतुनो से धोरे पर

२- धोरीमना गुडा से २४ मील और गुडा, बालोतरा से ३६ मील दूर है। आलमपुरा गुडा से डेढ मील और आलमजी रो धोरो एक मील आलमपुरा के मार्ग में पडता है।

३- रावल मल्लीनाथ और उनकी रानी रूपांदे दोनो बडे सिद्ध-पुरुष हुए हैं। मल्लीनाथ के नाम से ही मारवाड के इस प्रान्त का नाम 'मालानी' प्रसिद्ध हुआ। बालोतरा से १० मील पश्चिम में लूनी नदी पर तिलवाडा गाव के सामने के तट पर थान गाव के पास मल्लीनाथ का बडा समाधि-मदिर बना हुआ है। थोडी दूर मालाजाल गाव मे रूपादे का समाधि-मदिर भी बना हुआ है। प्रति चैत्र कृ० ११ से चैत्र शु० ११ तक मल्लीनाथजी के नाम पर 'चैत्री रो मेळो' नामक बहुत प्रसिद्ध व्यापारी मेला लगता है। भक्तवर ईसरदासजी का भादरेस गाव भी इसी मालानी प्रान्त मे है।

लगे हुए दो जाल-वृक्ष यहाँ खूब प्रसिद्ध हैं और उन्हें पवित्र माना जाकर उनकी पूजा की जाती है। मालमजी के परिचय-प्रभाव से इन स्थानों के कूओं का पानी मीठा बना रहता है जब कि आस पास का पानी मीठा नहीं है। घोड़ों की नसल-सुधार के लिये यह 'डांमी' नामक धोरा तो जगत् प्रसिद्ध है और इसीके कारण मालानी के घोड़े प्रसिद्ध हैं। ऐसी मान्यता है कि इस धोरे पर पैदा हुए घोड़े बढ़िया नसल के होते हैं। घोड़ी के ठाण देने के समय[४] उसे इस धोरे पर ले जाते हैं और बछड़ा पैदा होने पर उसके तमाम शरीर में धोरे की रेती मल दी जाती है। घोड़ी को धोरे पर ले जाना संभव नहीं होने पर वहाँ की रेती लाकर घुड़शाला में बिछा दी जाती है। इस पर ये घोड़ों की इस नसल का नाम भी 'डांमी नसल रो घोड़ो' कहा जाता है। मालमजी और इस धोरे के महात्म्य के सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है—

धर डांमी मालम धणी परगट लूणी पास
लिखियो ज्यांनै लाभसी राडधरो रहवास

(जहाँ की धरा पर डांमी नामक धोरा स्थित है मालमजी जहाँ के स्वामी हैं और जिसके पास में होकर प्रवाह लूनी नदी बेग से बह रही है ऐसा राडधरा प्रदेश जिनके भाग्य में लिखा होता है उन्हीं भाग्यशालियों का यहाँ निवास होता है।)

यहाँ मतवर ईसरदासजी के संबंध में भी एक लोक-कथा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि एक समय यहाँ ईसरदासजी भी आये

---

४ 'ठांण देणो' राजस्थानी का एक मुहावरा है जिसका अर्थ 'घोड़ी द्वारा बच्चे को जन्म देना' होता है।

थे। वहां पथिकों को पीने के लिये पानी का बहुत कष्ट था। उन्होंने भगवान से इस कष्ट के निवारणार्थ प्रार्थना की। भगवान ने उन्हें स्वप्न मे कहा कि तुम उस स्थान पर एक कुंआ खुदवा दो, और तुम ही वहा रहकर पथिको को पानी पिलाने की सेवा करना स्वीकार करो तो उसमें मीठा पानी निकल आयेगा। वहां आलमजी की सत्सग भी तुम्हे मिलती रहेगी। ईसरदासजी ने ऐसा ही किया। वहा एक झोंपडी मे भगवान् का सुमिरण करते हुए रहने लगे और उसीसे सलग्न एक प्याऊ लगवा दी और राहगीरो को पानी पिलाने की निर्लोभ सेवा करने लगे। पानी के साथ थकान दूर करने के लिये आश्रय और भगवान के प्रसाद के रूप में एक खोपरा (सूखे नारियल का गोला) प्रत्येक पथिक को देने की ईसरदासजी सेवा करने लगे। इस प्रकार ईसरदासजी वहां कई वर्ष तक पथिक सेवा करते रहे। एक दिन वहा के राजपूतों आदि ने निर्लोभ सेवा करने की बात को निरा ढोंग समझ कर रात के समय जब ईसरदासजी सो रहे थे, इनकी झोपडी में घुसकर खोपरो के थेलों को उठाकर ले आने की घृणित चेष्टा की। अदर जाकर वे खोपरों के बोरों को उठा लाये। प्रात काल होते ही उन्होने थेलो को खोला तो सभी मे खोपरो की जगह उन्हें कंडे मिले। उन्हे बडा आश्चय हुआ और भक्त के साथ दुर्व्यवहार करने के कारण पश्चाताप हुआ। इधर प्रात काल होते ही रात को विश्राम किये हुए पथिकगण जब जाने लगे तो ईसरदासजी उन्हें खोपरे बांटने के लिये बोरों में से खोपरे लेने गये, तो वहां बोरे ही नदारद। ईसरदासजी को उस समय बडा क्रोध आया और वे यह कहकर—

लगे हुए दो जाल-वृक्ष यहां खूब प्रसिद्ध हैं और उन्हें पवित्र माना जाकर उनकी पूजा की जाती है। मालमजी के परिचय-प्रभाव से इन स्थानों के कुँओं का पानी मीठा बना रहता है जब कि आस-पास का पानी मीठा नहीं है। घोड़ों की नसल-सुधार के लिये यह डांगी नामक धोरा तो जगत्-प्रसिद्ध है और इसीके कारण मालाणी के घोड़े प्रसिद्ध हैं। ऐसी मान्यता है कि इस धोरे पर पैदा हुए घोड़े बढ़िया नसल के होते हैं। घोड़ी के ठाण देने के समय४ उसे इस धोरे पर ले जाते हैं और बछड़ा पैदा होने पर उसके तमाम शरीर में धोरे की रेती मल दी जाती है। घोड़ी को धोरे पर ले जाना संभव नहीं होने पर यहां की रेती लाकर घुड़साला में बिछा दी जाती है। इस पर से घोड़ों की इस नसल का नाम भी 'डांगी नसल रो घोड़ो' कहा जाता है। मालमजी और इस धोरे के महात्म्य के सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है—

धर डांगी मालम धणी परगट लूणी पास
लिखियो ज्यांनै लाभसी राड़धरो रहवास

(जहां की धरा पर डांगी नामक धोरा स्थित है, मालमजी जहां के स्वामी हैं और जिसके पास में होकर प्रगट लूनी नदी बेग से बह रही है ऐसा राड़धरा प्रदेश जिनके भाग्य में लिखा होता है उन्हीं भाग्यशालियों का यहां निवास होता है।)

यहां भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में भी एक लोक-कथा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि एक समय यहां ईसरदासजी भी आये

---

४ 'ठांण देणो' राजस्थानी का एक मुहावरा है जिसका अर्थ 'घोड़ी द्वारा बच्चे को जन्म देना' होता है।

इँडज्ज [ग्रंडज] २६९

जीवों की उत्पत्ति के (ग्रडज, स्वेदज, जरायुज ग्रोर उद्भिज) चार भेदो में से एक। पक्षी, साँप, मछली, छिपकली, गोह, गिरगट ग्रोर बिसखपरा ग्रादि जीव ग्रण्डे से उत्पन्न होते हैं ग्रतः ये ग्रण्डज कहलाते हैं।

उग्रसेन ४५

उग्रसेन यदुवंशी राजा ग्राहुक के पुत्र ग्रोर कंस के पिता थे। इनके नो पुत्र तथा पाच कन्याएँ थी। सबसे ज्येष्ठ पुत्र कस ने ग्रपने श्वसुर जरासध की सहायता से उग्रसेन को राज-च्युत कर कारागार मे डाल दिया ग्रोर स्वय राजा बन बैठा। श्रीकृष्ण ने कस को मार कर उग्रसेन को पुन राजा बना दिया था।

उत्तरा ४९

यह राजा विराट की पुत्री ग्रोर महारथी ग्रर्जुन के पुत्र ग्रभिमन्यु की पत्नी थी। महाभारत के युद्ध में ग्रभिमन्यु की मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। युद्ध के ग्रत में ग्रर्जुन ने ग्रश्वत्थामा के सिर की मणि काट ली थी। ग्रश्वत्थामा ने क्रुद्ध होकर ग्रर्जुन का वश-लोप करने के लिये उत्तरा के गर्भ पर इषिकास्त्र का प्रयोग किया जिससे गर्भस्थ बालक परीक्षित मृतावस्था में उत्पन्न हुग्रा। श्रीकृष्ण ने सजीवनी मत्र के प्रभाव से परीक्षित को जीवित कर दिया। महाभारत के बाद परीक्षित चक्रवर्ती सम्राट् हुए।

राजा जोसा परखा जोगी छह जोतां रो छाप
मगरै मत देखाइजे राइवरो यूं नाम

वहां से रुष्ट होकर रवाना होगये। पनिहारी ने झोंपड़ी सूनी देखकर अपने हाथों से ही पानी खींच कर निकाला परन्तु अब तो वह पानी इतना खारा होगया था कि प्राणी-मात्र के पीने योग्य नहीं रह गया था। अब सर्वत्र खलबली मच गई। अपराधी और अन्य बहुत से लोग इकट्ठे होकर भक्तराज का पता लगाकर उनके पास पहुँचे और अपनी भूल के लिये क्षमादान चाहते हुए वापिस लौटने की प्रार्थना की। भक्तराज ने कहा कि वहां मैं अब स्थाई तौर से तो नहीं रह सकूँगा। कुँएं के आस पास का अमुक क्षेत्र सदा के लिये गोचर भूमि के लिये छोड़ दो। उसमें किसी का स्वामीत्व न रहे। उसमें से लकड़ी घास न काटा जाय और न उसमें खेती की जाय। इतना कर देने पर कुँएं का पानी मीठा हो जायेगा और उस पर प्याऊ का प्रबन्ध तुम्हें करना होगा। इस शर्त पर ईसरदासजी वापिस लौट आये और कुछ समय वहां रहकर अपने स्थान को चले गये[१]।

---

१ भालमजी और भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में उपरोक्त सूचनाएँ श्री रामकर्ण पुत्र श्री जोग एम-एल श्री दूदावीरोत बालोतरा श्री भींवराज रामचन्द्रजी भलोल (भालानी) और हमारे अनुज श्री जसरामपाल साकरिया जोधपुर से हमें प्राप्त हुई हैं। अतः हम इनके बड़े आभारी हैं।

—सम्पादक

इंडज्ज [अंडज] २६६

जीवो की उत्पत्ति के (अडज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदो में से एक। पक्षी, सांप, मछली, छिपकली, गोह, गिरगट और विसखपरा आदि जीव अण्डे से उत्पन्न होते हैं अतः ये अण्डज कहलाते हैं।

उग्रसेन ४५

उग्रसेन यदुवशी राजा आहुक के पुत्र और कस के पिता थे। इनके नो पुत्र तथा पांच कन्याएँ थी। सबसे ज्येष्ठ पुत्र कस ने अपने श्वसुर जरासध की सहायता से उग्रसेन को राज-च्युत कर कारागार मे डाल दिया और स्वय राजा बन बैठा। श्रीकृष्ण ने कस को मार कर उग्रसेन को पुन राजा बना दिया था।

उत्तरा ४६

यह राजा विराट की पुत्री और महारथी अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु की पत्नी थी। महाभारत के युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। युद्ध के अत में अर्जुन ने अश्वत्थामा के सिर की मणि काट ली थी। अश्वत्थामा ने क्रुद्ध होकर अर्जुन का वश-लोप करने के लिये उत्तरा के गर्भ पर इषिकास्त्र का प्रयोग किया जिससे गर्भस्थ बालक परीक्षित मृतावस्था में उत्पन्न हुआ। श्रीकृष्ण ने सजीवनी मन्त्र के प्रभाव से परीक्षित को जीवित कर दिया। महाभारत के बाद परीक्षित चक्रवर्ती सम्राट हुए।

अज्ञातवास के समय मत्स्य देशाधिपति विराट् के यहाँ बृहन्नला (बृहन्नडा) स्त्री के वेश में अर्जुन ने उत्तरा को नाच और नृत्य सिखाया था। पांडव जब प्रकट हो गये तो विराट् ने उत्तरा को अर्जुन से ब्याह देने की इच्छा प्रकट की। किन्तु अर्जुन ने इसे स्वीकार नहीं किया और कहा कि मैंने इसे शिक्षा दी है मेरे लिये तो यह पुत्री के समान है। तब विराट ने उसे अभिमन्यु के साथ ब्याह दी।

सवनिच्च [उद्भिज्ज] २६६

जीवों की उत्पत्ति के (अण्डज स्वेदज जरायुज और उद्भिज) चार भेदों में से एक। भूमि को भेदन कर निकलने वाले वृक्ष लता, पौधे आदि उद्भिज्ज कहलाते हैं।

ओंकार ८६, १८७

प्रार्थना वैदिक-मंत्र धार्मिक क्रिया तथा ग्रन्थ के प्रारम्भ में उच्चारण करने तथा लिखा जाने वाला 'अ' 'उ' और 'म्' इन तीनों अक्षरों से बना हुआ 'ॐ' शब्द। ये तीनों अक्षर ऋक् यजु और साम इन तीनों वेदों के सूचक हैं। उपनिषदों में इसे अध्यात्म शक्तिवान्, सर्व-भेद और मनन करने योग्य बताया है। ॐ का 'अ' विष्णु 'उ' शिव और 'म्' ब्रह्मा— इस प्रकार इन तीनों देवों की त्रिपुटी इस प्रणव-मंत्र में समावेश है।

ओधव [उद्धव] २४७

उद्धव श्रीकृष्ण के सखा, परामर्शदाता और परम भक्त थे। ये सदैव श्रीकृष्ण के समागम मे ही रहते, अत. दोनो मे अत्यन्त प्रेम था। श्रीकृष्ण गोकुल से मथुरा आगये तो नद यशोदा इनके वियोग से बहुत दुखी रहने लगे, उनको सान्त्वना देने और ज्ञान द्वारा वियोग-कष्ट का समाधान करने के लिये उद्धव को भेजा था। वियोग से दुखी गोपियों को भी अपने स्वरूप का बोध कराने के लिये उन्हें ज्ञानोपदेश करने का भगवान् ने उद्धवजी को आदेश दिया था। परन्तु गोपियो की अनन्य भक्ति के कारण उनसे परास्त होकर, परमात्म-स्वरूप मे लीन रहने वाले उद्धवजी साकार ब्रह्म श्रीकृष्ण की भक्ति मे रग जाते हैं और उनकी अतुल प्रेमाभक्ति के शिष्य बन जाते हैं।

भगवान अब शीघ्र ही निजधाम पधारने वाले हैं, ऐसा सुनकर उद्धवजी ने श्रीकृष्ण से प्रार्थना की कि मुझे आप अपने साथ लेते पधारें। श्रीकृष्ण ने उद्धव मे अनन्य भक्ति और ज्ञानाधिकार देखकर आत्मतत्व और ब्रह्मज्ञान का उपदेश देकर इन्हे शान्ति दी और बदरिकाश्रम मे जाकर रहने का आदेश दिया।

भक्त-वाणी

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णश ।
यासां हरिकथोद्गीत पुनाति भुवनत्रयम् ॥

(श्रीमद्भागवत)

भक्तराज उद्धव कह रहे हैं—

नन्द बाबा के व्रज मे रहने वाली गोपाङ्गनाओ की चरण-रज

को मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ उसे सिर पर चढ़ाता हूँ। अहा! इन गोपियों ने भगवान् श्रीकृष्ण की लीला-कथा के संबंध में जो कुछ गान किया है वह तीनों लोकों को पवित्र कर रहा है और सर्वदा करता रहेगा।

कंस ६४

यह मथुरा के राजा उग्रसेन का क्षेत्रज तथा दानवराज द्रुमिल का औरस पुत्र था। बड़े होकर कंस ने मगधराज जरासंध की अस्ति तथा प्राप्ति नाम की दो कन्याओं से विवाह किया था। अपने पितृव्य की पुत्री देवकी का विवाह इन्होंने वसुदेव के साथ किया था। जब वसुदेव देवकी से विवाह कर अपने घर जा रहे थे तो आकाश वाणी हुई कि देवकी के गर्भ से उत्पन्न होने वाला आठवां पुत्र तुम्हारा वध करेगा। कंस ने यह सुनकर वसुदेव-देवकी को कारागार में बंद कर दिया। इसके बाद देवकी की जितनी संतानें हुईं उन सभी को उसने मार डाला। आठवें गर्भ से भगवान् कृष्ण प्रकट हुए किन्तु वसुदेव उन्हें भगवान की माया से गोकुल में गोपराज नन्द के यहां रख आये। आगे बड़े होकर भगवान श्रीकृष्ण ने ही इसका वध किया।

कच्छप १३

भगवान् विष्णु का दूसरा अवतार। देवासुर संग्राम में जो वस्तुएं खो गई थीं उनकी प्राप्ति के लिए समुद्र-मंथन का आयोजन हुआ तो मथनी बनाये गये मंदराचल पर्वत को क्षीर सागर में धारण करने के लिए भगवान् विष्णु ने कच्छप का रूप धारण किया[1]।

---

१ सामुद्रिक जीव-विज्ञान का आविष्कार सर्वप्रथम भारत के आर्यों ने किया और उसका अनेक रूपों में अलंकृत वर्णन भी भारतीय आर्ष-ग्रन्थों में पाया जाना माना जाता है।

कणाद २४३

षट्-दर्शन के अन्तर्गत वैशेषिक दर्शन के निर्माता कणाद एक प्रसिद्ध और प्राचीन ऋषियो मे से हैं। दर्शन में परमाणुवाद का प्रचार सर्व प्रथम इन्होने ही किया है।

कन्ह, कान्ह, किसन, क्रिसन, क्रिसन्न [कृष्ण] १३, २६, ४७, ६३, २१८, २५६, २६१, ३१६, ३४३

विश्व-धर्म के रूप मे कर्म और ज्ञान की महान् गूढ गुत्थियों को सुलझाकर एक मात्र ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता के रूप मे अपूर्व, अद्वितीय और सर्वोपरि ज्ञान को ससार के सम्मुख सर्व प्रथम प्रस्तुत करने वाले और अनेक अद्भुत लीलाओं के लीलावतार वसुदेव और देवकी के आठवें पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण।

कौरव पाण्डवों के महाभारत युद्ध में श्रीकृष्ण महारथी अर्जुन के सारथी बने और भीष्म, द्रोण और कर्ण आदि महारथियो के सम्मुख पाण्डवो की विजय के रूप में अपूर्व राजनीति और कुशलता के साथ युद्ध का सम्पादन किया। प्रजा को अनेक-विध कष्ट पहुँचाने वाले अनेक राजाओं और दुष्टों का नाश करके ससार में शान्ति स्थापित की। श्रीकृष्ण के ऐसे अनेक सुकृत्य और अद्भुत और अलौकिक कृत्य हैं जिनका भागवत आदि पुराण ग्रथो मे विस्तार से वर्णन किया हुआ है।

राजस्थानी साहित्य मे भी भक्त-कवियों द्वारा रचे हुए 'नागदमण, गजमोख, किसनजी री वेल और किसन रुकमणी री वेलि एव गीता की राजस्थानी टीकाएँ आदि अनेक उच्च कोटि के ग्रन्थ श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में प्राप्त हैं।

कपिल, कपिल्ल, कपिलेसर [कपिल, कपिलेश्वर]
१२, ६२, २४३

सांख्य-दर्शन का प्रवर्तक विष्णु का पाँचवाँ अवतार। भगवान् विष्णु ने कर्दम मुनि की पत्नी देवहूती की तपस्या से प्रसन्न होकर उसकी इच्छानुसार स्वयं उसके गर्भ में आकर अवतार लिया था।

आर्ष-वाणी :-

भवेदपि खलस्य श्रीः सैव लोक विनाशिनी।
यथा शिखाग्नेः पवनः पन्नगस्य पयो यथा॥

(भगवान् कपिलदेव)

दुष्ट के पास लक्ष्मी हो तो वह लोक का नाश करने वाली ही होती है। जैसे वायु अग्नि की ज्वाला को बढ़ाने में सहायक होता है और दूध साँप के विष को बढ़ाने में कारण होता है वैसे ही दुष्ट की लक्ष्मी उसकी दुष्टता को बढ़ा देती है।

कण्ण, कन्न [कर्ण] ८१, ३९८

यह कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न सूर्य के पुत्र हैं। कुन्ती जब कुँवारी थी तब उसने ऋषि दुर्वासा द्वारा बताये मन्त्र-बल द्वारा सूर्य का आह्वान किया। तब स्वयं धनुष बाण कुण्डल और कवच सहित कर्ण का जन्म हुआ। कुन्ती ने लोक-लाज के भय से इन्हें गंगा नदी में बहा दिया। धृतराष्ट्र के सूत अधिरथ ने उठाकर अपनी स्त्री राधा को पालन-पोषणार्थ सौंप दिया। इसीसे यह सूतपुत्र तथा राधेय कहलाये। कर्ण को शस्त्र-विद्या की शिक्षा द्रोणाचार्य ने दी थी।

किन्तु इनकी उत्पत्ति के विषय मे सन्देह होने के कारण उन्होने इन्हें ब्रह्मास्त्र का प्रयोग नही सिखाया था। तब ये भगवान् परशुराम के पास गये और अपने को ब्राह्मण बतलाकर शस्त्र-विद्या सीखने लगे। परन्तु परशुराम को ज्ञात होगया कि यह ब्राह्मण नही है तो उन्होने श्राप दे दिया कि 'जिस समय तुम्हे इस विद्या की विशेष आवश्यकता होगी उसी समय तुम इसे भूल जाओगे।" इनकी दुर्योधन से बचपन ही मे विशेष मित्रता होगई थी। दुर्योधन ने इन्हें अग देश का अधिपति बना दिया था। मत्स्य-वेध कर देने पर भी द्रौपदी ने सूतपुत्र होने के कारण इनके साथ व्याह करना अस्वीकार कर दिया। सूतपुत्र होने ही के कारण अर्जुन इन्हे हेय दृष्टि से देखते थे। भीष्म भी इसी कारण इन्हे सूत ही समझते थे।

कुन्ती के द्वारा अपने जन्म का वृत्तान्त जानकर तथा पाण्डव पक्ष मे आजाने की उसकी प्रार्थना को इन्होंने अस्वीकार कर दिया। इतना वचन दे दिया कि तुम्हारे पाचो पुत्र कायम रहेगे। मेरा वैर अर्जुन से है अत हम दोनो में से कोई जीवित रह सकेगा। भीष्म तथा द्रोण के अनन्तर कर्ण ही महाभारत युद्ध के सेनापति बने थे। तीन दिन युद्ध का सचालन करने के बाद अर्जुन के हाथों इनका वध हुआ। कर्ण दानियो मे सर्वाग्रणी कहे जाते हैं। कोई भी याचक उनसे जो कुछ भी मांगता था, कर्ण वही उसे दे देता था। इन्द्र के याचना करने पर अपने शरीर से लगे कवच और कुण्डल तोड कर उन्हें दान में दे दिया था। तभी से इनका नाम कर्ण पडा। पहले इनका नाम वसुषेण था। एक बार भगवान् कृष्ण ने ब्राह्मण वेश में

कर्ण के पुत्र के मांस की याचना की। कर्ण ने प्रसन्नता से उसकी इच्छा पूर्ण की परन्तु श्रीकृष्ण ने संजीवनी-मंत्र द्वारा उसे जीवित कर दिया। कर्ण महा-दानी था। नित्य प्रातःकाल एक प्रहर तक किसी भी याचक को मनवांछित दान देते रहने की अपनी प्रतिज्ञा अनेक कष्टों को सहते हुए भी दृढ़ता से निभाते रहने के कारण उस प्रातःकाल की एक प्रहर का नाम 'कर्ण की वेला' के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान् श्रीकृष्ण कर्ण की दानशीलता और भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न थे। इसीलिये इसका दाह-संस्कार भगवान् श्रीकृष्ण ने इन्हें अपने हाथों में रख कर किया था। अनन्य भक्ति और अद्वितीय दानशीलता के कारण पांचों पांडवों से भी अधिक भगवान की कृपा और स्नेह को भक्त गिरधरदासजी ने 'कर दाखियो करण्ण (११८)' द्वारा उक्त रूप की एक भव्य में प्रकट किया है।

करम, करम्म कम कम्म [कर्म] ४, ११, ५२, १२१, १५७, १७१, २२५, २६२, ३००, ३०३, ३०५, ३०६, ३०८ ३०९ ३११, ३२०

१ शुभ अथवा अशुभ क्रिया से उत्पन्न अदृष्ट। शुभाशुभ सूचक कर्म-जन्य अदृष्ट।

पूर्व जन्मों के कर्मों द्वारा संचित पुण्य-पाप जो इस जन्म के सुख-दुख के कारण माने जाते हैं संचित-कर्म।

२ शुभ अथवा अशुभ अदृष्ट को उत्पन्न करने वाला व्यापार। यह व्यापार— नित्य नैमित्तिक काम्य प्रायश्चित और निषिद्ध पांच प्रकार का होता है और इसी कारण कर्म के भी ये ही पांच प्रकार कहे गये हैं।

कर्म प्रधान विश्व करि राखा,
जो जस करहिं सो तस फल चाखा।
(गो० तुलसीदासजी)

कलकी, कळंकी [कल्कि] १३, ७१

कलियुग और उसके अत्याचारियो को नाश करके सतयुग का पुन आरम्भ करने के लिये भविष्य मे होने वाला भगवान् विष्णु का चौवीसवा अवतार ।

कल्प १३३

वेद के प्रधान छ अगो में से एक जिसमे यज्ञो, सस्कारों आदि धार्मिक कर्त्तव्यो की विधिया वताई गई हैं । यज्ञ में काम आनेवाले पात्रो को वनाने की विधियो का भी इसमें विधान है । श्रौत, आश्वलायन, कात्यायन, आपस्तव और गृह्यसूत्र आदि इसीके अन्तर्गत हैं । यह यजुर्वेद का श्राद्धकल्पात्मक परिशिष्ट भाग है ।

कागभुसड [काकभुशुंडि] १४८

भगवान् राम के वालरूप के एक अनन्य भक्त जो कौवे के रूप में रहते हैं । ये अमर हैं । पूर्व जन्म के ये ब्राह्मण थे, परन्तु लोमश ऋषि के शाप से कौवे की योनि प्राप्त हुई । ये प्रकाण्ड ज्ञानी हैं ।

भक्त-वाणी

पर उपकार वचन मन काया, सत सुभाउ सहज खगराया ।
सत सहहिं दुख परहित लागी, परदुख हेतु असत अभागी ।
संत उदय सतत सुखकारी, विस्व सुखद जिमि इन्दु तमारी ।
परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा, परनिंदा सम अघ न गरीसा ,
(काकभुशुण्डि : रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

कातकसांम [कार्त्तिकस्वामि] २३८

स्वामिकार्तिक महादेव के एक पुत्र हैं। छः कृतिकाओं से उत्पन्न होने के कारण इनका नाम कार्तिकेय प्रसिद्ध हुआ। इनके छः मुख और बारह हाथ होने के कारण इन्हें षण्मुख और षडानन भी कहते हैं। स्कन्द, गांगेय और अग्निभू भी इनके नाम हैं। ये देव-सेनापति हैं। इन्होंने तारकासुर का वध किया था।

काळजवण [कालयवन] ४७

यह महर्षि गार्ग्य का पुत्र था। बाल्यावस्था में अपुत्रक यवन राज ने इसका पालन किया था। उसके मरने पर यही उसका अधिकारी हुआ था। यह बहुत ही शीघ्र पराक्रमी राजाओं में गिना जाने लगा। जरासंध के साथ मिलकर इसने मथुरा पर चढ़ाई की। इससे यादव घबरा गये और श्रीकृष्ण की सलाह से मथुरा छोड़कर द्वारका चले गये। श्रीकृष्ण और कालयवन से युद्ध होने लगा। श्रीकृष्ण युद्ध क्षेत्र से भागकर हिमालय की गुहा में जहां मान्धाता का पुत्र मुचुकुन्द सोया हुआ था चले गये और चुपचाप उसके ऊपर अपना पीताम्बर डालकर उसकी खाट के नीचे छिप गये। कालयवन भी उनके पीछे २ वहां पहुँचा। उसने निद्रित मुचुकुन्द को श्रीकृष्ण समझा और पैर से ठोकर मारकर उठाने लगा। मुचुकुन्द उठा और ज्योंही उसने कालयवन की ओर दृष्टि की त्योंही वह भस्म हो गया।

कासप [कश्यप] ३४५

विख्यात प्रजापति महर्षि कश्यप ब्रह्मा के पौत्र और मरीचि के मानस पुत्र थे। ये सप्तर्षियो मे से एक हैं।

आर्ष-वाणी

> पुण्यस्य लोको मधुमान्घृतार्चि-
>
> हिरण्यज्योतिरमृतस्य नाभि ।
>
> तत्र प्रेत्य मोदते ब्रह्मचारी
>
> न तत्र मृत्युर्न जरा नोत दुःखम् ॥
>
> (महाभारत, शान्तिपर्व अ० ७३)

पुण्यात्माओं को प्राप्त होने वाला लोक मधुर सुख की खान और अमृत (मोक्ष) का केन्द्र होता है। वहा नित्य घृत के दीपक प्रकाश कर रहे हैं। उसमें सुवर्ण के समान प्रकाश फैला रहता है। वहां न तो वृद्धावस्था का प्रवेश है और न मृत्यु का। वहा किसी को किसी प्रकार का दुःख नही होता। ब्रह्मचारी लोग मृत्यु के पश्चात् ऐसे ही लोकों मे जाकर आनन्द को प्राप्त होते हैं।

किकेई [कैकेयी] ३७

कैकेयी महाराज कैकय की पुत्री तथा महाराज दशरथ की तृतीय रानी थी। यह अपने समय की अद्वितीय सुन्दरी थी। इन्हीं के गर्भ से भरत की उत्पत्ति हुई थी। एक बार देवासुर संग्राम में आहत हुए महाराज दशरथ की इन्होंने बड़ी सेवा-सुश्रूषा की थी जिससे प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें दो वरदान देने का वचन दिया था। राम का

राज्याभिषेक का अवसर निकट आने पर इन्होंने अपनी मंथरा नामक दासी के बहकावे में आकर राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास और भरत के लिए अयोध्या का राज्य ये दोनों वरदान रूप में मांग लिये। पिता के वचनों का पालन करने के लिये राम वन को चले गये। दशरथ ने उनके वियोग में प्राण त्याग दिये। भरत ने राज्य अंगीकार नहीं किया। कैकेयी को सभी प्रकार कुफल मिला।

कीट कीटभ [कैटभ] २०, ८७

मधु नामक दैत्य का भाई कैटभ। भगवान् विष्णु ने जब इन्हें मारा तो इनके शरीर के मेद से संपूर्ण पृथ्वी भर गई। तभी से पृथ्वी का नाम मेदिनी पड़ा।

कुंभ, कुंभेरण [कुम्भकरण] ४२,८०

विशालकाय कुंभकर्ण रावण का छोटा भाई था। उत्पन्न होते ही यह हजारों लोगों को खा गया। लोगों का हाहाकार सुनकर इन्द्र ने इस पर वज्र चलाया किन्तु इसने घोर गर्जना करके ऐरावत का ही दांत उखाड़ लिया और उसको इन्द्र के ऊपर दे मारा। देवता और लोगों की प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने शाप दे दिया कि यह सदा सोता ही रहे किन्तु रावण के प्रार्थना करने पर ब्रह्माजी ने यह कृपा की कि छः महीनों में एक दिन के लिये नींद खुल जायगी। राम रावण युद्ध के समय इसको जगाने के लिये इसके गले में बंधी रस्सी को एक हजार हाथियों से खिंचवाना पड़ा था एवं कर्णरंध्र और नासारंध्रों में पानी के नाले बहाये गये थे। जगने पर जब इसे मालूम हुआ कि रावण

ने सीता का हरण किया है तो इसे बडा क्षोभ हुआ और रावण को फटकारा तथा सीता को वापिस लौटा देने का आग्रह किया। किन्तु रावण की दलीलो ने इसे युद्ध के लिये उत्तेजित कर दिया। इसने बडा भयकर युद्ध किया। अत में श्रीराम के हाथो से इसका वध हुआ।

कुंभज २४३

अगस्त्य ऋषि का ही दूसरा नाम कुंभज है। ये ऋग्वेद की कई ऋचाओ के रचियता हैं। जन्म के समय अगूठे के बरावर लम्बे थे। देवासुर सग्राम के समय जब दानव सागर में जाकर छिप गये, तो ये सागर को ही पी गये। वनवास के समय राम अगस्त्य आश्रम मे गये थे। मुनिने राम को धनुप वाण आदि शस्त्र दिये थे।

आर्प-वाणी

सत्य तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रह ।
सर्वभूत दया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च ॥
दान तीर्थं दमस्तीर्थं सतोपस्तीर्थमुच्यते ।
ब्रह्मचर्यं पर तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता ॥
ज्ञान तीर्थं धृतिस्तीर्थं तपस्तीर्थमुदाहृतम् ।
तीर्थनामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनस परा ॥

(महर्षि अगस्त्य : स्कन्दपुराण)

कुब्ज्जा [कुब्जा] २५४

कंस की माल्यानुलेपन-वाहिनी एक दासी। श्री कृष्ण और बलराम अक्रूर के साथ कस के यहाँ यज्ञ मे आमन्त्रित होकर मथुरा आये, जब

कुब्जा को इन्होंने मार्ग में देखा जो कंस के यहां सुगन्ध-अनुलेपन ले जा रही थी। श्रीकृष्ण ने कुब्जा से अनुलेपन मांगा। कुब्जा ने बड़ी प्रसन्नता से उन्हें अनुलेपन दिया। श्री कृष्ण ने प्रसन्न होकर उसका कुबड़ापन दूर करके उसको एक सुन्दर युवती बना दिया। इसे कुबड़ी भी कहा जाता है।

कुरखेत कुरछेत [कुरुक्षेत्र] ४६, ३४९

एक अति प्राचीन तीर्थ। कुरु ने इस स्थान को सबसे पहले आविष्कृत किया था और इसी स्थान पर यज्ञ करके उसकी उन्नति की थी। कुरुक्षेत्र की सीमा के विषय में महाभारत में लिखा है कि दृषद्वती नदी के उत्तर और सरस्वती के दक्षिण में कुरुक्षेत्र है। इस तीर्थ का परिमाण बारह योजन है इसमें ३६९ तीर्थ विद्यमान हैं। महाभारत का युद्ध यहीं हुआ था। यह अम्बाला और दिल्ली के बीच में स्थित है। महाभारत में तरंतुक से अरंतुक और रामह्रद से मच कुक इनके बीच में आये हुए प्रदेश को कुरुक्षेत्र कहा गया है।

केदार ३४९

हिमालय में स्थित हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ स्थान। यहां भगवान शंकर का लिंगस्वरूप स्थापित है जो द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। केदारनाथ तीर्थ सागर तल से ११७७१ फीट ऊंची हिमालय की चोटी पर स्थित है। केदारनाथ पर्वत का सर्वोपरि दुर्गम भाग 'महापथ' तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। यह सदा बर्फ से ढका रहता है। वैशाख से कार्तिक मास तक भारत के सभी भागों से अनेकों यात्री केदारनाथ के दर्शनों को आते हैं।

केसि [केसी] ७३

यह एक राक्षस था। कंस की आज्ञा से यह एक घोडे का रूप धारण करके श्रीकृष्ण भगवान् का वध करने के लिए वृन्दावन गया परन्तु वहां वह भगवान् द्वारा मारा डाला गया।

कोयलाराणी [कोकिलारोहिणी] २

'कोयलाराणी' कोकिलारोहिणी का विकृत लोक-शब्द है। कोइलाराणी और कोहलाराणी पाठ भी कई प्रतियो मे मिलता है। सोराष्ट्र मे राजकोट से द्वारका जाने वाली पश्चिम रेलवे लाइन पर भाटिया स्टेशन से २१ मील पर 'श्री हर्षदमाता' का एक प्राचीन मदिर कोयल नामक मनोहर पहाडी पर बना हुआ है। पहाडी के नीचे तक समुद्र की एक पतली शाखा आ जाने से इसकी रमणीयता और भी बढ गई है। इस स्थान की एक बहुत प्रसिद्ध पौराणिक कथा है कि शखासुर नामक दैत्य के वध के निमित्त भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी कुलदेवी महाशक्ति जगदम्बा से सहायता की प्रार्थना की। महाशक्ति ने कोयल के रूप में उनके शस्त्र पर बैठकर साथ में चलने का वचन दिया। महामाया की कृपा से समस्त यादवी-सेना विना किसी नौका इत्यादि की सहायता के समुद्र को पार करती हुई इस स्थान पर आ पहुची। स्थान की रमणीयता पर मुग्ध होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने पर्वत शिखर पर महाशक्ति का एक सुन्दर मदिर निर्माण करवाया और अपनी आराधना के लिये महामाया की एक भव्य मूर्ति स्थापित की।

भगवती महामाया ने कोयल का रूप धारण किया था अतः पहाड़ी का नाम कोयल और भगवान् के नाम को सिद्ध कर देने के कारण देवी का नाम 'हरिसिद्धि' प्रसिद्ध हुआ। कालान्तर में हरिसिद्धि का 'हर्षद' और फिर कोयल पर्वत पर अवस्थित होने के कारण कोकलारानी (कोयलारांणी) के नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह स्थान सिद्ध-पीठ माना जाता है। श्री मद्भागवत में एक कथा है जिसमें लक्ष्मी का वाहन कोयल भी लिखा है।

महामाया आदिशक्ति के उपासक कोहल नाम के एक प्रख्यात ऋषि भी हुए हैं जिन्होंने सोमेश्वर से संगीत शास्त्र का अध्ययन किया था। कहा जाता है कि इन्होंने अपनी संगीत विद्या से भगवती को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया था। ऋषि की अनन्य उपासना के कारण देवी का नाम कोहल रानी के नामसे प्रसिद्ध होगया।

एक दूसरा स्थान जिला इन्दौर के भानुपुरा परगने में भानुपुरा से ८ मील दूर 'कोहला' ग्राम प्राचीन अवशेषों के लिये प्रसिद्ध है। कोहला में अनेक प्राचीन बड़े-बड़े और सुन्दर मन्दिर बने हुए हैं जिनमें कई देवी मन्दिर भी कहे जाते हैं। ऐसा सुना गया है कि कोहला रानी नाम के प्रसिद्ध मन्दिर के कारण गांव का नाम भी 'कोहला' प्रसिद्ध हुआ। डा. डी. सी. ओझा के भारतीय अनुशीलन' नामक ग्रन्थ में और प्रोग्रे स रिपोर्ट ऑफ दी आ. स. मध्य भारत १६२० में इस स्थान का उल्लेख हुआ है।

हरिरस की अनेक हस्तलिखित प्रतियों में 'कोहलारांणी' पाठ भी मिलता है। संभव है यह कोहल ऋषि अथवा कोहला ग्राम से

सबधित हो। पर हमारी अपनी मान्यता अनुसार शुद्ध पाठ 'कोयला-राणी' है और यह सौराष्ट्र के कोयल पर्वत से ही संबधित है। सौराष्ट्र, गुजरात, कच्छ और राजस्थान के पश्चिम और दक्षिणी प्रदेशों में अब भी इस देवी की बहुत मान्यता है। भक्तवर ईसरदासजी की आयु का अधिक काल सौराष्ट्र में ही बीता है और उन्होंने इसी देवी की आराधना मे यह छद कहा है।

पीरदान लालस कृत 'हिंगळाज रासो' में—

"कोयलागिर पाया धप धमाया, सब कीटग ते माराया।"

इसी देवी की आराधना मे आया है।

इसी देवी के महिमा-परक प्राचीन पदों मे 'माताजी री चरचा' नामक यह पद भी बहुत प्रसिद्ध है—

कोहलो परवत घू धळो रे लोय
जठै रमं सुरां री राय रे, जाओड़ा
ऊपर अब गाजियो रे लोय
दरसण द्यो म्हारी राय रे, जाओड़ा।

कोरम [कूर्म] ३११

दे० 'कच्छ'

कौरव ६६

चन्द्रवंशी राजा कुरु के वंशज धृतराष्ट्र के एक सौ पुत्र कौरव नाम से प्रसिद्ध हुए। पांडवों और कौरवों के महाभारत युद्ध में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन के रथ के सारथी बने थे। भगवान् श्री कृष्ण के परामर्शानुसार युद्ध करके कौरवों के ऊपर पांडवों ने विजय प्राप्त की थी।

खर दूषण [खर, दूषण] ३८

खर और दूषण दोनों भाई थे। रावण का राज्य गोदावरी तीरस्थ दण्डकारण्य तक विस्तृत था। राज्य के प्रान्त भाग की रक्षा करने के लिए खर और दूषण १४ हजार सेना लेकर दण्डकारण्य में रहा करते थे। शूर्पणखा की नाक लक्ष्मण द्वारा काट लिए जाने पर खर और दूषण ने राम पर आक्रमण किया। इस युद्ध में ये दोनों भाई श्रीराम द्वारा मारे गये।

गंगा १६०

भारत की एक अति पुण्यसलिला प्रसिद्ध नदी। प्राचीन काल से ही ऋषियों ने इस नदी की महिमा गायी है। ऋग्वेद में भी इसका उल्लेख मिलता है। इसकी उत्पत्ति युगानुसार पुराणों में अनेक प्रकार से वर्णित है। भगीरथ द्वारा लाई जाने के कारण भागीरथी राजर्षि जह्नु द्वारा पी जाने के कारण जाह्नवी और विष्णु के चरणों से निःसृत होने के कारण विष्णुपदी आदि गंगा के अनेक नाम हैं। हरिद्वार में 'हरि की पैड़ी' पर गंगा में स्नान करने का महान् पुण्य शास्त्रों में वर्णित है। दीर्घ काल तक संगृहीत गंगा-जल में कीटोत्पत्ति होकर कोई विकार उत्पन्न नहीं होता।

गांगेय [गांगेय] ४६

सोमवंशी पुरुकुलोत्पन्न महाराज शान्तनु के देवव्रत नामक पुत्र। गंगा से उत्पन्न होने के कारण इन्हें गांगेय भी कहा जाता है। इनके पिता ने सत्यवती नामक धीवर द्वारा पोषित कन्या से विवाह करने की इच्छा प्रकट की। धीवर ने इस शर्त पर विवाह करना

स्वीकार किया कि सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न पुत्र ही राज्याधिकारी हो। पिता की इच्छापूर्ति के लिये आजन्म राज्य का त्याग और राज्य पर अधिकार करने वाली उनके कोई सन्तान नहीं हो अतः आजन्म ब्रह्मचारी रहने की भीषण प्रतिज्ञा की। इससे इनका नाम भीष्म बहु-प्रख्यात हुआ।

भीष्म महापराक्रमी, महारथी, महा विद्वान् और सत्यवक्ता थे।

भीष्म द्वारा भीषण शस्त्राग्नि वर्षा से पाण्डव-सेना का अपार सहार होगया। भीष्म के होते हुए विजय प्राप्त करना असम्भव जानकर रात को गुप्त रूप से श्री कृष्ण युधिष्ठिर को साथ लेकर भीष्म से यह पूछने गये कि उनकी मृत्यु रणक्षेत्र में किस प्रकार हो सकती है। शास्त्र और शस्त्र विद्या में, सत्यवक्ताओ मे और आयु इत्यादि बातो में कौरव-पाण्डव दोनों पक्षो में वृद्ध और पितामह होने के कारण इन्होंने जाकर इनके चरणों मे प्रणाम किया और अपनी दुख-गाथा सुनाई। भीष्म-पितामह ने अपनी मृत्यु का जो कारण बतलाया, वह जगत्-प्रसिद्ध है। दूसरे ही दिन अर्जुन ने शिखण्डी रूप स्त्री को महारथी बनाकर उसकी ओट मे बाणो की वर्षा करके भीष्मपितामह को धराशायी कर दिया। भीष्म सत्य वक्ता, अखण्ड ब्रह्मचारी और परमात्मनिष्ठ थे अत इन्हें इच्छा-मृत्यु का वरदान प्राप्त था। सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में आने तक अप्रतिम वीरोचित कर्त्तव्य का पालन करते हुए इन्होने उर्ध्व बाणो की शय्या पर शयन किया और तब तक अपने प्राणों का विसर्जन नहीं होने दिया।

अर्जुन के बाणों से आहत शरशय्या पर सोते हुए भीष्म पितामह के पास उपदेश श्रवण करने के लिये अनेकों महर्षि राजर्षि और ब्रह्मर्षियों का समाज इकट्ठा होगया था। कृष्ण के अनेक-विध समझाने पर भी युद्ध में कुल-हत्या के सम्बन्ध में युधिष्ठिर को शान्ति नहीं मिल सकी तब श्रीकृष्ण उन्हें भीष्मपितामह के पास लेकर आये। भीष्मपितामह के जिस उपदेश द्वारा युधिष्ठिर को शान्ति प्राप्त हुई वह महाभारत में अनुशासन-पर्व और शान्ति-पर्व के नामों से प्रसिद्ध है।

भीष्म-वाणी

> नास्ति सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्।
> स्थितिर्हि सत्यं धर्मस्य तस्मात् सत्यं न लोपयेत्॥

(शान्तिपर्व १६२। २४)

सत्य से बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं और असत्य से बढ़कर कोई पाप नहीं। सत्य ही धर्म का आधार है अतः सत्य का लोप कभी नहीं होने दें।

गजराज २१

पाण्ड्य देश का अधिपति इन्द्रद्युम्न अगस्त्य ऋषि के शाप से गज-योनि को प्राप्त हो गया था। चौथे तामस मन्वन्तर में भगवान विष्णु ने हरि अवतार धारण करके गजेन्द्र और ग्राह दोनों का उद्धार किया था। गज पानी में क्रीड़ा कर रहा था। ग्राह ने उसका पांव पकड़ लिया और उसे पानी में खींचने। इसमें भी बहुत बल

लगाया, किन्तु अंत मे हार जाने पर श्री हरि का सुमिरण किया। हरि ने प्रगट होकर ग्राह से गज को छुड़ाकर पशुयोनि से उसकी मुक्ति की।

तत्रापि जज्ञे भगवान् हरिण्यां हरिमेधस
हरिरित्याहृतो येन गजेन्द्रो मोचितो ग्रहात् ॥

(भागवत स्क० ८)

गणेस [गणेश] २३७

भगवान् शिव के गणो के अधिपति होने के कारण इन्हें गणेश कहा जाता है। इनके जन्म के समय अन्य देवताओं के साथ शनि भी देखने आये थे। शनि के देखते ही गणेश का सिर घड़ से अलग होगया। विष्णु के कहने से इन्द्र के एक हाथी का सिर काट कर गणेश को लगा दिया गया। तब से यह गजानन भी कहलाने लगे। हस्ति-मुख देख कर कोई इनका तिरस्कार न करे, सभी देवताओं ने उस समय यह प्रतिज्ञा की कि विना गणेश की पूजा किये हम लोग किमी की पूजा ग्रहण नही करेंगे। तभी से गणेश की पूजा प्रथम की जाती है। यह भी एक कथा है कि एक बार देवताओं में सबसे प्रथम पूजनीय देवता कौन है का, विवाद उपस्थित हुआ, तब निर्णय हुआ कि जो पृथ्वी की परिक्रमा पहले कर आयेगा वही प्रथम पूजनीय समझा जायेगा। गणेश ने सर्वव्यापी 'राम' के नाम को लिख कर उसकी परिक्रमा कर डाली, जिससे देवताओं में सर्व प्रथम इन्ही की पूजा होती है।

गया ३४९

हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ-स्थान। धर्मवंशी अमूर्तरयस के पुत्र राजर्षि गय ने यहां के गय शिखर पर्वत पर ब्रह्मसर नाम का बड़ा तालाब बनवाकर एक बृहद् यज्ञ करके अपार धन और अन्न दक्षिणा में दिया था; इसी कारण इस क्षेत्र का नाम गया पड़ा। गया फल्गु नदी के किनारे पर बसा हुआ है। फल्गु तीर्थ नाग कूट गृध्र कूट पाण्डु-शिला गय शिला स्वर्ग-द्वार आदि यहां अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। यहां पर श्राद्ध और पिंडदान आदि करने का माहात्म्य है। गया में पिंडदान किये बिना पितरों की मुक्ति नहीं होती। इसे पितृ-गया भी कहते हैं।

वायु पुराण में लिखा है कि विष्णु का परम भक्त और धार्मिक गय नाम का एक विशालकाय असुर कोलाहल नामक पर्वत पर कठोर तपस्या करता था। विष्णु आदि सभी देवताओं से निरंतर इस पर्वत पर स्थिर रहने का वरदान प्राप्त कर गय वहां स्थिर हो गया। इसीसे इस क्षेत्र का नाम गया होगया। सभी देवताओं का निवास होने के कारण यह परम पावन तीर्थ-क्षेत्र बन गया।

गरुड़ २४५

गरुड़ पक्षियों के राजा और भगवान विष्णु के भक्त और वाहन माने जाते हैं। ये विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र हैं।

कश्यपजी ने एक बार पुत्र-प्राप्ति के लिये यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इंद्र बालखिल्य आदि देवता और ऋषिगण समिधा

आदि यज्ञ सामग्री इकट्ठी करने लगे। अंगुष्ठ भर के वालखिल्य ऋषियों को पलाश की एक छोटी-सी टहनी घसीटते देखकर इंद्र को हँसी आगई। वालखिल्यगण कुपित होगये और कश्यप का पुत्र दूसरा इंद्र उत्पन्न करने लगे। पर कश्यप ने उन्हें समझाकर शान्त कर दिया और कहा कि तुम जिसे उत्पन्न करना चाहते हो, वह तो पक्षियों का इन्द्र होगा। अंत मे विनता के गर्भ से कश्यप ने अग्नि और सूर्य के समान गरुड और अरुण दो पुत्र उत्पन्न किये। गरुड विष्णु के वाहन हुए और अरुण सूर्य के सारथी।

गर्ग २४३

इस नाम के कई ऋषि हुए हैं।

१- आंगिरस भारद्वाज के वंशज गर्ग ऋषि एक वैदिक ऋषि हैं। ऋग्वेद के छठे मंडल का सूक्त इनका रचा हुआ है।

२- अथर्व वेद के परिशिष्ट के अनुसार गर्ग नाम के एक बहुत बड़े ज्योतिषी होगये हैं। गर्ग-संहिता नामक प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथ इन्ही का निर्मित है। ज्योतिष के यह सबसे पुराने आचार्य कहे जाते हैं। भागवत मे लिखा है कि बलराम और श्रीकृष्ण का नामकरण इन्ही ने किया था।

३- ब्रह्मा के एक मानस पुत्र जिनकी सृष्टि गया मे यज्ञ करने के लिये की गई थी।

गळकासिला [गंडकीशिला] ११४

गंडकी नदी मे प्राप्त होने वाले छोटे-छोटे श्याम वर्ण गोल शिलाखंड जो सालिग्राम की मूर्ति रूप माने जाते हैं। गोमती नदी में से प्राप्त शिलाखंडो का भी ऐसा ही महत्त्व है।

गया ३४६

हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ-स्थान। चन्द्रवंशी अमूर्तरजस के पुत्र राजर्षि गय ने यहाँ के गय शिखर पर्वत पर ब्रह्मसर नाम का बड़ा तालाब बनवाकर एक बृहत् यज्ञ करके अपार धन और अन्न दक्षिणा में दिया था। इसी कारण इस क्षेत्र का नाम गया पड़ा। गया फल्गु नदी के किनारे पर बसा हुआ है। फल्गु तीर्थ, नाग कूट गृध्र कूट पाण्डु-शिला धर्म-शिला स्वर्ग-द्वार आदि यहाँ अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। यहाँ पर श्राद्ध और पिंडदान आदि करने का महात्म्य है। गया में पिंडदान किये बिना पितरों की मुक्ति नहीं होती। इसे पितृ-गया भी कहते हैं।

वायु पुराण में लिखा है कि विष्णु का परम भक्त और धार्मिक गय नाम का एक विशालकाय असुर कोलाहल नामक पर्वत पर कठोर तपस्या करता था। विष्णु आदि सभी देवताओं से निरंतर उस पर्वत पर स्थिर रहने का वरदान प्राप्त कर गय वहाँ निश्चल हो गया। इसीसे इस क्षेत्र का नाम गया होगया। सभी देवताओं का निवास होने के कारण यह परम पावन तीर्थ-क्षेत्र बन गया।

गरुड़ २४५

गरुड़ पक्षियों के राजा और भगवान विष्णु के भक्त और वाहन माने जाते हैं। ये विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र हैं।

कश्यपजी ने एक बार पुत्र-प्राप्ति के लिये यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इंद्र वालखिल्य आदि देवता और ऋषिगण समिधा

आदि यज्ञ सामग्री इकट्ठी करने लगे। अंगुष्ठ भर के वालखिल्य ऋषियों को पलाश की एक छोटी-सी टहनी घसीटते देखकर इंद्र को हँसी आगई। वालखिल्यगण कुपित होगये और कश्यप का पुत्र दूसरा इंद्र उत्पन्न करने लगे। पर कश्यप ने उन्हें समझाकर शान्त कर दिया और कहा कि तुम जिसे उत्पन्न करना चाहते हो, वह तो पक्षियों का इन्द्र होगा। अंत मे विनता के गर्भ से कश्यप ने अग्नि और सूर्य के समान गरुड और अरुण दो पुत्र उत्पन्न किये। गरुड विष्णु के वाहन हुए और अरुण सूर्य के सारथी।

गर्ग २४३

इस नाम के कई ऋषि हुए हैं।

१- आंगिरस भारद्वाज के वंशज गर्ग ऋषि एक वैदिक ऋषि हैं। ऋग्वेद के छठे मंडल का सूक्त इनका रचा हुआ है।

२- अथर्व वेद के परिशिष्ट के अनुसार गर्ग नाम के एक बहुत बड़े ज्योतिषी होगये हैं। गर्ग-संहिता नामक प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथ इन्ही का निर्मित है। ज्योतिष के यह सबसे पुराने आचार्य कहे जाते हैं। भागवत मे लिखा है कि बलराम और श्रीकृष्ण का नामकरण इन्ही ने किया था।

३- ब्रह्मा के एक मानस पुत्र जिनकी सृष्टि गया में यज्ञ करने के लिये की गई थी।

गळकासिला [गंडकीशिला] ११४

गंडकी नदी में प्राप्त होने वाले छोटे-छोटे श्याम वर्ण गोल शिलाखंड, जो सालिग्राम की मूर्ति रूप माने जाते हैं। गोमती नदी मे से प्राप्त शिलाखंडों का भी ऐसा ही महत्व है।

गवरि [गौरी] १६१

भगवान् शंकर की अर्द्धांगिनी पार्वती पहले श्याम वर्ण की। एक दिन भगवान् शंकर ने उन्हें हँसी में 'काली' कह दिया जिस पर पार्वती ने तप करके गौर वर्ण प्राप्त किया, तभी से पार्वती का गौरी नाम भी प्रसिद्ध होगया।

गायत्री १६१

१ त्रिकाल-सन्ध्या वन्दनादि ईश्वर-प्रार्थना का एक प्रसिद्ध त्रिपदात्मक वेद-मंत्र। गायत्री को वेदमाता भी कहा है। यह मंत्र सबसे अधिक पुनीत है। त्रिवर्णों के लिये इसका जप प्रतिदिन करना अनिवार्य माना गया है। यज्ञोपवीत धारण करते समय वेदारम्भ संस्कार करते हुए आचार्य सर्व प्रथम इस मंत्र का उपदेश ब्रह्मचारी को करते हैं। इस मंत्र के अकार उकार और मकार (ॐ) -ये तीनों वर्ण, भूः भुवः और स्वः – तीनों व्याहृतियां और सावित्री मंत्र के तीनों पद– ऋक् यजु और साम–तीनों वेदों से यथाक्रम निःसृत हैं। ओम्कार और व्याहृतियों सहित गायत्री मंत्र इस प्रकार है–

ॐ भू भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं।
भर्गो देवस्य धी महि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।

२- गायत्री सावित्री और सरस्वती– इन नामों से पहिचानी जानेवाली ब्रह्मा की ज्ञान-शक्ति।

गायत्री ब्रह्मा की स्त्री मानी जाती है। वषट्कार देवताओं की उत्पत्ति इसीसे हुई है।

ब्रह्मा की इन ज्ञान-शक्तियो की रूपक कथा बडी विचित्र और मनोरजनपूर्ण होने के साथ वैज्ञानिक और ज्ञानपूर्ण है ।

गुह ३८

शृंगवेरपुर के अधिपति निषादराज गुह महाराज दशरथ के परम मित्र और श्री राम के अनन्य भक्त थे ।

भगवान् श्रीराम के वनवास के समय इन्होने श्रीराम, सीता और लक्ष्मण को नाव मे बिठाकर गगा के पार उतारा था । गंगा के पार करने के पूर्व गुहराज ने भागवान् राम के चरणो को धोकर चरणोदक पान किया था । इस प्रेमानुरोध को स्वीकार कर लेने पर ही उन्हें अपनी नाव मे बैठने दिया था ।

श्रीराम के चित्रकूट मे निवास के समय अयोध्या की प्रजा सहित भरत जब राम को वापिस अयोध्या लौटा लाने के लिये आ रहे थे, तब इनको यह भ्रम होगया कि राज्य-शक्ति के प्राप्त हो जाने के कारण भरत भगवान् राम पर अपार सेना के साथ चढकर आ रहे हैं । भरत को वहीं रोककर यह उनसे युद्ध करने को तैयार हो गये । पर जब इन्हें यह मालूम हो गया कि भरत इस आशय से नहीं आरहे हैं, तो उन्हें भी अयोध्या की प्रजा के साथ गगा के पार उतार कर श्रीराम के पास पहुँचा आये ।

अयोध्या को त्रसित करने वाले द्रुमिदा राक्षस का वध गुहराज ने ही किया था ।

भक्त-वाणी

पद पखारि जलु पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार॥

कहेउ कृपालु लेहि उतराई, केवट चरन गहे अकुलाई।
नाथ आजु मैं काह न पावा मिटे दोष दुख दारिद दावा।
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी आजु दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी॥
(मानस अयोध्याकाण्ड)

गोरक्ष, गोरख ६१ ३५३

प्रख्यात सिद्ध योगी मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ जी नाथ सम्प्रदाय के संस्थापक और प्रवर्तक एक महान योगी और सिद्ध पुरुष थे। गोरखनाथ ज्ञानाश्रमी शाखा के जन्मदाता माने जाते हैं। इस सम्प्रदाय में जाति-पाँति का कोई विचार नहीं होता, इसीलिये इस सम्प्रदाय को मानवधर्म सम्प्रदाय भी कहते हैं। विश्वविख्यात अद्वैतमत के प्रवर्तक अद्वितीय संन्यासी शंकराचार्य के बाद गोरखनाथ ही एक ऐसे महिमावान योगी पुरुष उत्पन्न हुए हैं, जिनका मत सारे भारतवर्ष में फैला हुआ है। गोरखपुर गोरखनाथ-महादेव का मन्दिर इस सम्प्रदाय का प्रधान मठ माना जाता है।

गौतम २४२

वर्तमान मन्वन्तर के सप्त-ऋषियों में से एक ऋषि। अहल्या इनकी पत्नी और शतानन्द ऋषि इनके पुत्र थे। देखो' अहल्या'

आप्त-वाणी

असतोष परं दुःखं सतोषः परमं सुखम् ।
सुखार्थी पुरुषस्तस्मात् संतुष्टः सततं भवेत् ।।
(पद्म सृष्टिखण्ड)

छ-सास्त्र, [षट्-शास्त्र] १५१ (खट-भाख = षट्-भाषा) २४२

सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त, इन्हे छ दर्शन या छ शास्त्र कहते हैं ।

१- सांख्य-दर्शन के आद्य-संस्थापक महर्षि भगवान् कपिलाचार्य हैं । सांख्य मे तत्त्वों की संख्या बताई गई है । इस दर्शन के अनुसार पुरुष और प्रकृति इन दो वर्गों मे मूल तत्त्व विभाजित होते हैं ।पुरुष चेतन पदार्थ और प्रकृति जड पदार्थ, किन्तु क्रियाशक्ति वाली और दृश्य माना है ।

२- योग दर्शन के आदि-प्रणेता पतंजलि हैं । सांख्य की विचार-धारा को चित्त के निरोध द्वारा अनुभव मे लाने के लिये इस शास्त्र का निर्माण किया गया है । नित्य-सिद्ध और नित्य-मुक्त पुरुष (ईश्वर) के स्वरूप का ध्यान करके कैवल्य-मोक्ष प्राप्त करने की पद्धति इस शास्त्र मे बताई गई है । दे पतजळ

३- न्याय-दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम हैं । इसमें जगत् के तत्त्वो का सोलह पदार्थों में समास किया गया है । और तर्क के द्वारा वस्तु निर्णय करने का प्रमाणशास्त्र इसके अन्तर्गत करने में आया है ।

४ मीमांसा–दर्शन जिसे पूर्व मीमांसा भी कहते हैं। इसके सूत्रकार महर्षि जैमिनि हैं। वेद के कर्मकाण्ड के मन्त्रों और ब्राह्मण ग्रन्थों के अर्थों का निर्णय न्यायानुसार किस रीति से किया जाय वेद का प्रामाण्य किस प्रकार का है और तर्क का स्थान कितने अर्थों में है इत्यादि प्रश्न और वैदिक कर्मों से सम्बन्धित विचारों का समावेश इस शास्त्र में किया गया है। वे अमम

५ वेदान्त-दर्शन जिसे उत्तर-मीमांसा भी कहते हैं। इस दर्शन के प्रवर्तक भगवान् बादरायण (वेद-व्यास) हैं। वेद के ज्ञान काण्ड से सम्बन्धित चिन्तन इस दर्शन शास्त्र में वर्णित है। वेदान्त और उपनिषदों के वाक्यों के अर्थों का निर्णय न्याय की रीति से इसमें किया गया है इसलिये इसे वेदान्त शास्त्र का न्याय प्रस्थान भी कहते हैं। तत्त्वज्ञान के इस महान अद्वैत दर्शन शास्त्र पर कई मतों का आविष्कार हुआ है। द्वैत द्वैताद्वैत विशिष्टाद्वैत अविभागाद्वैत केवलाद्वैत शुद्धाद्वैत आदि-आदि।

६ वैशेषिक–दर्शन के प्रणेता महर्षि कणाद हैं। इसमें विश्व का वर्गीकरण–द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेष समवाय और अभाव– इन सात पदार्थों में किया गया है। प्रमाण के न्याय का अनुसरण करते हुए भ म जगत् का चिन्तन इस शास्त्र की विशेषता है।

जगदीस [जगदीश] ३४९, ३५०

हिन्दुओं के प्रमुख चार धामों में से जगदीशपुरी पूर्व दिशा का प्रसिद्ध धाम है। इसे पुरी अथवा जगन्नाथपुरी भी कहते हैं जो भारत

के पूर्वी समुद्र-तट पर उडीसा प्रदेश में स्थित है। यहा श्रीजगन्नाथजी श्री सुभद्राजी और श्रीबलभद्रजी की काष्ठ निर्मित असम्पूर्ण मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

एकबार द्वारिका मे माता रोहिणीजी श्री कृष्णचन्द्र की पटरानियों को गोपियों के प्रेम–प्रसग की कथा सुना रही थी। उस समय सुभद्राजी को किसी को भीतर नही आने देने के लिए द्वार पर खडे रहने का रोहिणीजी ने आदेश दिया। उसी समय श्रीकृष्ण और बलभद्रजी आगये और अन्दर जाने लगे। सुभद्राजी ने दोनो के बीच में खडे होकर और अपने दोनो हाथ फैला कर उन्हें वही रोक दिया। रोहिणीजी द्वारा व्रज की गोपी-प्रेम कथा सुन कर तीनो वही खडे विह्वल हो गये। उसी समय देवर्षि नारदजी भी वहा आ गये। देवर्षि ने जब ये प्रेम-विह्वल रूप देखे तो वे भी द्रवित होगये और प्रार्थना की– 'आप तीनो इसी रूप में विराजमान हो।' उन्होने नारदजी की प्रार्थना को स्वीकार किया और कहा कि– 'कलियुग मे दारु-विग्रह के इसी रूप मे हम तीनो पुरी मे अवस्थित होगे।' दारु-विग्रह के रूप में प्राकट्य के और भी कारण कहे जाते हैं। श्री जगन्नाथ के रथोत्सव का मेला अद्वितीय होता है।

जगद्गुरु श्री शकराचार्य के चारो धामो में स्थापित पीठो मे से यहा के पीठ का नाम गोवर्धन-पीठ है। चारो पीठाधीश्वर 'अनन्त श्री जगद्गुरु शकराचार्य' की उपाधि से विभूषित होते हैं।

जक्ख [यक्ष] १५१

देवताओं की एक जाति। यक्ष जाति के देवता कुबेर के सेवक माने जाते हैं और ये उसकी निधियों की रक्षा करने वाले होते हैं।

जणय जणक [जनक] ३५, २४६

यह मिथिला के राजा थे। जगज्जननि भगवती सीता इन्हीं की पुत्री थी। इनके समय में मिथिला ब्रह्म-विद्या का क्रीड़ा-क्षेत्र बनी हुई थी। बड़े-बड़े ऋषि भी ब्रह्मज्ञान का उपदेश ग्रहण करने के लिए इनके पास आते थे। इन्हीं राजर्षि की सहायता से याज्ञवल्क्य ऋषि ने यजुर्वेद का संकलन किया था। उस समय के ब्राह्मणों में भी इनका सम्मान बहुत बढ़ा-चढ़ा था। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि क्षात्रय उच्चकोटि के ज्ञानी होने के कारण राजर्षि जनक ने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया था। ये सदेह मुक्त थे और विदेह कहे जाते थे।

जमस [जैमिनि] २४३

महान् तत्त्ववेत्ता और शास्त्रार्थकर्त्ता महर्षि जैमिनि पूर्व-मीमांसा दर्शन के प्रणेता हैं। 'अथातो धर्म जिज्ञासा' और 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' इन दोनों सूत्रों के सूत्रकार जैमिनि ऋषि ही हैं। वेद-व्यास की आज्ञानुसार प्रथम सूत्र का पक्ष जैमिनि और दूसरे सूत्र के पक्ष का व्यास स्वयं समर्थन करें। इन्हीं दो सूत्रों के पक्ष में पूर्व-मीमांसा और उत्तर-मीमांसा (वेदान्त दर्शन) नामक दो दर्शन-ग्रन्थों का निर्माण हुआ। व्यास ने जैमिनि के पक्ष का खंडन किया है।

१ स-ब्राह्मण सं० ४

जयदेव ५०, २४६

जयदेव संस्कृत के प्रसिद्ध भक्त-कवि और गीतगोविन्द के रचयिता थे। इनकी कविता मधुर और ललित है। गीतगोविन्द में इन्होने अपनी माता का नाम वामदेवी और पिता का नाम भोजदेव लिखा है। बंगाल में अजय नदी के तट पर केंदूला ग्राम इनकी जन्मभूमि कहा जाता है।

जरा [जरायुज] २६६

चतुर्विध (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) जीवो मे जरायु (आवल) से लिपटे हुए उत्पन्न होने के कारण मनुष्य, पशु आदि प्राणी जरायुज कहलाते हैं। गर्भ वेष्टित चर्म को जरायु कहते हैं। पिण्डज (जरायुज) प्राणी चतुर्विध जीवो में श्रेष्ठ प्राणी हैं।

जरासंध ८५

यह मगध के राजा वृहद्रथ का पुत्र था। वृहद्रथ के जब कोई पुत्र नहीं था तो वृहद्रथ ने महर्षि चण्डकौशिक को प्रसन्न करके संतान प्राप्ति के लिये उनसे एक फल प्राप्त किया। वृहद्रथ ने उस फल के दो टुकडे करके अपनी दोनो स्त्रियो को खिला दिया, जिससे दोनों स्त्रियों के गर्भ से एक शरीर के आधे-आधे अंग के दो टुकडो के रूप में एक बालक उत्पन्न हुआ। वृहद्रथ इससे बहुत दुखी हुआ। उसने उन दोनों टुकडों को श्मशान में फिकवा दिया। वहां जरा नाम की एक राक्षसी रहती थी, उसने उन दोनों टुकडो को जोडकर और जीवित करके वृहद्रथ को सौंप दिया और कहा कि यह बडा

पराक्रमी होगा और इसकी यह संधि टूटे बिना इसकी मृत्यु नहीं होगी। राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और उसका नाम जरासंध रखा।

जरासंध ने सैकड़ों राजाओं को युद्ध में जीत-जीतकर रुद्रयाग में बलि देने को पशुओं की भांति एक दूसरे से बांधकर कैद कर रखा था। इन सबने श्रीकृष्ण को गुप्त संदेश पहुँचाया कि हमारी मृत्यु निकट आ गई है। आपके अतिरिक्त हमें कोई बचाने वाला नहीं है। हमें इस भयंकर कष्ट से शीघ्र छुड़ाने की कृपा करें। श्रीकृष्ण ने दूत के साथ उत्तर दिया कि तुम्हारा शीघ्र ही छुटकारा हो जायगा। श्रीकृष्ण के आदेशानुसार भीम ने जरासंध को चीर कर दाहिने अंग को बायीं ओर और बाएँ अंग को दाहिनी ओर फेंक दिया।

ताड़ीका [ताड़का] ९५

यह सुकेतु यक्ष की कन्या तथा मारीच और सुबाहु की माता थी। यह अगस्त्य ऋषि के शाप से राक्षसी हो गई थी और सरयू के किनारे ताड़क नामक वन में निवास करती थी। उस प्रदेश में इसके उत्पात से त्राहि त्राहि मच गई थी। महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ समारंभ में भी यह नित्य बाधा डालती रहती थी। अतः इसका वध करने के लिए वे महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण को ले गये। मार्ग में ही इसने इन पर आक्रमण कर दिया। भगवान राम को स्त्री का वध अनुचित प्रतीत हुआ किन्तु माया के बल से जब यह बहुत जोर की पत्थर-वृष्टि करने लगी तब विश्वामित्र की आज्ञा से राम ने इसका वध कर डाला।

तुमर, तुम्मर [तुबुरु] १२३, १८६, १६०

प्राधाना नाम के गधर्व का तुंबुरु नामक पुत्र । यह गधर्वों में बहुत प्रसिद्ध हुआ । राजस्थानी मे यह नाम 'गधव' अर्थ मे रूढ हो गया मालूम होता है ।

त्रीकम [त्रिविक्रम] १०७, २१६

भगवान् विष्णु के त्रिलोक व्यापी रूप का नाम । विष्णु का यह नाम वामन अवतार के लिये लिया जाता है, जिसमे उन्होने तीन पैड से स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोक नाप लिये थे ।

दत्तात्रय, दतदेव, गुरुदत्त [दत्तात्रेय] १२, ८८, ६१

भगवान् विष्णु के चोबीस अवतारो मे से एक । महर्षि अत्रि की पत्नी अनसूया के पतिव्रत-धर्म के प्रभाव से जब देवगण प्रसन्न हुए तो उन्होंने अनसूया को वर मागने को कहा । उन्होंने वर मागा कि ब्रह्मा विष्णु और महेश ये तीनो मेरे पुत्र हो । वर के प्रभाव से अनसूया के गर्भ से ब्रह्मा सोम रूप से, विष्णु दत्त रूप से और शकर दुर्वासा के रूप में उत्पन्न हुए ।

सोराष्ट्र में जूनागढ के पास गिरनार पर्वत गुरु दत्तात्रेय का तप'स्थान है, जो दत्त-शिखर के नाम से प्रसिद्ध है ।

आबू पर्वत का सर्वोच्च शिखर 'गुरु शिखर' के नाम से प्रसिद्ध है, जहा गुरु दत्तात्रेय के चरण-चिह्नों के दर्शन है ।

दशानन [दशानन] ४२

दशानन पुलस्त्य ऋषि का पौत्र और विश्रवा ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्पोत्कटा था। मयासुर की पुत्री मंदोदरी इसकी पत्नी थी। जन्म से ही दस सिर होने से इसका नाम दशानन अथवा दशकंधर हुआ रावण नाम बाद में रखा गया। वह महान् पराक्रमी प्रकाण्ड पण्डित बुद्धिशाली और अनन्य शिव भक्त था। अपनी अद्भुत तपस्या द्वारा ब्रह्मा को भी इसने प्रसन्न करके मनुष्य के अतिरिक्त किसी से भी मारा नहीं जाने का वरदान प्राप्त किया था। शक्ति और तप के प्रभाव से सभी देवता इसकी सेवामें प्रस्तुत रहते थे।

राम वनवास के समय इसने सीता का हरण कर लिया था जिसके फलस्वरूप राम रावण युद्ध हुआ और वह मारा गया। तदनन्तर राम ने इसके भाई विभीषण को ही लंका का राज्य दे दिया था।

दिगपाळ [दिकपाल] १५९ २५१

पुराणानुसार दसों दिशाओं का पालन करने वाले देवता। कहीं कहीं अष्ट दिग्पाल भी कहे जाते हैं। पूर्व दिशा से ईशान पर्यंत क्रम से इनके नाम ये हैं— इन्द्र अग्नि, पितर, निर्ऋति वरुण वायु कुबेर या सोम (वैश्रवण) और ईशान। दिग्देवता दिगेश दिग्पति और दिगाज आदि इनके पर्याय हैं।

दीरघ-देह, [दीर्घ देह] १७०

दीर्घ-देह अर्थात् स्थूल-शरीर। जो पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश- इन पच-महाभूतों (के एक साथ मिलने से) और कर्मों द्वारा उत्पन्न है। और जो सुख-दुखादि भोगों का स्थान है।

स्थूल-शरीर छ विकारो वाला होता है- १ गर्भ २ जन्म ३ वृद्धि ४ दृढत्व, ५. वृद्धत्व (बुढापा) और ६ नाश।

पचीकृत पच महाभूतं कृत सत् कर्मजन्य,
सुख दु खादि भोगायतन शरीरम्।
अस्ति जायते वर्धते विपरिणमते अपक्षीयते विनश्यतीति,
षड्‌ विकार वदेतत्स्थूशरीरम् ।

तत्वबोध

दुज-पंख [द्विज-पक्ष] ७६

गरुड को द्विज भी कहते हैं। यह विनता के गर्भ से उत्पन्न महर्षि कश्यप के पुत्र हैं। सर्पों की माता कद्रू (जो विनता की बहिन और कश्यप की बडी पत्नी थी) से अपनी माता के दासत्व को छुडाने के लिये यह पाताल से अमृत लाने के लिये गये थे।

भगवान् के रथ की ध्वजा में यह सदा प्रतिष्ठित रहते हैं और विष्णु भगवान् के वाहन हैं। दे० गरुड

परशुराम [द्विज राम] १३

राम बलराम और द्विजराम ये तीन 'राम' कहे जाते हैं। इनमें से यह ब्राह्मण 'राम' भगवान् विष्णु का अंशावतार कहा जाता है। यह महर्षि जमदग्नि के पांचवें पुत्र हैं। भगवान् शंकर से इन्होंने अमोघ-अस्त्र परशु प्राप्त किया था इसीसे यह परशुराम कहलाये। कार्तवीर्य (सहस्रार्जुन) ने इनके पिता की कामधेनु चुरा ली इस पर इन्होंने कार्तवीर्य को मार दिया। कार्तवीर्य के पुत्रों ने इनके पिता को मार डाला। परशुरामजी ने इस बात को लेकर समस्त क्षत्री जाति को नाश करने का संकल्प कर लिया और २१ बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन कर दिया। केवल कुछ विधवा क्षत्राणियां जो अपने बालकों को लेकर ऋषियों के आश्रमों में छिप गयी थीं उनके बालक बच गये। विदेह जनक ब्रह्मनिष्ठ होने के कारण मारे नहीं गये थे। सूर्यवंशी मूलक राजा स्त्री-वेष से स्त्रियों में छिपा रहा इसलिए वह भी बचा रह गया। इस प्रकार क्षत्रीवंश समूल नष्ट नहीं हो सका।

जानकीजी के स्वयंवर में राजा जनक के यहां भगवान राम द्वारा धनुष भंग होने पर यह वहां गये थे। इस धनुष के तोड़े जाने से यह बहुत क्रुद्ध हुए। परन्तु जब इन्हें यह पता चल गया कि शंकर के इस धनुष को तोड़ने वाले विष्णु के पूर्ण अवतार भगवान् राम हैं तो इन्होंने इस संशय के निवारणार्थ अपना धनुष श्रीराम को दिया जो उन्होंने तुरन्त चढ़ा दिया। उसी समय उनका विष्णु तेज निकलकर भगवान् राम में समा गया और यह वन में तपस्या करने को चले गये।

दुसासरा, [दुःशासन] ४६

यह घृतराष्ट्र के सौ पुत्रो मे से एक था और दुर्योधन का छोटा भाई था। यह दुर्योधन जैसा ही पराक्रमी और महारथी था परन्तु था महादुष्ट। इसने दुर्योधन की आज्ञा से द्रौपदी को रजस्वला होते हुए भी, उसको वेणी पकडकर अन्त पुर से सभा मे घसीट लाया था और निर्लज्जि बनकर उसे वहा नग्न करने का प्रयत्न किया था। परन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने द्रौपदी का चीर अनन्त बना दिया जिससे वह नग्न होने से बच गई। भीमसेन ने इसका वध किया था।

दूणागिर [द्रोणगिरि] २२१

राम-रावण युद्ध मे मेघनाद के द्वारा शक्ति-बाण के लगने से जब लक्ष्मण मूर्छित होगये तब द्रोणागिरि पर्वत पर सजीवनी लेनै हनुमान भेजे गये। वहा बूटी को नही पहिचान सकने के कारण वे इस पर्वत शिखर को ही उठा ले आये थे।

द्रजीत [इन्द्रजीत] ४२

यह लकेश्वर रावरण का पुत्र था। देवराज इन्द्र को युद्ध मे परास्त करने के कारण मेघनाद का एक दूसरा नाम इन्द्रजीत पडा। इसने राम-रावण युद्ध मे दो वार राम-लक्ष्रण को हराया था। अनन्तर भयकर युद्ध होने पर यह लक्ष्मरण के हाथ से मारा गया। यह मेघ के समान भयकर गर्जन करने वाला और महा पराक्रमी था।

प्रमोरा, [दुर्योधन] ४६

कुरुराज धृतराष्ट्र के गांधारी के गर्भ से उत्पन्न सौ पुत्रों में से दुर्योधन सबसे बड़ा था। यह बड़ा दुष्ट और पराक्रमी था। पांडवों से तो यह बचपन से ही द्वेष रखने लग गया था। भीम को भोजन में विष देकर नदी में डुबा दिया था। सबको एक ही साथ मार देने के लिये एक सुन्दर लाक्षागृह बनवाया और इसमें पांडवों को निवास देकर उसमें आग लगाई। अनेकों बार कई प्रकार के छल-छिद्र कर इन्हें मार देने के षड्यंत्र-प्रयत्न किये पर भगवान की कृपा से वे बचते रहे। अन्त में महान् धूर्त शकुनि के साथ युधिष्ठिर को जुआ खेलने और उसमें राज्यादि समस्त सम्पत्ति और यहां तक कि द्रौपदी तक को दाँव पर रखने को विवश किया। पांडवों का सर्वस्व हार जाना द्रौपदी को दुःशासन द्वारा पकड़ कर सभा में घसीट लाना और वहां उसे निर्लज्जता पूर्वक नंगी करने का अमानवीय अत्याचार करने का जबरदस्त प्रयत्न करना। जुआ में हार जाने की शर्त के अनुसार बारह वर्ष वन में रहना तेरहवें वर्ष अज्ञात रहना। और इस बीच यदि पता लग जाय तो बारह वर्ष पुनः वनवास भुगतना। वनवास और अज्ञातवास से लौट आने पर पांडवों को रहने के लिये पांच गांव जितनी भूमि भी देना स्वीकार नहीं करना। दुर्योधन की ऐसी अनेक दुष्टताओं के परिणाम-स्वरूप महाभारत जैसा भयंकर युद्ध हुआ जिसमें अन्यायी कौरव मारे गये और पांडवों की विजय हुई।

द्रोण, ४६, ८१

ये भारद्वाज ऋषि के पुत्र हैं। इन्होंने धनुर्विद्या तथा आग्नेयास्त्र की शिक्षा पहले अपने पिता से और फिर भारद्वाज के शिष्य अग्निवेश से पाई थी। अस्त्र-विद्या में निपुण होने के लिए इन्होंने श्री परशुरामजी से भी शिक्षा पायी। शरद्वान की पुत्री (कृपाचार्य की बहिन) कृपि से इनका ब्याह हुआ। महान् पराक्रमी महारथी अश्वत्थामा इन्ही का पुत्र था। भीष्मपितामह ने कौरवों तथा पाण्डवो को शस्त्र-विद्या की शिक्षा देने के लिए द्रोणाचार्य को नियुक्त किया था।

राजा द्रुपद इनके बाल-सखा थे। द्रुपद कहा करते थे कि राजा होने पर भी उन दोनो मे ऐसी ही मित्रता बनी रहेगी और उसे दृढ करने के लिए वे उन्हें आधा राज दे देंगे। परन्तु राजा होने के बाद इन्होंने अपने सखा द्रोण को बिल्कुल ही भुला दिया। एक बार जब ये उनसे मिलने के लिए गये तो उन्होंने इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा। द्रोण को इससे विशेष क्षोभ हुआ। पांडवों के द्वारा उन्होंने द्रुपद को पराजित करवाकर अपने सम्मुख बन्दी रूप में उपस्थित करवाया और उसका आधा राज छीन कर उसे मुक्त कर दिया। कौरव-पाण्डव युद्ध में द्रोण कौरवों की ओर से लडे थे। द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा इनका वध हुआ।

धनतर [धन्वन्तरि] १२

आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान् विष्णु का अवतार जो समुद्र मथन के समय, हाथ में अमृत घट लिये हुए प्रगट हुए थे। यह आयुर्वेद के प्रथम और प्रधान आचार्य और देवताओं के वैद्य हैं।

धनेस [धनेश] १५१

यह महर्षि पुलस्त्य के पौत्र और विश्रवा के पुत्र सभी यक्षों के अधिपति हैं। इनकी नगरी का नाम अलकापुरी है। कुबेर देवताओं के कोषाध्यक्ष हैं। इनके तीन पैर और आठ दाँत कहे जाते हैं। कुबेर और रावण दोनों भाई हैं। कुबेर यक्षाधिपति हैं और रावण राक्षसाधिपति है। कुबेर उत्तर–दिग्पाल हैं।

धरणीधर, ८, ९२ १०१, ३४२

राजस्थान और गुजरात का प्राचीन काल का एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान। प्राचीन समय में इसे वाराहपुरी कहते थे। उत्तर गुजरात के वाव और थराद नगरों के पास ढेमा गाँव में भगवान् श्री विष्णु की इस अद्भुत मनोहर मूर्ति का विशाल मंदिर बना हुआ है। मंदिर के पास मानसरोवर नाम का एक बड़ा तालाब है। यहाँ शिवजी लक्ष्मीजी गणेशजी और हनुमानजी आदि के मन्दिर भी हैं। प्राचीन काल में पंजाब सिंध तथा उत्तर-प्रदेश और राजस्थान आदि देशों की ओर से द्वारका की यात्रा करने वाले यात्रियों को प्रथम धरणीधर के दर्शन करना और यहाँ की तप्त मुद्राओं को अपनी भुजाओं पर लगवाना आवश्यक समझा जाता था। आजकल तप्त मुद्राओं के स्थान केसर-चन्दन की मुद्राएँ लगाई जाती हैं। महाभारत में इस तीर्थ का बड़ा माहात्म्य लिखा है। पश्चिम रेलवे की पालनपुर-कंडला गांधीधाम शाखा पर भाभर स्टेशन से धरणीधर के लिये मोटर-बसें मिलती हैं।

ऐसा माना जाता है कि भगवान् श्रीकृष्ण द्वारका जाते हुए यहाँ ठहरे थे अतः इस तीर्थ का निर्माण हुआ।

धुरू, ध्रुव, [ध्रुव] ६१, १४६, २२१

ध्रुव स्वयंभू मनु के पौत्र तथा महाराज उत्तानपाद के पुत्र हैं। उत्तानपाद के दो रानियां थी— सुरुचि तथा सुनीति । सुनीति के गर्भ से ध्रुव तथा सुरुचि के गर्भ से उत्तम की उत्पत्ति हुई । एक बार जब उत्तम राजा की गोद मे बैठा था तो ध्रुव भी जाकर उनकी गोद के एक भाग मे बैठ गया। सुरुचि ने ध्रुव को अवज्ञा के साथ हटा दिया। ध्रुव को यह अपमान असह्य होगया और वे उसी समय वन को चल दिये। यहां उन्होने घोर तप करके भगवान् को प्रसन्न किया और वर प्राप्त किया कि "वह समस्त लोको, ग्रहो तथा नक्षत्रो के ऊपर उनके आधार-स्वरूप होकर स्थित रहेगा, और उसके रहने से वह स्थान ध्रुवलोक के नाम से विख्यात होगा।" पश्चात् इन्होने घर आकर अपने पिता का राज्य प्राप्त किया और अनेको वर्ष धर्म और नीतिपूर्वक राज्य करके ध्रुवलोक मे चले गये।

नळकूबड़ [नलकूबर] २५४

कुवेर के पुत्र नल कूबर और इसका बड़ा भाई मणिग्रीव दोनो अपनी स्त्रियो के साथ गगा मे जल-क्रीडा कर रहे थे, इतने मे नारदजी उधर होकर निकले। मदोन्मत्त दोनो भाईयो ने नारदजी की हंसी उडाई और नमस्कार नही किया। इस पर नारदजी ने इन्हें शाप दिया कि 'तुम लोग जड-बुद्धि हो अत' वृक्ष हो जाओ।' भूल का भान हो जाने पर इन्होंने प्रार्थना की कि हमारे अविवेक को क्षमा करें। दयालु नारदजी ने क्षमा करते हुए कहा कि भगवान् श्री कृष्ण के चरण-स्पर्श से तुम्हारा उद्धार होगा।

शाप के कारण दोनों भाई गोकुल में जुड़वाँ अर्जुन वृक्ष उत्पन्न हुए, जिनका यमलार्जुन नाम पड़ा। एक दिन यशोदाजी ने बालक कृष्ण को ऊखल से बाँध दिया। कृष्ण ऊखल को घसीटते हुए वृक्षों के पास पहुँच गये और ऊखल को दोनों वृक्षों के बीच में अटकाकर जोर से झटका मारा जिससे दोनों वृक्ष गिर गये और उनमें से नलकूबर और मणिग्रीव अपनी दिव्य देह से प्रगट हो गये। श्री कृष्ण की स्तुति और वंदन करके दोनों अपने स्थान को चले गये।

नवखंड २०१

पौराणिक भूगोल के अनुसार समस्त पृथ्वी के नौ खंड माने गये हैं और वे इस प्रकार हैं— (१) इलावृत (२) भद्राश्व (३) हरिवर्ष (४) किंपुरुष (५) केतुमाल (६) रम्यक (७) भारत (८) हिरण्मय और (९) उत्तर कुरु। दूसरे मतानुसार इन नौ खंडों के नाम इस प्रकार हैं— (१) भरत (२) वर्त (३) राम (४) इलावर्त (५) केतुमाल (६) हरि (७) विविधत (८) महि और (९) सुवर्ण।

नवग्रह २५१, २५८

मंगल, बुध, चन्द्र, शनि, शुक्र, गुरु, राहु, केतु और सूर्य ये नौ ग्रह हैं।

नव निद्ध, नवो निध [नव निधि] २०१, २३१

महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व, ये कुबेर की नौ निधियाँ हैं।

नाग-नवै-कुळ [नव-कुल नाग] १६१

कश्यप तथा कद्रू के पुत्र नाग मेरु-कर्णिका में रहने वाले वरुण की सभा के सभापति थे। कश्यप के पुत्र नौ प्रमुख नाग नौकुली नाग कहलाते हैं[1]। त्रिलोकी भर मे इन्होने बडा भारी

---

१. राजस्थानी साहित्य मे नागो के नौ कुल माने गये हैं, अत 'नव कुळी नाग' प्रसिद्धि मे आया हुआ है। पुराणों मे केवल आठ कुल मान कर अष्ट कुली' अथवा 'अष्ट नाग' कहा है। वे इस प्रकार हैं—

अनत, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, शख, कुलिक, पद्म और महापद्म। यही नागों की आठ मुख्य जातिएँ हैं। इनके कई अवातर भेद और हैं जिन्हें भी नागवश या नाग कुल कहते हैं। वासुकि इन सब का अधिपति माना जाता है। इसकी स्त्री का नाम शतशीर्षा है। वासुकि ही सदैव भगवान् शकर के भूषण रूप मे उनका आश्रित रहता है। समुद्र-मथन के समय देव और दैत्यों ने इसी को मथन-रज्जु बनाया था। वासुकि के पन्द्रह नाग-कुल प्रसिद्ध हैं।

कहा जाता है कि शाप के प्रत्याहार से ये मारवाड देश में मडोर के पास सुरक्षित स्थान में चले गये थे। वहाँ इनके नाम से नागादरी (नागह्रदो, वा नागह्रदिनी) नदी, नाग कुण्ड नागह्रद और भोगी-शैल (भोगवती) आदि अनेक तीर्थ-स्थान प्रसिद्ध हैं और वहाँ बड़े मेले लगते हैं। मारवाड के पू गल प्रदेश के एक गांव में इन नागों के भाट रहते हैं। जिनके पास इनकी बडी विस्तृत वशावलियां बताई जाती हैं। वर्ष में एक बार निश्चित तिथि पर किसी विशेष स्थान पर जाकर ये वहां उनकी वशावलियां पढते हैं।

उपद्रव मचाया तब ब्रह्माजी ने इन्हें शाप दे दिया कि जन्मेजय के नाग-यज्ञ में तुम सभी नष्ट हो जाओगे। पर इनकी प्रार्थना से द्रवीभूत होकर ब्रह्माजी ने शाप का प्रत्याहार कर लिया। ये सभी एक दूसरे स्थान में चले गये और वहां पर एक नाग-तीर्थ की सृष्टि की। जिस दिन ब्रह्मा के पास ये प्रार्थना करने गये थे उस दिन श्रावण शु पञ्चमी थी जो अब नाग-पंचमी के नाम से प्रसिद्ध है।

नारसिंघ [नृसिंह] १३

आधी सिंह की ओर आधी मनुष्य की आकृति वाला भगवान् विष्णु का एक अवतार। हिरण्यकशिपु दैत्य को मारकर उसके पुत्र भक्त प्रह्लाद की रक्षा करने के निमित्त विष्णु भगवान् को ऐसा नृसिंह रूप धारण करना पड़ा था।

नकासुर [नरकासुर] ५०

यह भूमि का पुत्र था अतः इसे भौमासुर भी कहते हैं। भू देवी ने भगवान् विष्णु को प्रसन्न करके उनसे अपने पुत्र नरकासुर को वैष्णवास्त्र दिलवा दिया। इसको प्राप्त करके यह महा बलवान होगया।

इसने देवताओं को बहुत पीड़ित किया और इनकी तथा इन्द्र की संपत्ति हर कर अपने नगर प्राग्ज्योतिषपुर में लाया। यह बात इन्द्र ने भगवान् कृष्ण से कही। इसको वरदान था कि बिना इसकी माता की आज्ञा के इसकी मृत्यु नहीं होगी। सत्यभामा, पृथ्वी का अवतार थी अतः भगवान् श्रीकृष्ण इन्हें साथ लेकर नरकासुर का वध करने गये।

नरकासुर युद्ध मे मारागया। इसके बन्दीखाने मे सोलह हजार कन्याए बन्द थी भगवान् ने उनको मुक्त किया और उनकी प्रार्थना पर उनसे विवाह किया।

पंचाळी [पाचाली] ५१

पाचालराज द्रुपद की यज्ञ वेदी से उत्पन्न कृष्णा नाम की कन्या, जो पाण्डवो को व्याही थी। पाचाल देश की होने के कारण इसका नाम पाचाली पडा। द्रुपद की कन्या होने के कारण द्रौपदी नाम प्रसिद्ध हुआ। दुष्ट दुर्योधन की आज्ञा से द्यूत-सभा मे दु शासन ने पांचाली का चीर हरण करना शुरु किया। द्रौपदी ने अपने पति और वृद्धजनो से सहायतार्थ पुकार की पर किसीने उसकी सहायता नही की। तब उसने भगवान् श्री कृष्ण से आर्त पुकार की, जिससे उसका चीर अनन्त हो गया और उसकी लाज बच गई।

आर्त-वाणी

कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन
प्रपन्नां पाहि गोविन्द कुरु मध्येऽवसीदतीम्

हे श्री कृष्ण ! आप महायोगी और सच्चिदानद हैं। आप ही विश्वात्मा (सर्वस्वरूप) और आप ही विश्व के प्रिय हैं। हे गोविन्द ! मैं कौरवो से घिर कर बडे सकट मे पड गई हू। अब आपकी शरण मे हू। प्रभु ! आप मेरी रक्षा कीजिये।

पतंजळ [पतंजलि] २४३

१ योग-शास्त्र के प्रणेता महर्षि पतजलि। इनके इस दर्शन मे योग-साधन द्वारा चित्त की वृत्तियों को वश मे करने के उपाय बताये गये हैं। इसे योग-सूत्र भ कहते हैं। दे० छ-सास्त्र सख्या २

आर्ष-वाणी

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः

(योगसूत्र)

अहिंसा की संपूर्ण और दृढ़ स्थिति हो जाने पर (उस योगी के निकट सिंह सर्प आदि हिंसक और निर्वैर) समस्त प्राणी वैर का त्याग कर देते हैं।

१. एक प्रसिद्ध महाभाष्यकार मुनि जिन्होंने पाणिनीय सूत्रों (अष्टाध्यायी व्याकरण) पर और कात्यायन कृत वार्तिक पर महाभाष्य लिखा है।

परासर [पराशर] २४५

महर्षि पराशर महर्षि वसिष्ठ के पौत्र और शक्ति ऋषि के पुत्र एक योगकार ऋषि हैं। इनके पिता शक्ति ऋषि को राक्षसों ने मार दिया था। इन्होंने इसका बदला लेने के लिए राक्षस-वध करना प्रारम्भ किया था परन्तु वसिष्ठ ऋषि के कहने से बन्द कर दिया। यह महान् तपस्वी थे। इनका 'पराशर-स्मृति' नामक धर्मशास्त्र प्रसिद्ध है। वेद-व्यास कृष्ण-द्वैपायन इन्हीं के पुत्र थे।

स्मृति-वाणी

तस्माद्दुःखात्मकं नास्ति न च किञ्चित् सुखात्मकम्।
मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादि लक्षणः॥

(महर्षि पराशर)

इसलिए कोई भी वस्तु न तो किंचित् दुःखमय है और न किंचित् सुखमय ही है यह तो केवल मन के परिणाम हैं। सुख-दुःख के लक्षण यही हैं।

परीखत, [परीक्षित्] ४६

परीक्षित् महावीर अर्जुन के पौत्र और अभिमन्यु के पुत्र थे। अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से भगवान श्रीकृष्ण ने इनकी गर्भ मे रक्षा की थी और उस समय इन्होने गर्भ मे भगवान् के दर्शन किये थे। जन्मते ही सर्वत्र भगवान् के होने की परीक्षा करने लग जाने के कारण इनका नाम परीक्षित् रखा गया। पाडवो के बाद इन्होने बहुत ही उत्तम प्रकार से राज्य का सचालन किया।

कलियुग का आरम्भ इन्ही के समय मे हुआ माना जाता है। एकबार जगल मे इन्हे एक राज्य चिह्न धारण किया हुआ एक शूद्र मिला, जो एक गाय और बैल को निर्दयतापूर्वक मूसल से पीटता जा रहा था। परीक्षित क्रोधित होकर उसे दण्ड देने लगे। शूद्र ने अपना परिचय देते हुए कहा— "राजन् ! मैं कलियुग हूँ, यह गाय पृथ्वी और बैल धर्म है। आज द्वापर की समाप्ति पर मेरा प्रवेश हो रहा है। मुझे शरण और अभय देने की कृपा कीजिए। आप जैसे धर्मात्माओ के राज्यशासन मे मेरा युग प्रभु-प्राप्ति के लिए महादुष्टों को भी बडा सुलभ होगा। मेरा ऐसा रूप और कर्तव्य देख करके आप घबरायें नही। मुझे शरण दीजिए।" कहते हुए महाराज के चरणो मे गिर पडा।

महाराज परीक्षित् ने शरणागत जानकर छोड दिया और चौदह स्थानो मे रहने के लिए उसे अभय कर दिया। उन स्थानो मे एक स्वर्ण भी था। परीक्षित् के सिर पर उस समय सोने का मुकुट धारण किया हुआ था, अत कलि ने उसी समय उस पर अपना

आसन जमा दिया। घर को लौटते हुए परीक्षित् शमीक ऋषि के आश्रम में पहुँच जाते हैं वहाँ कलि की बुद्धि से प्रेरित होकर ध्यानमग्न ऋषि के गले में मरा हुआ साँप डाल देते हैं। शमीक ऋषि के पुत्र शृंगी ऋषि को जब यह बात मालूम होती है वह क्रोध में आकर राजा को यह शाप दे देते हैं कि सातवें दिन सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो जायगी।

परीक्षित् ने अपना मृत्युकाल निकट आया जान जनमेजय को राज्य दे दिया और गंगा के तट पर जाकर बैठ गया। वहाँ उन्होंने अन्न-जल का त्याग कर दिया और शुकदेव मुनि से भागवत की कथा श्रवण की। सातवें दिन तक्षक के डंस से उनकी मृत्यु होगई।

परीक्षित-वाणी

निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्भवौषधाच्छ्रोत्रमनोऽभिरामात् ।
क उत्तम श्लोक गुणानुवादात् पुमान् विरज्यते विना पशुघ्नात् ॥

(श्री मद्भागवत)

जिनकी तृष्णा सदा के लिए मिट गई है वे जीवन्मुक्त महापुरुष जिसका कभी तृप्त नहीं होकर पूर्ण प्रेम से गान किया करते हैं, मुमुक्षुजनों के लिए जो भवरोग की औषधि है तथा विषयी लोगों के कान और मन को भी परम आह्लाद देनेवाला है। भगवान श्रीकृष्णचन्द्र के ऐसे उत्तम गुणानुवाद से पशुघाती अथवा आत्मघाती मनुष्य के अतिरिक्त और ऐसा कौन है जो उससे विमुख हो जाय?

पांडव ४५ ३३८

महाराज पाण्डु के पुत्र युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल और सहदेव ये पाँचों पाण्डव कहलाते हैं। युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन

ये तीनो कुन्ती के गर्भ से और नकुल और सहदेव माद्री के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। ये पाचो पाण्डु के क्षेत्रज पुत्र थे। युधिष्ठिर धर्म के, भीम वायु के, अर्जुन इन्द्र के और नकुल और सहदेव अश्विनीकुमार-द्वय के औरस से उत्पन्न हुए थे। ये धर्मात्मा, नीतिज्ञ, महापराक्रमी और भक्त थे। कौरव-पाडवो के महाभारत-युद्ध में श्रीकृष्ण ने पाडवों के पक्ष मे युद्ध का सचालन किया। गीता के ज्ञान का उपदेश देकर अर्जुन के मोह और सशय दूर किये और पाडवो को विजयी बनाया।

पीताबर, ३

ईशरदासजी को भक्ति की ओर प्रवर्त करने वाले उनके गुरु प्रसिद्ध ब्रह्मनिष्ठ पीताम्बरदासजी भट्ट। यह रावल जाम की विद्वत्सभा के सर्वोपरि विद्वान, कवि, भक्त और पडित थे।

पुरांण [पुराण] १३६

जिसमे कल्प का इतिहास लिखा हुआ हो अर्थात् जिसमे पुराने समय का राजनैतिक, सामाजिक और प्राकृतिक अवस्थाओं का वर्णन किया गया हो और जो मनुष्यो के चित को धर्म की ओर आकर्षित कर दे, उसे पुराण कहते हैं। पुराणों की सख्या १८ हैं और अठारह ही उप पुराण हैं। ये हिन्दुओं के विशिष्ट और प्राचीन धर्म-ग्रन्थ हैं। इनमे सृष्टि तत्व, अवतारों की कथाएं और दार्शनिक तत्वो का समावेश है। दैनिक धर्मनुष्ठान की रीतिया, आख्यान, इतिहास के साथ इनमे हिंदू जाति की प्रतिष्ठा, गौरव, महत्व, वीरत्व, साहस, न्यायनिष्ठा, दया धर्म और दाक्षिण्य आदि का अनुपम वर्णन मिलता है। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य और कर्म-अकर्म

आदि का विवेचन मनुष्य जीवन की गति निश्चित करने का मूल-मंत्र और भाव-बन्ध एवं उसके संबंध के बहुत ही सुन्दर और कला-पूर्ण और ज्ञान-पूर्ण सहस्रों दृष्टान्तों से पुराण समलंकृत हैं। पुराणों की संख्या आकार, विषय परम्परा धर्म तत्त्व कवित्व और लेखन-शैली आदि पर विचार करने से चकित होना पड़ता है। ज्ञान के भण्डार पुराणों के समान उपयोगी और बृहत्काय ग्रंथ संसार के किसी देश की किसी भी भाषा में नहीं लिखे गये हैं।

अठारह पुराणों की नामावली देखिये 'अठारपुराण' शब्द में।

प्रद्युमन [प्रद्युम्न] ८४

प्रद्युम्न रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण के पुत्र और कामदेव के अवतार थे। इनके जन्म के सातवें दिन शम्बरासुर सौरी में से इन्हें चुरा कर ले गया। शम्बर के कोई पुत्र नहीं था। इसलिये प्रद्युम्न को उसकी स्त्री मायावती के हाथ सौंप दिया। प्रद्युम्न जब जवान होगये तब मायावती इनसे पत्नी के समान भाव प्रकट करने लगी। यह देख प्रद्युम्न ने मायावती से कहा तुम मेरे में पुत्र भावना का त्याग कर इस प्रकार विपरीत व्यवहार क्यों कर रही हो? प्रद्युम्न को एकान्त में ले जा कर मायावती कहने लगी— नाथ! आप मेरे पुत्र नहीं हो शम्बर आपका पिता नहीं है। आपका जन्म वृष्णिवंश में हुआ है। भगवान् श्री कृष्ण आपके पिता और भगवती रुक्मिणीजी आपकी माता हैं। आपके जन्म के सातवें दिन सौरी-घर से शम्बर आपको चुरा कर ले आया था। आप तो कामदेव हैं और मैं हूँ मायावती के रूप में आपकी पत्नी रति। प्रद्युम्न को भी अपने पूर्व जन्म की स्मृति हो आई। उन्होंने वैष्णवास्त्र से शम्बर को मारडाला और मायावती को लेकर द्वारका चले गये।

प्रसनीग्रभ, प्रसन्निय-ग्रम्भ [पृश्निगर्भ] १२,८३

१- माता पृश्नि के गर्भ से उत्पन्न भगवान विष्णु का एक अवतार पृश्निगर्भ कहलाया।

२- सुतपा प्रजापति की पत्नी पृश्नि जिसने देवकी के रूप मे जन्म लेकर भगवान कृष्ण को जन्म दिया।

प्रहळाद [प्रह्लाद] २८,५६,८८,९५,१४८.

यह कयाधु के गर्भ से उत्पन्न दैत्यराज हिरण्यकशिपु का सबसे बडा पुत्र है। प्रह्लाद जब गर्भस्थ था तब नारदजी ने उसकी माता कयाधु को ज्ञानोपदेश किया था जिसके कारण गर्भ मे ही प्रह्लाद को भगवद्भक्ति के सस्कार जम गये और जन्म लिया तब ही से व्यापक परमात्मा-विष्णु की उपासना मे अनुरक्त रहने लगा। ज्यो-ज्यो बडा होता गया परब्रह्म की उपासना मे अधिक तल्लीनता उत्पन्न होने लगी। इससे हिरण्यकशिपु बहुत रुष्ट होगया और इसे अनेक प्रकार के कष्ट दिये। कष्टो मे उसे भगवान् की महान् शक्ति और सर्व व्यापकता का विश्वास अधिक तीव्रतर होने लग गया। अनेक प्रकार से समझाने, भय दिखाने और मरवाने के प्रयत्नों मे जब हिरण्यकशिपु असफल होगया, तब वह स्वय ज्योही अपने हाथों से खड्ग उठाकर मारने के लिये तैयार हुआ त्योही भगवान् ने एक खभ से नृसिह रूप से प्रगट होकर हिरण्यकशिपु को अपने नखो से चीर दिया। बालक प्रहलाद भगवान के इस भयकर रूप को देखकर भयातुर होगया। तब भगवान ने उसे ढाढस देते हुए वरदान मांगने को कहा। प्रहलाद ने प्रार्थना की कि हे प्रभु! एक तो आपका भयकर स्वरूप और

उसकी लहर जो समस्त संसार को त्रस्त कर रही है उसे शान्त करके आपके उस लक्ष्य व्यापक भुवन-मोहिनी रूप का दर्शन दीजिये और दूसरा समस्त संसार के प्राणियों का दुःख मुझे देने की कृपा करें। भगवान ने प्रह्लाद को अभय कर दिया और ऐसा वरदान मांगने पर साधु! साधु! कह कर प्रशंसा की।

भक्त-वाणी

नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि॥

(विष्णु पुराण)

नाथ! सहस्रों योनियों में से जिस जिस योनि में मैं जन्म लूं उसी-उसी योनि में हे अच्युत! आप में मेरी सदा अचल भक्ति बनी रहे।

प्राग [प्रयाग] १९१ ३४९

प्रयाग-गंगा यमुना और सरस्वती के संगम स्थान पर बसा हुआ है। प्रयाग में ही अक्षयवट है जो प्रलय में भी नहीं डूबता। यहां कुंभ-पर्व पर संगम-स्नान का बड़ा माहात्म्य है जो प्रति बारहवें वर्ष जब सूर्य मकर राशि में और बृहस्पति वृष राशि में होते हैं तब यह कुंभ-पर्व होता है। कुंभ से छठे वर्ष अर्ध-कुंभी मेला लगता है। इसी प्रकार हरिद्वार, नासिक और उज्जैन में भी कुंभ के मेले भरते हैं। कुंभ के मेले संसार के सब मेलों से बड़े होते हैं।

प्रित्थू [पृथु] ६१

महान् वलाढ्य और भूगर्भवेत्ता पृथु राजा ने पृथ्वी की विषमता और सत्वहीनता को मिटाकर उसे सम और सत्व वाली एवम् फलद्रुप वनाया था। प्रजा को धन-धान्य से पूर्ण करने के इनके इस महान् कार्य मे पृथ्वी को दुहने की कल्पना की गई और इन्ही के नाम पर भूमि की पृथ्वी सज्ञा दी गई।

वद्रीनारायण [वदरीनारायण] १४

महर्षि धर्म के पुत्र भगवान् नर-नारायण भगवान् विष्णु के अशावतार थे। इनकी माता का नाम मूर्ति था। इन्होंने वदरिकाश्रम में घोर तप किया, जिससे ये वदरीनारायण कहलाये।

हिमालय पर्वत की १०२६४ फीट ऊचे शिखर पर वदरिकाश्रम मे अलकनदा के तट पर भगवान् वदरीनारायण का विशाल मदिर वना हुआ है। वर्ष के छ॰ महीने मदिर के पट खुले रहते हैं, तव समस्त भारत के सहस्रों यात्री दर्शन करने को आते हैं। शेष छः महीने वर्फ जमी रहने के कारण यात्रा वद रहती है।

मदिर के पुजारी दक्षिण के नम्बूद्रीपाद ब्राह्मण होते हैं जो रावल कहलाते हैं।

शकर-दिग्विजय के समय जब बौद्ध भारतवर्ष छोडकर अन्य देशों को भागने लगे, तो तिब्बत को भागने वाले बौद्धों ने श्री वदरी-नारायण की मूर्त्ति को अलकनदा में फेंक दिया। भगवान् शकराचार्य ने निकलवाकर उसे पुनः मदिर में प्रतिष्ठित करवाया।

बौद्धों ने जब अपने मूल मूत धार्मिक सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया और धर्म की ओट में पाखंड और अत्याचार पराकाष्ठा पर पहुँच गये वैदिक हिन्दूधर्म निमूल होने लगा तब भगवान् शंकराचार्य ने बौद्धों और नास्तिकों पर दिग्विजय प्राप्त कर उन्हें भारतवर्ष से बाहर खदेड़ दिया। वैदिक-धर्म की रक्षार्थ एवं विधर्मियों की पुनः-पैठ फिर भारत में नहीं हो सके इसलिये शंकर ने भारत की चारों दिशाओं में चार पीठ (धर्म प्रचारक केन्द्र) नियुक्त कर दिये और धुरंधर धर्माचार्यों को संगठित करके वहां के प्रसिद्ध मंदिरों और तीर्थ-केन्द्रों में उनकी स्थापना करदी। ये चारों तीर्थ-केन्द्र धाम नाम से विख्यात हैं।

बभीखण [विभीषण] ४१

ये रावण के छोटे भाई थे। राक्षस-कुल में जन्म होने पर भी ये हरि भक्त थे। सीता को लौटा देने के लिए जब इन्होंने रावण को समझाया तब रावण ने लात मार कर इन्हें निकाल दिया। तब ये भगवान् राम की शरण में आए। इन्होंने ही रावण की मृत्यु का रहस्य श्रीराम को बतलाया था। रावण-वध के पश्चात् राम ने इन्हें लंका का राज्य दे दिया।

बळि [बलि] १४

यह भक्त-श्रेष्ठ प्रह्लाद के पौत्र तथा विरोचन के पुत्र थे। कठोर तपस्या से एकत्री हुई शक्ति के आधार पर इन्होंने इन्द्र को भी पराजित किया था तथा तीनों लोकों में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। इन्द्र की प्रार्थना पर भगवान् विष्णु वामन रूप में बलि के पास गये और तीन-पग भूमि की याचना की। शेष प्रसंग 'वामन' में देखिये।

वळीभद्र [वलभद्र] १८१

वलराम, वसुदेव और रोहिणी के पुत्र और श्रीकृष्ण के बडे भाई थे। ये शेषनाग के अंशावतार माने जाते हैं। इन्होंने भी अपने शस्त्र हल और गदा से कई अत्याचारी राक्षसों का नाश किया था।

बांणासुर [बाणासुर] ४७

बाणासुर कृतवीर्य का पुत्र था। इसकी राजधानी शोणितपुर थी।

इसकी पुत्री उषा ने श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध के साथ स्वप्न में विवाह कर लिया था इसलिए उसको उसकी सखी चित्रलेखा के द्वारा सोते हुए को अपने महल में मगवाकर बाणासुर को प्रकट किए विना गाधर्व विवाह कर लिया। कुछ समय बाद जव रहस्य खुला तो अनिरुद्ध को बाणासुर ने कैद कर लिया। तव यादवी सेना शोणितपुर चढ़ आई। भयकर युद्ध हुआ जिसमें सहस्रार्जुन के केवल चार हाथ रह गये और उसकी अपार सेना समाप्त होगई। तब बाणासुर की माता कोटरा ने आकर श्रीकृष्ण से क्षमा चाहते हुए बाणासुर के प्राणों की भीख मागी और अनिरुद्ध उषा को खूब सम्मान के साथ रथ में बिठा कर श्रीकृष्ण के साथ द्वारका को रवाना किया।

महर्षि जमदग्नि की कामधेनु चुराकर ले जाते हुए का परशुरामजी ने पीछा करके बाणासुर को मार डाला था। इसे कार्त्तवीर्य, कार्त्तवीर्यार्जुन, सहस्रबाहु, सहस्रार्जुन और हैहय भी कहते हैं। इसके हजार हाथ थे।

बिहुं-राह [दोनो राह] २४८

'बिहुं-राह' राजस्थानी साहित्य का एक विशिष्ट योग-रूढ शब्द है। साधारणतः इसका अर्थ 'हिन्दु और मुसलमान' होता है। पर

कहीं-कहीं सुर और असुर अर्थों में भी प्रयुक्त हुआ देखा जाता है। अतः इस युग्म शब्द से जाति धर्म सम्प्रदाय अथवा कुल आदि से समन्वित परस्पर विरोधी या अनैक्य भावनाओं को साथ-साथ व्यक्त करने की समान रूप से आवश्यकता अथवा परम्परा रही हो ऐसी अर्थ-ध्वनि प्रकट होती है। हमने इसी आधार से इस युग्म-शब्द का योग-रूढ़ात्मक अर्थ 'निवृत्ति और प्रवृत्ति मार्ग' किया है जो प्रसंग को देखते अधिक संगत प्रतीत होता है।

बुद्ध बोध [बुद्ध] ११,६५

बौद्धधर्म के प्रवर्तक भगवान् विष्णु का एक अवतार। इनके पिता का नाम शुद्धोदन और माता का नाम महामाया था। नेपाल की तराई के लुम्बिनी नामक नगर में इनका जन्म हुआ था। वैदिक मंत्रों द्वारा यज्ञ करने वाले एक शूद्र राजा की बुद्धि में मोह उत्पन्न करने और पाखण्ड को प्रकट करने के लिए यह उत्पन्न हुए थे। बौद्धों में जब पाखंड अमर्यादित हो गया तब भगवान् आद्य शंकराचार्य ने दिग्विजय कर इन्हें चीन जापान आदि पड़ोसी देशों में खदेड़ दिया। शायद धर्म पुनः भारतवर्ष में प्रवेश न कर सके इसलिए चारों दिशाओं में चार बड़े-बड़े धर्म केन्द्र (बदरिकाश्रम जगन्नाथ रामेश्वर और द्वारिका में) स्थापित किये।

मनोरथ ६१

सूर्यवंशी राजा दिलीप के पुत्र। इनके साठ सहस्र पूर्वजों को तारने के विचार से अल्पायु में ही ये तपस्या करने को निकल गये।

अनेक वर्षों तक घोर तपस्या करने के बाद ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर वर मागने को कहा। इन्होंने दो वर मांगे— "(१) कपिल मुनि के शाप से भस्म हुए मेरे पूवजों का गगा की पावन धारा से उद्धार हो जाय और (२) मेरा वश चले।" ब्रह्मा ने कहा कि गगा की तीव्र धारा को भगवान् शकर के अतिरिक्त कोई धारण नही कर सकेगा। भगीरथ ने फिर अपनी तपस्या से शकर भगवान् को प्रसन्न किया। भगवान शकर ने गंगा को अपनी जटा मे धारण कर लिया। भगीरथ की प्रार्थना पर उसे जटा से निकाला। भगीरथ दिव्य रथ मे सवार होकर पथ-प्रदर्शन का कार्य कर रहे थे. गगा उनके पीछे वहती जा रही थी। इसीलिये गगा का नाम 'भागीरथी' भी प्रसिद्ध हुआ।

भरत, ७८

स्वार्थ-त्याग और स्नेह की प्रत्यक्ष मूर्ति भरत श्रीराम के छोटे भाई और रानी कैकेयी की कोख से उत्पन्न महाराज दशरथ के तीसरे पुत्र हैं।

कैकेयी ने इनको राज्य दिलाने के लोभ से राम को वनवास दिलवाया, जिसके कारण पिता दशरथ का मरण हुआ। भरत को इन अप्रिय घटनाओं से असह्य वेदना हुई। वे राम को लौटा लाने के लिये उनके पीछे वन में गये। पर राम ने वनवास की अवधि के पूव लौटना स्वीकार नही किया। भरत के अति आग्रह और निवेदन पर श्रीराम ने अपनी चरण-पादुकाए इन्हें दे दी। भरत ने इन चरण-पादुकाओ को श्रीराम के रूप में राज्य-सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दिया और उनके प्रतिनिधि रूप में शत्रुघ्न को राज्यव्यवस्था सौंप दी। स्वय वनवासी वेश मे नंदीग्राम में रहकर भगवान श्रीराम का भजन करने लगे।

कहा जाता है कि भरत के बड़े पुत्र तक्ष ने अपने नाम से गांधार प्रदेश में तक्ष नगर बसाया था। विश्व का सर्व प्रथम विश्वविद्यालय 'तक्षशिला' इसी स्थान पर बना था।

श्रीराम-वाणी

नाथ सपथ पितु चरन दोहाई।
भयउ न भुअन भरत सम भाई॥
(रामचरित मानस)

भारद्वाज [भरद्वाज] २४४

महर्षि वाल्मीकि के परम शिष्य भरद्वाज ऋषि प्रयाग में निवास करते थे। भगवान राम वन को जाते समय इनके दर्शन करने को और वन में रहने के लिये स्थान और मार्ग आदि की पूछताछ के लिये इनके आश्रम में गये थे।

ऋषि-वाणी

आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू। आजु सुफल जप जोग बिरागू॥
सफल सकल सुभ साधन साजू। राम तुम्हहि अवलोकत आजू॥
(रामचरित मानस)

मंदराचल [मन्दराचल] ५७

मेरु की पूर्व दिशा की ओर आधार-भूत एक पर्वत। इस पर कभी-कभी शंकर भगवान आकर विराजते हैं। यही पर्वत समुद्र मंथन के समय मथनी बनाया गया था।

मच्छ [मत्स्य] १३

भगवान् विष्णु का पहला अवतार जिसने प्रलय काल मे हयग्रीव दैत्य से वेदों की रक्षा की और अपने सींग से पृथ्वी को बाधकर उसकी रक्षा की।

सृष्टि के आदि विकास को समझने के लिये मत्स्यावतार की कथा बहुत ही महत्वपूर्ण वैज्ञानिक तथ्यो पर प्रकाश डालने वाली है। आधुनिक जीव-विज्ञान के अनुसार भी सृष्टि का प्रथम जीव मत्स्य ही माना गया है।

मधु २०

मधु, कैटभ दैत्य का भाई है। यह भगवान श्री कृष्ण द्वारा मारा गया था। मधुपुरी इसीने बसाई थी जो अब मथुरा कहलाती है।

मरीच [मारीच] ३५

मायावी राक्षस मारीच ताडका राक्षसी का पुत्र और रावण का मामा था। ताडका और सुबाहु को मारने के समय भगवान् राम के बाण के पक्ष के धक्के से उडकर यह समुद्र मे जा गिरा था और लका में जाकर रह गया।

सीता का हरण करने के लिये रावण के अत्याग्रह से यह स्वर्णमृग बना था और भगवान् राम के हाथ से मारा गया था।

महराण-मथ्थौ [महार्णव-मंथन] २५, २६

समुद्र-मथन की कथा के लिये— 'विमोहिय रूप अगाध वणाय (मोहनी अवतार)' और 'धनतर' कथाएं देखिये।

मुगत, मुगत, मुगति [मुक्ति] २१०, २६०, २६१
२६१

जिस प्रकार इस देह में रहा हुआ चैतन्य (जीव)— 'यह देह मैं हूँ पुरुष मैं हूँ ब्राह्मण मैं हूँ शूद्र मैं हूँ' ऐसा दृढ़ निश्चय कर लेता है; उसी प्रकार यह दृढ़ निश्चय हो जाय कि 'मैं (बोलने वाला) ब्राह्मण नहीं हूँ शूद्र नहीं हूँ पुरुष नहीं हूँ किन्तु संग रहित सच्चिदानन्द-स्वरूप प्रकाश-रूप सर्वान्तर्यामी और चिदाकाश-रूप हूँ। ऐसा अपरोक्ष ज्ञानी पुरुष जीवन-मुक्त कहलाता है।

अहं ब्रह्म् 'मैं ब्रह्म हूँ' इस प्रकार के ज्ञान से ज्ञानी पुरुष सभी कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

मुचकुंद [मुचुकुन्द] ४७

मुचुकुन्द अपने पिता महाराज मान्धाता के समान ही पराक्रमी होने के कारण देव-दैत्यों के युद्ध के समय देवता लोग इसे अपनी सहायता के लिये ले गये थे। युद्ध में चतुरता व वीरता से लड़कर इसने अनेक दानवों का संहार किया। देवताओं की विजय होने पर इसे वर मांगने को कहा गया। इसने कहा कि पृथ्वी पर मेरा राज्य और परिवार नष्ट हो जाने के कारण चित्त में बहुत खेद रहने से नींद नहीं आ रही है और इधर इस युद्ध से थकित हो जाने के कारण मुझे शयन-निद्रा की आवश्यकता है और सबमें से जो कोई मुझे जगा दे वह मेरी दृष्टि पड़ते ही भस्म हो जाय और दूसरा यह कि जगने के बाद तत्काल मुझे भगवान् के दर्शन हो जाय। देवताओं ने तथास्तु कहा। यह जाकर एक पर्वत की कंदरा में सोगया।

मथुरा विजय करके जब कालयवन श्री कृष्ण का पीछा करता हुआ उस कदरा मे पहुचा और ज्यो ही उसने सोते हुए मुचुकुन्द को श्रीकृष्ण समझकर एक लात प्रहार कर दी, त्यो ही मुचुकुन्द की आख खुली और सामने खडे कालयवन को देखा और वह भस्म हो गया। उसी समय मुचुकुन्द की खाट के नीचे से निकल कर श्रीकृष्ण ने उसे दर्शन भी दे दिये।

म्रगकासव [मृगकशिपु] ५६

हिरण्यकशिपु कश्यप ऋषि तथा अदिति का पुत्र एक दैत्यराज था। कठोर तपस्या द्वारा ब्रह्मा से अभय प्राप्त कर इसने देवताओं को कष्ट देना आरम्भ किया और स्वर्ग पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया। भगवान् विष्णु के प्रति इसके हृदय में बडा द्वेष था। इसीकी प्रतिक्रिया स्वरूप इसके पुत्र प्रह्लाद मे उनके प्रति भक्ति की भावना का उदय हुआ था। प्रह्लाद की इस प्रवृत्ति को देखकर इसने कितनी ही बार उसका वध करवाने के प्रयत्न किये। अन्त मे भगवान् विष्णु ने नृसिंह रूप धारण करके हिरण्यकशिपु का वध किया और अपने भक्त प्रह्लाद की रक्षा की।

रघुराम [रघु+राम] १३

अयोध्या के इक्ष्वाकुवशी महाराज दशरथ के पुत्र भगवान् विष्णु के अवतार मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम। इक्ष्वाकुवश में महाराजा रघु बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं अत यह रघुवंश भी कहलाता है। रघुराम से तात्पर्य है रघुवश में उत्पन्न भगवान् श्रीराम।

रणछोड़ ७७

जरासंध की लड़ाई में रणक्षेत्र छोड़कर द्वारका भाग जाने से भगवान् श्रीकृष्ण का नाम 'रणछोड़' कहलाया। सौराष्ट्र प्रदेश में गोमती के किनारे पश्चिमी समुद्र तट पर द्वारिका नामक नगर में भगवान् रणछोड़राय का बहुत विशाल मन्दिर बना हुआ है जिसमें श्रीरणछोड़राय की श्यामवर्ण चतुर्भुज-मूर्ति प्रतिष्ठित है। मन्दिर के शिखर पर पूरे थान की ध्वजा लहराती है। विश्व की यह सबसे बड़ी ध्वजा है।

कहा जाता है कि भगवान् श्रीकृष्ण ने द्वारका जाते समय मार्ग में जिन स्थानों पर विश्राम किया था उनमें ढेमा और खेड़ (खीरपुर) दो प्रमुख स्थान थे। अतः ढेमा में श्री धरणीधर और खेड़ में श्रीरणछोड़राय के नाम से मन्दिर प्रतिष्ठित हुए[1]।

द्वारका चार धामों में से पश्चिम दिशा का धाम है और यहीं जगद्गुरु श्री शंकराचार्य का शारदा-पीठ अवस्थित है।

भक्तवर ईसरदासजी ने हरिरस का निर्माण कर सर्वप्रथम द्वारका जाकर श्रीरणछोड़राय को सुनाया था।

रिखसम, रिसम, रिखम्भ [ऋषभ] १२, ६२, ८६

देखिये 'ऋषभ'

---

१ खेड़ का श्रीरणछोड़राय का मन्दिर बालोतरा (मारवाड़) से २ मील पश्चिम में लूनी नदी के किनारे पर स्थित है। खेड़ किसी समय बहुत बड़ा नगर था। राठौड़ों की प्रथम राजधानी खेड़ पाटण ही था। ढेमा के लिये देखो 'धरणीधर' कथा।

लाखाग्रह [लाक्षा-गृह] ४५

लाख का घर जिसे दुर्योधन ने पांडवों को उसमें आग लगाकर जीवित जला देने के लिए वारणावत में बनवाया था। परन्तु पांडवों को इस षडयन्त्र का पहिले ही पता लग गया था और वे गुप्त रीति से उसमें से सुरक्षित निकल गये थे। प्रयाग के पास लच्छागिर स्थान ही लाक्षागृह कहा जाता है। हंडियाखास स्टेशन से लाक्षागृह ३ मील पर है।

वलमीक [वाल्मीकि] २४४

वाल्मीकि ऋषि को बचपन में इनके माता-पिता ने तप करने को जाते समय जंगल में छोड़ दिया। एक भील ने अपने घर लाकर इनका पालन-पोषण किया और लूट-खसोट, चोरी और शिकार आदि के लिए धनुर्विद्या में निपुण बना दिया। लूट-मार करते समय एक दिन इन्हें एक ऋषि मिल गये। ऋषि ने कहा— वस्त्र और इस एक पात्र के अतिरिक्त मेरे पास कोई धन-माल नहीं है, फिर भी तू मुझे लूटना चाहता है तो मेरा इनकार नहीं, परन्तु पहले तू अपने घरवालों को पूछकर आजा कि इस अधर्म के भागी वे भी हैं कि नहीं ? तब तक मैं यहां खड़ा हूँ। घर जाकर सभी परिवार वालों को पूछने पर उन सब की ओर से यही उत्तर मिला कि— 'पाप तवैव तत्सर्वं वय तु फल भागिन।, 'तेरे किये हुए पापों का फल तुझे ही भोगना होगा। हम उसके भागीदार नहीं हैं।' घरवालों का यह उत्तर सुनकर उसको आश्चर्य हुआ और बहुत दुख हुआ। घर से लौटकर ऋषि के पास आये और उनके चरणों में गिरकर अपने

उद्धार की प्रार्थना की। ऋषि ने उसे सर्वव्यापी ब्रह्मरूप राम का नाम जपने का आदेश दिया। ऋषि के वचनों में अत्यन्त श्रद्धा और विश्वास करके एक ही स्थान पर बहुत समय तक अटल रूप से राम नाम का जप करते रहने से इनके ऊपर वल्मीक (दीमक और उसकी मिट्टी) का ढेर लग गया जिससे इनका नाम 'वाल्मीकि' पड़ गया। आगे चलकर यही वाल्मीकि बड़े तपस्वी और तत्ववेत्ता महर्षि सिद्ध हुए। एक शिकारी के द्वारा मिथुन रत क्रौंच पक्षी का वध कर लेने पर नारी-क्रौंच के करुणाजनक दुख को देखकर इनके कोमल हृदय में उत्पन्न अपार दया ने इन्हें आदि-महाकवि वाल्मीकि बना दिया। जिस परब्रह्म राम के नाम से ये पावन बने उस राम के नाम पर संस्कृत में 'शतकोटि' काव्य की महर्षि वाल्मीकि ने रचना की। संसार का प्रथम महाकाव्य होने के कारण यह महाकाव्य 'आदि महाकाव्य वाल्मीकि रामायण' और उसके रचयिता महर्षि वाल्मीकि 'आदि-महाकवि' कहलाये।

वांमन [वामन] १३

त्रेतायुग में कश्यप ऋषि से अदिति के गर्भ से उत्पन्न हुआ भगवान् विष्णु का एक अवतार। विरोचन दैत्य का पुत्र बलि इन्द्र पद प्राप्ति के लिए जब सौवां यज्ञ कर रहा था तब इन्द्र की रक्षा के लिए भगवान् ने वामन का रूप धारण करके उससे तीन पैड़ पृथ्वी मांगी। जब राजा बलि ने पृथ्वी के दान का संकल्प किया तब भगवान् वामन ने विराट रूप धारण करके एक पैड़ से समस्त पृथ्वी दूसरे से आकाश को नाप लिया और तीसरा पैड़ बलि के शरीर पर रखकर उसको पाताल में दबा दिया।

वाराह १३, ८२

विष्णु के अवतारो मे से द्वितीय। हिरण्याक्ष दैत्य जब पृथ्वी को लेकर पाताल को भागा तभी पृथ्वी का उद्धार करने और इसका वध करने के लिए वाराह अवतार हुआ।

वालखिला [वालखिल्य] २४५

गो-क्षुर के खड्डे में रहने वाला एक महान् सूक्ष्म आकृतिवाला ऋषियो का समूह।

वाळि [वालि] ४०

वालि किष्किन्ध देश की पपा नगरी का महा पराक्रमी वानर राजा था। यह अगद का पिता और सुग्रीव का बडा भाई था। इसको वरदान था कि इसके सम्मुख युद्ध करने वाले का आधा बल इसमे प्रवेश कर जाता था। इसलिये वालि सुग्रीव की शत्रुता में भगवान राम ने ताल वृक्षो की ओट में खडे रहकर वालि को मारा था। वालि ने रावण को काख मे दबा दिया था। इसने दुदुभि और मायावि जैसे बलशाली राक्षसों को मारा था।

विमोहिय रूप अगाध वराय (मोहिनी अवतार) २४

१- शिवजी ने एक समय भस्म में से एक असुर उत्पन्न किया और उसे वरदान दिया कि जिसके ऊपर यह हाथ फेरेगा, वह भस्म हो जायगा। एक दिन शिवजी को ही भस्म करके पार्वती को प्राप्त करने की दुर्बुद्धि से शिवजी के ऊपर इसने हाथ फेरने का विचार किया। शिवजी डर के मारे भागे। असुर ने इनका पीछा किया।

उस समय रास्ते में भगवान् विष्णु मोहिनी के रूप में प्रकट हुए और असुर से कहा कि 'मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ। मुझे नृत्य का बहुत शौक है तुम यहाँ नाचो, फिर मैं तुम्हारे साथ चल दूँगी।' असुर ने नाचते-नाचते अपने सिर पर हाथ फिराया और वहीं भस्म होगया। 'जटाधर ताण्डव नर्तन जहाम' (८४) इस प्रकार भगवान् विष्णु ने मोहिनी रूप धारण करके मृत भाजन बीमे शंकर के कष्ट को दूर किया।

२ शुम्भ तथा निशुम्भ नामक दो राक्षसों के वध के लिये भगवान् विष्णु ने मोहिनी अवतार धारण किया। दोनों राक्षस स्त्री को देखकर मोहित हो गये और उसको प्राप्त करने के लिये आपस में लड़ मरे।

३- समुद्र मंथन से जो अमृत निकला उसे प्राप्त करने के लिये सुरों और असुरों में भयंकर कलह उत्पन्न हुआ। दैत्यों ने अमृत छीन लिया। देवता भगवान् विष्णु की शरण में गये। भगवान् विष्णु ने मोहिनी का अनुपम स्त्री रूप धारण किया और दैत्यों को उसकी प्राप्ति के लिये परस्पर लड़वा कर उनका नाश किया और अमृत सब देवताओं को पिलवाया।

विसामित, विस्वामित [विश्वामित्र] ३४, २४५

ये पुरुवंशी महाराज गाधि के पुत्र थे। इन्होंने वैदिक ऋचाओं का निर्माण किया था। इनकी ऋचाएं ऋग्वेद के तृतीय मंडल में मिलती हैं। अपने यज्ञ की रक्षार्थ महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों को माँग लाये। यज्ञ निर्विघ्न सफलता से संपूर्ण

हो जाने के बाद महर्षि इन्हें महाराज जनक के यहा धनुष-स्वयवर मे ले गये थे। भगवान् शकर के कठिन धनुष को उस स्वयवर मे कोई उठा भी नही सका था, तब विश्वामित्र की आज्ञा पाकर राम ने उसे सहज ही मे तोड डाला था। इनकी घोर तपस्या से इन्द्र भी विचलित हो गये थे और इस भय से कि कही विशेष शक्ति का सग्रह कर यह मुझसे इन्द्रत्व न छीन लें, मेनका को इनकी तपस्या भग करने के लिए भेजा। विश्वामित्र का ध्यान भग हुआ और मेनका के प्रति वे आकर्षित हुए। उसी के फल-स्वरूप शकुन्तला का जन्म हुआ। इनको अपने इस कृत्य से इतनी ग्लानि हुई कि ये हिमालय मे तपस्या करने को चले गये।

अन्त मे अपनी घोर तपस्या के फल-स्वरूप ये 'राजर्षि' से 'ब्रह्म ऋषि' बन गये थे।

आर्ष-वाणी

सत्येनार्क प्रतपति सत्ये तिष्ठति मेदिनी।
सत्य चोक्त परो धर्म स्वर्ग सत्ये प्रतिष्ठित ॥
(महर्षि विश्वामित्र)

वीठळ [विट्ठल] ८२

दक्षिण के एक प्रसिद्ध देवता जो विष्णु के अवतार माने जाते हैं। कहा जाता है कि पढरपुर के पुण्डरीक नामक ब्राह्मण मे विष्णु का बहुत कुछ अश आगया था, उनकी मूर्ति वहीं स्थापित है और विष्णु के प्रतीक के रूप मे पूजी जाती है।

बकुंठ १८६

रैवत मन्वन्तर में भगवान् विष्णु का एक अवतार बैकुंठ नाम का हुआ था। सत्य-लोक में जहाँ बैकुंठ भगवान् निवास करते हैं उसका नाम ही बैकुंठ या बैकंठ लोक कहलाया।

व्यास १४

सत्यवती नामक धीवर की कन्या में पराशर ऋषि से उत्पन्न भगवान् श्री वेद व्यास। भागवत में ये विष्णु के अवतार माने गये हैं। द्वीप में जन्म होने के कारण इनका नाम कृष्ण-द्वैपायन भी है। ये महाभारत पुराण और वेदान्त-दर्शन के रचयिता हैं।

व्रसभ [वृषभ, ऋषभ] १२

शील और ज्ञान के प्रवर्तक नाभिराजा के पुत्र भगवान् श्री ऋषभदेव। ये विष्णु के अंश उद्भूत अवतार थे। इन्होंने भारत वर्ष के पश्चिम भाग में जैनधर्म का प्रचार किया। इसलिये जैनों के प्रथम तीर्थंकर और आदीश्वर कहे जाते हैं।

व्रिंदावन [वृन्दावन] ७४, २२७

वृन्दावन मथुरा से ६ मील उत्तर में है। यह भगवान् श्रीकृष्ण की निकुंज-लीलाओं की प्रधान रंग-स्थली है। महाराज केदार की पुत्री वृन्दा ने इसी स्थान पर श्रीकृष्ण को पति रूप में पाने के लिये तपस्या की थी। वृन्दा की तपोभूमि होने के कारण ही इसे वृन्दावन कहा जाता है। श्रीकृष्ण ने यहीं यमुना-तट पर कालिय ह्रद में

कालिय-नाग को नाथा था। यहा भगवान् श्रीकृष्ण की विविध लीलाओ के नामो पर अनेको मन्दिर बने हुए हैं। श्री गोविन्ददेवजी और श्री गोकुलनाथजी के विग्रह औरंगजेब के समय मे मन्दिरो पर यवनो का आक्रमण होने के कारण वृन्दावन मे जयपुर लाये गये थे, जहा राजमहलो के सम्मुख इनके भव्य मन्दिर बने हुए हैं।

लखनऊ के नगर-सेठ लाला कुन्दनलालजी फुन्दनलालजी ने अपनी अपार सम्पत्ति को त्याग कर वृन्दावन मे विरक्त की भाति रहकर साह-विहारीजी की भक्ति की थी। 'ललित किशोरी' एव 'ललित माधुरी' के नाम से जिनके सुमधुर पद साहित्य-ससार और भक्तजनो मे प्रसिद्ध हैं।

श्रीरंग, सिरिरंग [श्रीरंग] ११२,२२८

दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थ जो कावेरी के मध्य एक द्वीप के रूप मे स्थित है। कावेरी की दो धाराओं मे यह द्वीप १७ मील लम्बा और तीन मील चौडा है। त्रिचिनापल्ली नगर रेलवे स्टेशन है जहा से श्री रगम् को बसो से जाना होता है। तीर्थ के निकट भी श्रीरगम् नाम का स्टेशन है। श्रीरगजी के मन्दिर का विस्तार २६६ बीघे का कहा जाता है। मन्दिर के चारो ओर सात प्राकार बने हुए हैं। चौथे घेरे में एक मडप एक सहस्र स्तम्भों का बना हुआ है। निज मदिर मे भगवान् विष्णु (श्रीरग) की शेष शय्या पर शयन किये हुए श्याम वर्ण की विशाल चतुर्भुज-मूर्ति दक्षिणाभिमुख स्थित है। इस मन्दिर के विशाल प्रांगण मे अनेकों बडे बडे मदिर बने हुए हैं। इतना विस्तार वाला मन्दिर भारत में दूसरा नही है। श्री लक्ष्मीजी के मन्दिर के

सामने समिति के भक्त-महाकवि कम्ब के नाम से कम्ब-मण्डप बना हुआ है जहाँ उन्होंने अपनी कम्ब रामायण की रचना करके भक्तजनों को सुनाया था।

मथुरा वृन्दावन अयोध्या और पुष्कर आदि तीर्थों में भी श्रीरंगजी के बड़े-बड़े मन्दिर बने हुए हैं।

सत्तरूपाणा [शत्रुघ्न] ७८

सुमित्रा रानी से उत्पन्न महाराज दशरथ का चौथा पुत्र। राम के वनगमन के अनन्तर भरत नन्दी ग्राम में रहने लगे। अतः श्रीराम के नाम पर इन्होंने ही चौदह वर्ष तक अयोध्या का राज्य किया। इनका विवाह कुशध्वज की पुत्री श्रुतकीर्ति से हुआ था। इनके सुबाहु और शत्रुघाती दो पुत्र थे।

रावण को मारकर भगवान् राम अयोध्या वापिस पधारे तब एक समय कई ऋषि राम के पास आये और उन्होंने लवणासुर दैत्य के अत्याचारों का वर्णन किया। भगवान् राम की आज्ञा लेकर इन्होंने लवणासुर का वध कर डाला और उस देश का नाम 'शूरसेन' रखा। मधुपुरी नाम की नगरी का नाम बदल कर 'मथुरा' कर दिया और उसे अपनी राजधानी बना ली।

पश्चात् जब इन्हें पता चला कि भगवान् राम स्वधाम पधारने वाले हैं तब यह भी अयोध्या चले आये और उन्हीं के साथ परमपद को प्राप्त हुए।

सत्रूपा [शतरूपा] १६२

स्वायभू मनु की स्त्री शतरूपा ब्रह्मा के बायें अग से उत्पन्न हुई थी। इसी का दूसरा नाम सरस्वती कहा जाता है। इनकी पुत्री देवहूति ने इनको आत्मतत्वोपदेश किया था।

सनक्क [सनक] १७

ब्रह्मा के चार मानस पुत्रो मे से एक सनक। ये परम ज्ञानी ब्रह्मनिष्ठ और भगवान् विष्णु के सभासद् हैं

सनातन १७

ब्रह्मा के एक मानस पुत्र। सनातन को सनत्सुजात भी कहते हैं। धृतराष्ट्र को इन्होंने ही धर्मोपदेश किया था। इनके तीन भाई सनक सनद और सनत्कुमार और हैं और ये चारो ही ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं और ब्रह्मनिष्ठ हैं एव सदैव बाल्यावस्था प्राप्त हैं।

सयभुव [स्वायंभुव] १६२

ब्रह्मा के दाहिने अग से उत्पन्न स्वायभू मनु चौदह मनुओं में पहिले मनु हैं जो मानव जाति के पिता हैं। ब्रह्मा के बायें अग से उत्पन्न शतरूपा इनकी स्त्री है।

सह इन्द्री, [सकल इन्द्रिय] ११२

पांच ज्ञानेन्द्रिय और पाच कर्मेन्द्रिय।

श्रोत्र त्वक् चक्षु रसना घ्राणम् इति पचज्ञानेन्द्रियाणि।

कान, नाक, आख, जीभ और त्वचा—ये पाच ज्ञानेन्द्रिय हैं।

१ सवण (१ १ ११२) श्रोतस्य विषयः शब्दग्रहणम् ।

कान का विषय सुनना ।

२ नासा रंध (१ २) घ्राणस्य विषयो गन्धग्रहणम् ।

नाक का विषय सूंघना ।

३ नयन लोचन (१ २, १२८ ११२) चक्षुषो विषयो रूपग्रहणम् ।

आंख का विषय देखना ।

४ जीभ रसना (१ ४ १२८, १२९ ११२)

रसनाया विषयो रसग्रहणम् ।

जीभ का विषय स्वाद ।

५ तुचा (११) त्वचो विषयः स्पर्शग्रहणम् ।

चमड़ी का विषय स्पर्श ।

वाक् पाणि पादपायूपस्थानीति पंचकर्मेन्द्रियाणि ।

वाणी हाथ पांव गुदा और उपस्थ —ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं ।

१ बानी बयणी (१ ६ २१२) वाचो विषयो भाषणम् ।

वाणी का विषय बोलना ।

२ कर (१ ७) पाण्योर्विषयो वस्तुग्रहणम् ।

हाथ का विषय वस्तु को ग्रहण करना ।

३ चरण (१ ८) पादयोर्विषयो गमनम् ।

पांव का विषय चलना ।

४ गुदा । पायोर्विषयो मलत्यागः ।

गुदा का विषय मलत्याग ।

५ उपस्थ । उपस्थस्य विषय आनन्द इति ।

उपस्थ का विषय आनन्द और मूत्रत्याग ।

(हरिरस मे गुदा और उपस्थ का उल्लेख नहीं किया गया है ।)

सातूं-रिख [सप्त ऋषि] २४१

गौतम, भारद्वाज विश्वामित्र जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप और अत्रि– इन ऋषियों का मण्डल या समूह सप्तर्षि कहलाता है।

सामीप (सामीप्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सामीप्य-मुक्ति वह है जिसमे मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है।

सायुज्य २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सायुज्य-मुक्ति वह है जिसमे जीवात्मा परमात्मा मे लीन हो जाता है।

सालोक (सालोक्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सालोक्य-मुक्ति वह है जिसमे मुक्त जीव भगवान् के साथ एक लोक मे निवास करता है।

सावेव [सावयव] २६०

सावयव-मुक्ति का दूसरा नाम है सारूप्य-मुक्ति। मुक्ति के चार प्रकारो में से यह एक प्रकार हैं। सारूप्य-मुक्ति वह है जिसमे भक्त अपने भगवान् का रूप प्राप्त कर लेता है।

सिदज्ज [स्वेदज] २६६

जीवो की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदो मे से एक। पसीने से उत्पन्न होने वाले जू, खटमल आदि कीट स्वेदज कहलाते हैं। इन्हे ऊष्मज भी कहते हैं।

१ श्रवण (१ १ ११२) श्रोतस्य विषय शब्दग्रहणम् ।

कान का विषय सुनना ।

२ नासा-रंध्र (१ २) घ्राणस्य विषयो गन्धग्रहणम् ।

नाक का विषय सूंघना ।

३ नयन लोचन (१ ५ १२८ ११२) चक्षुषो विषयो रूपग्रहणम् ।

आंख का विषय देखना ।

४ जीभ रसना (१ ४ १२८, १२६ ११२)

रसनाया विषयो रसग्रहणम् ।

जीभ का विषय स्वाद ।

५ त्वचा (११) त्वचो विषयः स्पर्शग्रहणम् ।

चमड़ी का विषय स्पर्श ।

वाक् पाणि पादपायूपस्थानीति पंचकर्मेन्द्रियाणि ।

वाणी हाथ पांव गुदा और उपस्थ —ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं ।

१ वाणी बयना (१ १ २१२) वाचो विषयो भाषणम् ।

वाणी का विषय बोलना ।

२ कर (१ ७) पाण्योर्विषयो वस्तुग्रहणम् ।

हाथ का विषय वस्तु को ग्रहण करना ।

३ चरण (१ ६) पादयोर्विषयो गमनम् ।

पांव का विषय चलना ।

४ गुदा । पायोर्विषयो मलत्यागः ।

गुदा का विषय मलत्याग ।

५. उपस्थ । उपस्थस्य विषय आनन्द इति ।

उपस्थ का विषय आनन्द और मूत्रत्याग ।

(हरिरस में गुदा और उपस्थ का उल्लेख नहीं किया गया है ।)

सातूं-रिख [सप्त ऋषि] २४१

गौतम, भारद्वाज विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप और अत्रि– इन ऋषियो का मण्डल या समूह सप्तर्षि कहलाता है।

सामीप (सामीप्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो में से एक। सामीप्य-मुक्ति वह है जिसमें मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है।

सायुज्य २६०

मुक्ति के चार प्रकारो में से एक। सायुज्य-मुक्ति वह है जिसमें जीवात्मा परमात्मा मे लीन हो जाता है।

सालोक (सालोक्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सालोक्य-मुक्ति वह है जिसमे मुक्त जीव भगवान् के साथ एक लोक मे निवास करता है।

सावेव [सावयव] २६०

सावयव-मुक्ति का दूसरा नाम है सारूप्य-मुक्ति। मुक्ति के चार प्रकारो मे से यह एक प्रकार है। सारूप्य-मुक्ति वह है जिसमें भक्त अपने भगवान् का रूप प्राप्त कर लेता है।

सिदज्ज [स्वेदज] २६९

जीवो की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदो में से एक। पसीने से उत्पन्न होने वाले जू, खटमल आदि कीट स्वेदज कहलाते हैं। इन्हें ऊष्मज भी कहते हैं।

सिसपाळ [शिशुपाल] ८५

शिशुपाल चेदिराज दमघोष के पुत्र और श्रीकृष्ण के मौसेरे भाई थे। जन्म के समय इनके तीन नेत्र और चार हाथ थे। शिशुपाल की माता श्रुतश्रवा को जब यह मालूम होगया कि उसके पुत्र की मृत्यु श्रीकृष्ण के हाथ से होगी तो उसने शिशुपाल के १ अपराध क्षमा कर देने के लिए श्रीकृष्ण से प्रतिज्ञा करवा ली। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में जब शिशुपाल ने श्रीकृष्ण की सौ से अधिक बार निन्दा की और गालियां दीं तब कृष्ण ने इसे मार दिया।

सुकदेव [शुकदेव] ५२

महर्षि शुकदेव कृष्ण-द्वैपायन भगवान् व्यास के पुत्र हैं। भगवान् शंकर जब पार्वती को अमर होने के लिए विष्णु-सहस्र नाम का उपदेश दे रहे थे उस समय उस कथा को एक शुक भी सुन रहा था। शिव को जब पता चला तो उन्होंने उसका पीछा किया। उसी समय व्यास पत्नी अपने आंगन में खड़ी जंभाई ले रही थी। उसको देख शुक शरीर छोड़ उनके पेट में चले गये और १२ वर्ष तक वहीं रहे। भगवान् व्यास देव महाभारत तथा गीता आदि अपनी पत्नी को सुनाते थे। इस प्रकार गर्भ में ही शुक तत्त्वज्ञानी हुए। भगवान् ने इन्हें गर्भ में ही वचन दिया कि संसार की माया तुम्हें नहीं व्यापेगी। गर्भावस्था में ही पूर्ण तत्त्वज्ञानी होने के कारण ऋषियों में ये अग्रणी गिने जाते हैं।

इन्होंने ही महाराज परीक्षित् को भागवत की कथा सुनाई थी।

सुग्रीव ४०

यह सूर्य के पुत्र, प्रसिद्ध वानर वीर बालि के अनुज, भगवान् राम के मित्र एव भक्त थे। सीताहरण के बाद श्रीराम ने सुग्रीव से मित्रता की। बालि का वध करके किष्किधा का राज इन्हे दिया। राम-रावण युद्ध मे इन्होंने भगवान् राम की बडी सहायता की थी।

सुदामा ३३९

सुदामा भगवान् श्री कृष्ण और बलराम के सहपाठी थे। दीन होने के कारण यह मैले-फटे वस्त्रों मे रहा करते थे इसलिये गुरु सादीपनि के यहा इनके सहपाठी इन्हे कुचैल कहा करते थे। दरिद्रता से बहुत दुखी होने पर इनकी स्त्री ने इन्हे दरिद्रता निवारणार्थ श्री कृष्ण के पास द्वारका को भेजा था। वहां जाने पर भगवान् ने इनका अपूर्व सम्मान किया, पर सकोचवश इन्होने मागा कुछ नही। पर भगवान ने इनके अपने यहा आने के आशय को समझ कर इनको विदा करने के पूर्व ही अपार सम्पत्ति इनके यहां भेजकर अपने समान वैभवशाली बना दिया।

महात्मा गांधी की जन्मभूमि पोरबदर ही सुदामाजी का निवासस्थान था। इसे सुदामापुरी भी कहा जाता है।

सुपर्णखा [शूर्पणखा] ३८

यह रावण की बहिन थी। इसके नख सूप की भाँति बड़े बड़े होने के कारण इसका नाम सूर्पणखा रखा गया था। जिस समय भगवान् राम सीता तथा लक्ष्मण के साथ वनवास कर रहे थे यह राम के प्रति आकर्षित हो गई थी और इसने उनके सम्मुख एक सुन्दरी के रूप में उपस्थित होकर विवाह का प्रस्ताव रखा। राम के अस्वीकार करने पर यह लक्ष्मण के पास गई किन्तु उन्होंने फिर इसे राम के पास ही भेज दिया। अंत में भगवान् राम ने लक्ष्मण से इसके नाक कान कटवा दिये अपनी यह दुर्दशा करवाकर यह खर दूषण के पास गई। राम से जब ये दोनों राक्षस लड़ने के लिए आये तो उन्होंने इनका वध कर डाला। सूर्पणखा तब अपने भाई रावण के पास रोती हुई गई और अपनी दुर्दशा भी सीता के सौन्दर्य का वर्णन उसके सम्मुख किया। इसीलिये रावण ने क्रोधित होकर सीता का हरण किया।

सुबाहु ३५

सीता हरण के समय स्वर्ण मृग का रूप धारण करने वाले मारीच का यह भाई और रावण का यह मामा था। महर्षि विश्वामित्र जब जब यज्ञ करने लगते तब यह अपने भाई मारीच और अपनी माता ताड़का के साथ आकर यज्ञ विध्वंस कर देते थे। विश्वामित्र ऋषि यज्ञ की रक्षार्थ महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण को मांग कर ला रहे थे तब मार्ग में ही ताड़का ने इन पर आक्रमण कर दिया। भगवान राम ने उसे वहीं मार दिया। बाद में यज्ञ में विघ्न करते समय सुबाहु भी राम के हाथ से मारा गया।

सुरसत्ती, सरसति [सरस्वती] १, १६०

वेदो मे सरस्वती का नदी और वाणी (ज्ञान-विज्ञान) की अधिष्ठात्री वाग्देवी दोनो रूपो मे उल्लेख है। ब्रह्मा की ज्ञानशक्ति होने के कारण ब्रह्मा की पुत्री और पत्नी, दोनो रूपों में ये मान्य हैं। अतः वाला, बीज-मत्र और ब्रह्माणी भी कही जाती हैं। सस्कृत भाषा और देवनागरी अक्षरों का निर्माण इन्होंने ही किया था। गायत्री और सावित्री इनके अन्य नाम हैं। नदी के रूप में गगा की भाति ही सरस्वती की पूजा होती हैं। इसकी एक शाखा गुजरात में होकर कच्छ के रण में मिलती है। गया में फल्गु के तट पर जिस प्रकार पितृश्राद्ध सम्पन्न किया जाता है उसी प्रकार सरस्वती के तट पर सिद्धपुर में मातृश्राद्ध का पिण्डदान किया जाता है, अत॰ इस क्षेत्र को मातृगया तीर्थ-क्षेत्र और सरस्वती को मातृगगा भी कहते हैं।

सूक्षम-देह [सूक्ष्म-देह] १७०

जो इकट्ठे नही हुए हुए पच महाभूतों और कर्मों द्वारा उत्पन्न है, और जो सुख दु खादि भोग भोगने का साधन है।

पाच ज्ञानेन्द्रिय पाँच कर्मेन्द्रिय, पाच प्राण एक मन और एक बुद्धि– इन सत्रह तत्वों वाला सूक्ष्म-शरीर है।

> अपचीकृत पच महाभूतं॰ कृत सत् कर्मजन्यं,
> सुख दु खादि भोग साधनम् ।
> पचज्ञानेन्द्रियाणि पंचकर्मेन्द्रियाणि पचप्राणादय,
> मनश्चैक बुद्धिश्चैका एव सप्तदशकलाभिः
> सह यत्तिष्ठति तत्सूक्ष्मशरीरम् ॥

(तत्व बोध)

सेतबंग रामेस [सेतुबन्ध रामेश] १४६

चार दिशाओं के चार प्रमुख धामों में सेतुबंध-रामेश्वर दक्षिण-भारत का एक प्रसिद्ध धाम है। यह एक द्वीप में स्थित है जो रामेश्वर-द्वीप कहलाता है। यह द्वीप लगभग ११ मील लंबा और ७ मील चौड़ा है। भगवान् श्री राम ने लंका पर चढ़ाई करते समय इस शिव-लिंग की स्थापना की और भारत और लंका के बीच की समुद्र-खाड़ी पर विशाल सेतु का निर्माण किया था। श्री रामेश्वर महादेव की गणना द्वादश ज्योतिर्लिंगों में है। भगवान् रामेश्वर का मंदिर बहुत विशाल और वास्तु-कला का अनुपम आदर्श है। मंदिर के विशाल परकोटे और आंगन में अनेकों देवताओं के बड़े-बड़े मंदिर २८ कुएं और अनेकों कुंड बने हुए हैं। इन सभी कुंओं का पानी मीठा है, जबकि बाहर के कुओं का खारा है। रामेश्वर द्वीप में भी अनेकों तीर्थ हैं।

इस धाम से संबंधित शंकराचार्य-पीठ का नाम शृंगेरी-पीठ है जो तुंगा नदी के तटपर शृंगेरी स्थान में स्थित है।

हुस १२

एक बार सत्यलोक में सनकादिकों ने ब्रह्मा से अध्यात्म संबंधी कुछ प्रश्न किये थे। उस समय ब्रह्मदेव किसी अन्य कार्य में व्यस्त थे इसलिये यथा-संतोष उत्तर नहीं दे पाये। सनकादिकों की तीव्र जिज्ञासा को देखकर भगवान् विष्णु और शंकर हंस का रूप धारण करके उनके पास पहुंचे और उनके संशय का निवारण किया। इसप्रकार भगवान् विष्णु का चौदहवां अवतार माना जाता है।

हनूमांन [हनुमान] ३६

अजना के गर्भ से उत्पन्न पवन के ये महावीर पुत्र थे। सीता का लका में रावण के यहां अशोक वाटिका मे वदिनी होने का पता इन्होंने ही लका मे पहुचकर लगाया था। लका में ये मेघनाद के द्वारा बंदी हुए, तब रावण की आज्ञा से जब इनकी पूछ मे रुई लपेट कर आग लगादी गई तो अपनी जलती हुई पूछ से इन्होने लका-दहन किया था। राम-रावण युद्ध में मेघनाद के शक्ति प्रहार से जब लक्ष्मण मूर्छित हो गये थे तब ये ही एक रात मे हिमालय के सजीवनी औषधि वाले द्रोणगिरि शिखर को उठा कर ले आये थे। ये भगवान् राम के अनन्य भक्त थे। रावण-वध तथा सीता की मुक्ति के वाद ये भी पुष्पक विमान मे वैठ कर अयोध्या आये थे। भगवान् राम ने जब अश्वमेध यज्ञ किया था तब ये भी अश्व के साथ देश-विदेशों मे गये थे, वहा लव-कुश के सम्मुख लक्ष्मण के साथ इन्हे भी युद्ध में पराजित होना पडा था। अपनी अनन्य सेवा से इन्होंने श्रीराम को अत्यन्त प्रसन्न किया। श्रीराम की भी इनके ऊपर इतनी अधिक ममता थी कि श्रीराम ने इनको ब्रह्म-विद्या की शिक्षा दी और इसमे इनको निपुण करके जिज्ञासुजनों को उपदेश करने का अधिकारी बनाया। हनुमानजी ने भगवान राम की प्रत्यक्ष लीलाओं को देख कर हनुमन्नाटक नामक रामचरित की रचना की है।

हयग्रीव, हयासन १२, ५५

(१) भगवान विष्णु के एक अवतार जो ब्रह्मा के यज्ञ में उत्पन्न हुए और जिन्होंने स्वास के द्वारा वेदों की वाणी उत्पन्न की।

(२) हयग्रीव नाम का एक दैत्य जिसने देवी को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया था कि उसकी मृत्यु उसके जैसे और उसके नाम के मनुष्य के हाथ से ही हो। इसने जब बड़ा अत्याचार करना शुरू किया, तब भगवान विष्णु ने इसी नाम से अवतार लेकर के इसको मारा था। इस अवतार के लेने का यह दूसरा कारण है।

हिरणाक्स, हिरणाक्ष [हिरण्याक्ष] २३, २७ ५४

हिरण्यकश्यपु का भाई। कश्यप की स्त्री दिति इसकी माता थी। पूर्व जन्म में दोनों भाई भगवान् विष्णु के द्वारपाल जय और विजय थे। सनत्कुमारों के शाप से राक्षस हुए। हिरण्याक्ष पृथ्वी को लेकर पाताल की ओर भागा जा रहा था तब भगवान् विष्णु ने वाराह अवतार लेकर इसका वध किया और पृथ्वी का उद्धार किया।

॥ ॐ शिव

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	छंद	अशुद्ध	शुद्ध
६	२	६	धरणीधर	धरणीधर
६	३		विछुटे	विछुटे
६	१४	११	कथित	कथिस
८	१०	१५	नाह	नहि
१०	१६	२१	देत	दंत
१२	४	२५	महाराण	।
१६	५		होगये । मोर	होगये मोर
१६	अंतिम	३८	पखाल	पखाळ
१७	२	३८	तदो	तदी
१७	१५	४०	मद	जद
१७	२०	४१	पडयो	पड्यो
१९	१६	४४	गानव	मानव
२०	१९		निमित्ति बनाया	निमित्त बनायो ।
३३	अंतिम	८०	विधूमण	विधूसण
३४	१३	८२	नार	नाहं
३५	१५	८४	प्रद्मुम्न	प्रद्युम्न
३६	३	८६	प्रतरण्य	प्रवंस

पृष्ठ	पङ्क्ति	छंद	अशुद्ध	शुद्ध
१०२	१०	२५५	अघेखिण	अघै खिण
१०२	१४		आकाश को	आकाश (स्वर्ग) को
१०२	१८	२५६	मूभ	मूभ
१०९	९-१०	२६२	आप कल्याण से रहित हैं	आप निश्कल (=अकलनीय -अगम्य) हैं,
१११	१९	२६८	ओत-प्रोत हुए हैं।	ओत-प्रोत हुए हुए हैं।
१२२	११	२९१	जडयो	जड्यो
१२४	१८	२९६	तेज-प्रचण्ड	तेज-प्रपुञ्ज
१२९	१८	३०९	सामुहो	सामुहो
१३५	१२	३२४	चोतार	चौतार
१३५	१६	३२५	अनरस	अन रस
१३६	८	३२७	धन्या	धरया
१३९	१	३३५	अपराधो	अपराधी
१४३	२	३४९	कहे	कहै
१४३	६	३५०	ऊ घे	ऊघै
१४४	५	३५१	रूपा	रूपी
१४६	८	३५७	पाप ाह	पाप सह
१४६	१०	३५७	भा	भी
१४८	७	प्रशस्ति	सं० १८०७	स० १७०७

परिशिष्ट १

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	८	मरवीज	मक़ीम
७	१	धर्सक	बबक
९	१८	बिसारिये	बिसरिये
१०	१५	हो	हों
१२	१२	महा तप	महातम
१४	८	बिरच	बिरंच
१५	अंतिम	हां	हों

परिशिष्ट २

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	४	१४०	१४८
१	२	८	१४	१४१
१	२	९	माथे माला	मोथेमाला
२	१	३	२७५	२७४
२	१	४	२४१	१४१
२	१	१७	(मत्त)	मत्त ( )
२	२	२	पाये	पावे
२	२	९	पम्मीज	पम्मीग
३	१	२१	किलीट समर्फ्रे	
३	२	५	११की संख्या और है।	
३	२	अंतिम	बोर	और

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१	११	झमुको	मुझको
४	२	२२	छोटा	छोटा
५	१	२७	अपने आप	अपने से
५	२	९	अलम	आलम
६	१	अंतिम	उडुगण	उडुगण
६	२	१४	३०२	३०३
७	२	६	३१३	३१४
७	२	१९	करने से हो	करने से ही
८	१	४	२३०	२३१
८	१	१७	करण-सघार	करण-सघार
८	२	४	१०	१०२
८	२	१८	१८८	१८९
९	१	१२	२३७	२३८
९	२	२५	१८८	१८९
१०	१	१२	३२५	३२६
१०	२	९	३३८	३३९
११	१	६	२६०,३१५	२६१ ३१६
११	२	१४	१४	१५
१५	२	९	२६४	२६५
१६	१	१९	३४२	३४३

परिशिष्ट १

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	८	पच्चीस	पचीस
७	१	पर्यंक	पर्यंक
९	१८	बिसारिये	बिसरिये
१०	१८	हो	हों
१२	१२	महा तम	महातम
१४	८	बिरध	बिरध
१५	अंतिम	हो	हों

परिशिष्ट २

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	४	१४७	१४८
१	२	८	१४	१४१
१	२	९	बापे बाला	बोनेवाला
२	१	१	२७५	२७४
२	१	४	२४१	१४१
२	१	१७	(मत)	मत ( )
२	२	२	पावे	पावे
२	२	९	पल्पोल	पल्पोल्म
३	१	११	डिलीट समर्में	
३	२	५	११की संख्या बीस है।	
३	२	अंतिम	वोर	वीर

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१	११	झमुको	मुझको
४	२	२२	छोटा	छोटा
५	१	२७	अपने आप	अपने से
५	२	६	अलम	आलम
६	१	अंतिम	उड्डगण	उडुगण
६	२	१४	३०२	३०३
७	२	६	३१३	३१४
७	२	१६	करने से हो	करने से ही
८	१	४	२३०	२३१
८	१	१७	करण-सधार	करण-सधार
८	२	४	१०	१०२
८	२	१८	१८८	१८९
९	१	१२	२३७	२३८
९	२	२५	१८८	१८९
१०	१	१२	३२५	३२६
१०	२	९	३३८	३३९
११	१	६	२६०,३१५	२६१,३१६
११	२	१४	१४	१५
१५	२	९	२६४	२६५
१६	१	१६	३४२	३४३

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६	१	६	परवाळ	परवाळँ
२६	२	२०	रचना का	रचना की
२६	२	२१	३०५	३०६
३०	१	११	२६०, १६२	१६२, २६१
३०	२	४	३५८	३५६
३१	१	१०	३२४	३२७
३१	१	२२	भणे भण	भणो भण
३१	१	२४	२५८	२५६
३१	२	५	३०५	३०६
३२	२	२४	२५५	२५६
३२	२	२५	२६८	२६६
३३	१	५	२६८	२६६
३३	१	२४	प्रवत्त	प्रवर्त्त
३३	२	१०	महम्माया	महम्माय
३४	१	८	मनुष्यों का	मनुष्यों को
३५	१	८	मा	मो
३५	२	१५	२५७	२५८
३६	२	१	३०३	३३०
४०	१	२५	१८७	१८८
४१	२	१३	१८७	१८८
४१	२	२५	पदापूरक	पादपूरक